बांगरू लोकसाहित्य

[काशी विद्यापीठ की पी-एच० डी० उपाधि के लिए प्रस्तुत]

शोध-प्रबन्ध

(हिन्दी)

दिसम्बर

१९८२

शोध निर्देशक –

डा० रामजी शर्मा

एम ए पी एच डी

दैवज्ञवाचस्पति, साहित्य

नव्यव्याकरणाचार्य, साहित्यायुर्वेदरत्न,

प्राध्यापक-हिन्दी विभाग

काशी विद्या पीठ-वाराणसी

शोधकर्त्ता –

कैलाश चन्द शर्मा

नव कला मंदिर

बिचला बाजार भिवानी

(हरियाणा)

।। विद्ययाऽमृतमश्नुते ।।

डॉ॰ रामजी शर्मा

एम॰ ए॰ (हिन्दी), पी-एच॰ डी॰

साहित्य–न्यायव्याकरणाचार्य साहित्यरत्न

प्राध्यापक – हिन्दी विभाग

मानविकी संकाय

काशी विद्यापीठ, वाराणसी

आवास–डी० ७/११–२२ [illegible] गली

वाराणसी–२२१००१ (उ० प्र०)

पत्रांक ____________

दिनांक ८–१२–१९८२

श्री कैलाश चन्द शर्मा ने मेरे निर्देशन में काशी विद्यापीठ, वाराणसी की पी-एच॰ डी॰ उपाधि के लिए दि॰ १३-१२-७८ को "आंग्ल लोक-साहित्य" शोध विषय पर पंजीकृत होकर मौलिक तथ्यों के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत शोध प्रबन्ध नियमानुसार पूर्ण किया है। यह प्रबन्ध पूर्णतः मौलिक एवम् गवेषणात्मक है।

मैं इनके शोध प्रबन्ध को पी-एच॰डी॰ उपाधि के लिए परीक्षणार्थ प्रस्तुत करता हूँ।

रामजी शर्मा

निर्देशक एवं प्राध्यापक

८-१२-१९८२

प्राक्कथन

सांस्कृतिक और भाषाई एकता को आधार मानकर हरियाणा प्रान्त बन जाने पर यहां की भाषा को हरियाणवी कहा जाने लगा । हरियाणवी से तात्पर्य बांगरू बोली है जो यहां कि लोक भाषा है । ग्रियर्सन ने इसे पश्चिमी हिन्दी की एक स्वतंत्र उपभाषा की संज्ञा दी है :-
The best General Name for its is Bangru".[1]
बांगरू नाम देने का श्रेय ग्रियर्सन को जाता है जिन्होंने इस प्रदेश की भाषा को "बांगरू" या "बांगड़ू की संज्ञा प्रदान की ।आधुनिक भाषा शास्त्री अब भी इसे साहित्यिक अध्ययन और अध्यापन में बांगरू शब्द का ही व्यवहार करते हैं । इस प्रकार प्राचीन हरियाणा के खादर, बांगर, और हरियाणा ये तीनों भूखण्ड विस्तार की दृष्टि से बांगरू बोली के अन्तर्गत आते हैं परन्तु मानक बांगरू की दृष्टि से {जो कि प्रायः ग्रामीण क्षेत्र में । ये भूखण्ड बांगरू का क्षेत्र समझा जाता है । मैं हरियाणवी को एक बांगरू बोली ही मानकर चला हूं जिसकी उच्चारण शैली विशिष्ट है इसमें द्वित्व व्यंजन प्रधान तथा णकार, ड़े, ढ़े, कड़े, बी,स्वैत्यादि विशिष्टता लिए हुए है ।

हरियाणा भौगोलिक दृष्टि से दक्षिण की ओर इसकी सीमाएं इन्द्रप्रस्थ अथवा वर्तमान दिल्ली से नीचे तक उत्तर में वर्तमान जगाधरी से ऊपर तक तथा पश्चिम में मरु प्रदेश तक जाती है । उत्तर पश्चिम में सरस्वती

---

1. Ling Survey of India By George Griesson Vol. IX part-I Page. 67.

के दूसरी ओर तक इसका विस्तार है। यह भारतवर्ष का वह भूभाग है जो प्राचीन रूप से ही अपने आप में एक पूर्ण भौगोलिक तथा ऐतिहासिक इकाई माना जाता रहा है। दूसरे शब्दों में इस प्रदेश की भौगोलिक स्थिति को इस प्रकार देख सकते हैं :- "हरियाणा प्रदेश पंजाब में 28-30 और 30 {उत्तर} तथा 75-45 और 76-30' {पूर्व} के दरमियान एक छोटा भाग है।"[1]

यहां की प्राचीन अर्वाचीन और गौरवपूर्ण साहित्य परम्परा होने के बाद भी यहां के लोक जीवन से हिन्दी जगत का अपरिचित सा होना इसके अलिखित साहित्य की उपलब्धि न होना ही है। अतः मुझे इस बात का अनुभव होता रहा है कि आंचल लोक जीवन को आंचल लोक साहित्य के माध्यम से प्रस्तुत किया जाये क्योंकि यहां के जन जीवन पर प्राचीन वैदिक युग की संस्कृति की अंतिम छाप है। और उसी वैदिक जीवन युग की संस्कृति की दो धारायें {शिष्ट साहित्य और लोक संस्कृति} प्रवाहित रही है। लोक संस्कृति ही जन मानस का प्रतिबिम्ब है। और "शिष्ट संस्कृति भी लोक संस्कृति से अनुप्राणित होती रहती है। कहने का तात्पर्य यह है कि शिष्ट साहित्य सामान्य जन जीवन को आच्छादित करने वाले लोक साहित्य से सदैव प्रेरणा ग्रहण करता रहता है। ऐसा न करने पर वह चिरकाल तक नहीं रह सकता व्यास ने ऐसा कहा है कि "प्रत्यक्षदर्शी लोकानां सर्वदर्शी"

1- देखिये हरियाणवी शब्दावली पृष्ठ 1 और आगे इम्पीरियल गजटियर आफ इण्डिया {खण्ड 13} पृष्ठ 53

भवेन्नरः ।"[1] अतः यदि आंगिक लोक जीवन को समझना हो तो वहां के लोक साहित्य को देखना होगा ।

ऐतिहासिक, सामाजिक, धार्मिक एवम् सांस्कृतिक परम्पराओं के साथ साथ यहां उपलब्ध लोकसाहित्य जिसके आधार पर आंगिक व्यक्तित्व की रूप-रेखा निर्धारित की जा सकती है। क्योंकि यहां का लोक साहित्य काफी समृद्ध है । यहां के लोक साहित्य के समृद्ध होने के उपरान्त भी इस प्रदेश में साहित्य का व्यवस्थित रूप से अनुशीलन नहीं हुआ है ।

<u>सामग्री संकलन</u> :- सामग्री संकलन का महत्वपूर्ण कार्य प्रदेश के भिन्न भिन्न भागों में घूमकर स्वंयकिया है । टेपरिकार्डर की सहायता का भी प्रयोग किया गया है । विशेषरूप से मूल सामग्री जिसमें लोकगीत, लोक-कथाएं आदि का संकलन तैयार करने में विद्यालयों की दसवीं और ग्यारवीं कक्षा की छात्राओं की भूमिका सराहनीय रही है । मेरी धर्मपत्नी ने भी काफी संख्यामें भिन्न भिन्न प्रकार के मूल रूप से लोकगीतों को लिखाने में पूरा सहयोग दिया है । कुछ सामग्री कतिपय पुस्तकों के उदरणों से भी संचय की गई है । अधिकांश सामग्री स्वंय घूम घूम कर सभी विधाओं की संचय की है ।

1- छत्तीसगढ़ी लोक साहित्य का अध्ययन लेखक दया शंकर शुक्ल 1969, भूमि पृष्ठ से पृष्ठ 8

<u>सीमाएं :-</u> पूरे हरियाणा में बांगरू बोली जाती है केवल "बारह कोस पर बोली और पानी बदल जाता है" का ही अन्तर गौण रूप में रहता है वह भी स्थानीयता के कारण होता है। सभी आयु के स्त्री एवम् पुरुषों से सम्पर्क किया गया है, बालक और बालिकाओं से भी सम्पर्क किया गया है, उनके वार्तालाप उनके गीत कथाएं, लोक गाथाएं, मुहावरे, कहावतें, सूक्तियां, पहेलियां आदि सुनकर संग्रहित की गई है। जिन क्षेत्रों को सामग्री संकलित का आधार माना गया है उनमें ठेठ देहाती, पूर्ण रूपेण शहरी और शहर के इर्द गिर्द के स्थानोंको शामिल किया गया है। कुंगड़ (उत्तरी पूर्वोत्तर भिवानी का भाग), बाहमनी वास (बुलाणा) कैथल, बेलरखां (नरवाना) नरवाना, सांघी (रोहतक) कान्ही (सोनीपत) बल्लभगढ़ (फरीदाबाद) आदि क्षेत्रों को आधार मानकर सामग्री संचय की है।

<u>लेखन प्रक्रिया :-</u> इस ग्रन्थ में बांगरू लोक साहित्य के विविध अंगों का सुव्यवस्थित एवम् वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत कियागया है। लेखन प्रक्रिया की दृष्टि से इस प्रबन्ध को नौ अध्यायों में विभक्त किया गया है :-

प्रथम अध्याय "विषय प्रस्तुति" में भारतीय एवम् पाश्चात्य विद्वानों द्वारा अभी तक अपनाई गई लोक साहित्य सम्बन्धी पद्धति का परीक्षण करके नई सन्तुलित प्रणाली प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। इसके इलावा लोक साहित्य की विभिन्न विधाओं का वर्गीकरण और प्रत्येक वर्ग का सैद्धान्तिक विविवेचन भी है। इस अध्याय के दूसरे भाग में बांगरू लोक गीतों का सामान्य

- -

परिचय और वर्गीकरण किया गया है। इसके तीसरे भाग में अद्यावधि बांगरू लोक साहित्य का समीक्षात्मक विवरण और उसका संक्षिप्त विवेचन के साथ साथ मैंने अपने अध्ययन पक्ष का संक्षिप्त विवेचन देकर वर्तमान विषय पर अपने विचार प्रस्तुत किये है।

द्वितीय अध्याय में बांगरू का नामकरण, ऐतिहासिक क्रम विकास, बांगरू की विभिन्न बोलियां तथा समीपवर्ती बोलियों के पार्थक्य {समता और भिन्नता} का अध्ययन, साथ में इन समीपवर्ती बोलियों के नमूने में जिससे समता भिन्नता का सहज परिशीलन हुआ है। बांगरू बोली का लोक साहित्य में नियोजन तथा अध्याय के अन्त में बांगरू के लोक साहित्य में प्रयुक्त होने वाले कतिपय विशिष्ट शब्दों को दिया गया है। तृतीय अध्याय में लोक गीतों की परिभाषायें और विभिन्न संस्कारों का उदाहरण सहित निदर्शन किया गया है। संस्कार गीतों में यहा के विभिन्न जन्म, विवाह एवम् मृत्यु आदि संस्कारों की रीति रिवाजों की व्याख्या के साथ उल्लेख कियागयाहै। कृषि, ऋतु, देवी देवताओं एवम् त्योहार, बालगीत, क्रियागीत राजनीतिक सम्बन्धी एवम् विविध गीतों की व्याख्या की गई है। अध्याय के अन्त में प्रचलित बांगरू लोकगीतों का वर्गीकरण के आधार पर विवेचन कियागया है।

- -

चतुर्थ अध्याय में कथात्मक गीतों की टिप्पणी सहित की टिप्पणी सहित वर्गीकरण एवम् व्याख्या की गई है । इस अध्याय के दूसरे भाग में लोक नाट्य एवम् लोकमंच के विकास के साथ साथ बांगड़ सांगों का उद्भव एवम् विकास का वैज्ञानिक अध्ययन किया गया है और बांगड़ सांगों में प्रेमतत्व, गुरुभक्ति, जीवनदर्शन, सूफी प्रभाव आदि का विवेचन प्रस्तुत है और साथ में बांगड़ सांगों के स्वरूप और उनका हिन्दी नाटकों के साथ अन्तर भी दर्शाया गयाहै । अध्याय के अन्त में प्रमुख सांगियों के सांगों की रागनियों का विवेचन भी है ।

पंचम अध्याय में प्रमुख बांगड़ कथात्मक गीतों का रूपान्तरित वर्णन एवम् तात्विक विवेचन प्रस्तुत किया गया है । षष्टम अध्याय में बांगड़ लोक कथाओं का साहित्यक अध्ययन और अध्याय के अन्त में उपलब्ध लोक कथाओंका विवेचन अपेक्षित है ।

सप्तम अध्याय में प्रकीर्ण साहित्य में यहां की लोकोक्तियां {कहावतें} चुटकुले, मुहावरे, पहेलियां, सूक्तियां आदि का उल्लेख है और प्रत्येक प्रकीर्ण साहित्य के अंग की समाप्ति पर यहां उपलब्ध कहावतें, चुटकले, मुहावरे, पहेलियां और सूक्तियों की सूची और उनका विवेचन दिया गया है ।

अष्टम अध्याय में बांगड़ संस्कृति का वर्णन किया गया है जिसमें यहां प्रचलित ऐतिहासिक, धार्मिक स्थलों का सांस्कृतिक महत्व- विभिन्न परम्परायें, शैव, नाथ, सन्त, प्रशासन, सैन्य, आदि के साथ साथ यहां के सामान्य जीवन और लोक विश्वासों का अध्ययन किया गया है । इसी अध्याय में यहां की

- -

नदियाँ, कृषि, वनस्पति एवम् खनिज, उद्योग धन्धे, पुरातात्विक वैभव का भी अध्ययन प्रस्तुत है। नवम् अध्याय में लोक साहित्य का काव्य शास्त्रीय अध्ययन प्रस्तुत है जिसमें रस परिपाक, अलंकार विधान, छन्द तुक और लय के साथ साथ बांगरू गीतों में स्वाभाविक एवम् मार्मिक चित्रण दार्शनिक चिन्तन, क्षण भंगुरता, नारी चित्रण, प्रकृति चित्रण, राष्ट्रीय भावना आदि का वर्णन है और अध्याय के अन्त में उपलब्ध बांगरू लोक गीतों का विवेचन भी दृष्टव्य है।

इसके पश्चात उपसंहार लिखा गया है और शोध प्रबन्ध के अन्त में विभिन्न भाषाओं के अन्तर्गत सहायक ग्रन्थों, पत्र एवम्पत्रिकाओं, लेख आदि की सूची दी गई है।

बांगरू लोक साहित्य अभी तक अनुसंधान की उपेक्षा रखता है यद्यपि इस ओर कतिपय विद्वानों तथाशोधार्थियों का कुछ कुछ ध्यान गया है। फिर भी इस क्षेत्र के लोक साहित्य का संकलन एवम् संग्रह करने का प्रयास कम हुआ है।

मै अपनी शोध साधना की इस पूर्ति पर अपने निर्देशक डा० रामजी शर्मा {प्राध्यापक हिन्दी} काशी विद्यापीठ वाराणसी, जिनकी प्रेरणा, प्रोत्साहन एवम् सहयोग से अपने निर्दिष्ट पथ पर अग्रसर हो सका हूं, के प्रति नतमस्तक होता हूं।

- -

श्री देवी शंकर प्रभाकर इसलिये आभारी हूं कि उनकी संकलित एवम् संग्रहित सामग्री विशेषकर [लोकगाथा की निहालदे] का काफी सबल एवम् मूल रूप वैज्ञानिक आधार देनेमें सहायक सिद्ध हुआ। डा० शंकर लाल यादव का हरियाणाप्रदेश का लोक साहित्य भी मेरा पथ प्रदर्शन करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने में सहायक सिद्ध हुआ ।

मूल गीतों के संचय में मैं अपनी धर्मपत्नी श्रीमति सन्तोष देवी, प्रदेश के विभिन्न स्थानोंके का निर्देशन देने में श्रीसुरेन्द्र सिंह,श्रीराजेन्द्र सिंह [हरियाणा राज्य परिवहन] के परिचालक तथा अन्य महानुभावों एवम् शुभ चिन्तकों, अपने विशिष्ट मित्र श्री टी॰डी॰ चोपड़ा तथा श्री शिवशंकर प्राध्यापक का आभार प्रकट करता हूं जिन्होंने समय समय पर मुझे यह शोध प्रबन्ध पूर्ण करने में विशेष उमंग भरनेका प्रयास किया ।

अन्त में उन लेखों और विद्वानों जिनके उद्धरण इस ग्रन्थ में उपयोगी सिद्ध हुए है, उन सबका यथा स्थान उल्लेख हुआ है, उनके प्रति मै हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करता हूं ।

कैलाश-चन्द्र शर्मा

शोध छात्र:-
कैलाश चन्द शर्मा,
नवकला मन्दिर,
बिचला बाजार,
भिवानी [हरियाणा]

डी-7/32, लकर कन्द गली,
वाराणसी ।

विषयानुक्रमणिका

प्रथम अध्याय

- -

पृष्ठ संख्या

- -

4- बांगरू लोक गीतों का वर्गीकरण:-

(1) संस्कारगीत :-

I- जन्म- जच्चा, प्रसव पीड़ा,
पुत्र जन्म, न्हावणवार,
स्यावड़ के गीत, छठी,
रतजगा, जलवा पूजन
बाजड़ डालना, कुआं का
भोजन, जूठन, पलना,
मुण्डन आदि ।

II- विवाह :- लग्न, भात न्योंदना,
हलदात-बान-तेल, रतजगा,
तेल चढ़ाना, आरता, कंगना
भात भरना, गादा, घुड़-
चढ़ी, बारात का प्रस्थान
ढोला, जोड़ी, बधावा,
बारात का स्वागत, सीठणा
कन्यादान, पाणिग्रहण,
शीठणे, दान, दहेज एवम्
विदाई, कांगणे जूए का
खेल आदि ।

III- मृत्यु :- शवयात्रा, शवदाह
आधे, फूल ठाणना
शोकगीत, तेरहवीं,
बरसोधी आदि ।

(2) कृषिगीत - भूमि का महत्व, खाद का महत्व, धरती, बादल,
बीज की किस्में, फसल बोने का समय, फसल
काटने का समय, ईख की नलाई, बाजरा, कोल्हू
आदि के गीत ।

- -

पृष्ठ संख्या

§3§ देवी देवताओं - व्रत त्योहारों की गीतः-
शीतला माता, देवी, निर्जला ग्यास, तीज, जन्माष्टमी, गूगा, सांझी, करवाचौथ, अहोई, होली आदि 12 महीनों में आने वाले व्रत एवम् त्योहार।

§4§ ऋतु गीत :- सावन के झूले, बारह मासिया, मल्हार, आसोज के सांझी और पथवारी, कार्तिक स्नान और फागुन के गीत।

§5§ क्रियागीत:- नृत्य, अनुभूति, तर्क एवम् संवाद प्रधान गीत।

§6§ बाल गीत:- बालकों की विभिन्न अवस्थाओं के गीत।

§7§ राजनीति सम्बन्धी गीतः- उधम सिंह का शहीदी गीत, गांधी की मृत्यु, इन्दिरा [illegible] गांधी का जीवन वृत, संजय की मृत्यु का गीत आदि।

§8§ अन्य गीत :- सोहणा, केवट प्रेम, शराबी की पत्नी, हास्य-विनोद, बरखा आदि के गीत।

9- प्रचलित बांगड़ लोक गीत एवम् उनका विवेचन।

चतुर्थ अध्याय

२५१-३२५

बांगड़ लोक साहित्य में कथात्मक एवम् सांग परक गीत

§भाग-क§ कथात्मक गीत

1- लोकगाथाओं की विशेषताएँ :-

§1§ अज्ञात रचनाकार

- -

पृष्ठ संख्या

- -

- -

क्रम अध्याय	पृष्ठ संख्या

- -

- -

पृष्ठ संख्या

(6) तीज, त्योहार एवम् धर्म सम्बन्धी

(7) परम्परा वादिता सम्बन्धी

(8) नीति सम्बन्धी

(9) जीवन दर्शन सम्बन्धी

(10) विविध लोकोक्तियां :- जातिपरक, पशु सम्बन्धी, विवाह संस्कार, दाहसंस्कार, आदि ।

(ख) उपलब्ध बांगड़ लोकोक्तियों की सूचि एवम् उनका विवेचन ।

2- चुटकुले

(क) प्रमुख बांगड़ चुटकुले

3- मुहावरे

(क) मुहावरों और कहावतों में अन्तर

(ख) जन जीवन का चित्रण

(ग) बांगड़ मुहावरों का वर्गीकरण :-

(1) जाति विषयक (2) नीति सम्बन्धी

(3) संस्कार एवम् प्रथा सम्बन्धी (4) सामान्य व्यवहार सम्बन्धी

(5) कृषि सम्बन्धी (6) राष्ट्र विचार सम्बन्धी ।

(घ) उपलब्ध बांगड़ मुहावरों की सूची एवम् उनका विवेचन

4- पहेलियां (क) बांगड़ पहेलियों का वर्गीकरण :-

(1) खेती सम्बन्धी (2) भोजन सम्बन्धी
(3) घरेलू वस्तु सम्बन्धी (4) प्राणि सम्बन्धी
(5) प्रकृति सम्बन्धी (6) अंग प्रत्यंग सम्बन्धी
(7) पौराणिक कथा सम्बन्धी (8) अन्य उक्ती एवम् वैविध्य प्रधान ।

(ख) उपलब्ध बांगड़ पहेलियां एवम् उनका विवेचन ।

5- सूक्तियां :-

(क) उपलब्ध बांगड़ सूक्तियों की सूची एवम् उनका विवेचन ।

- -

पृष्ठ संख्या
४४१-४८८

अष्टम अध्याय

बांगर लोक साहित्य में मानव संस्कृति

1- भू-भाग

2- नदियां

3- कृषि, वनस्पति एवम् खनिज

4- उद्योग धन्धे

5- पुरातात्विक वैभव

6- ऐतिहासिक एवम् धार्मिक स्थानों का सांस्कृति महत्व :-

(1) कुरुक्षेत्र (2) पृथूदक (3) थानेसर (4) करनाल (5) कैथल
(6) आदि कपा (7) पानीपत (8) जीन्द (9) रामरा
(10) कलायत (11) सर्पदमन (12) सोनीपत (13) रोहतक
(14) अन्य- नागणा, आग्ड़ा, नदाणा, बा भोरी,
छमताज साहब, नरवाणा, केलरवां आदि का संक्षिप्त वर्णन ।

7- प्रमुख परम्परायें :-

(1) शैव परम्परा (2) नाथ परम्परा- सिद्ध नाथों की योग चेतना
(3) सन्त परम्परा सन्तों का ज्ञान रहस्य (4) इस्लाम परम्परा
(5) सैन्य परम्परा ।

8- सामान्य जीवन:-

(1) गांव एवम् गांव का स्वरूप (2) पनघट (3) घर गृहस्थी (4) चौपाल
(5) भोजन (6) वेश भूषा (7) आभूषण (8) श्रृंगार प्रसाधन
(9) मनोरंजन (10) सामाजिक मेल मिलाप (11) अभिवादन और आशीर्वाद (12) अतिथि सत्कार

9- लोक विश्वास :-

(1) देवता- उपदेवता (2) चांद और सूरज (3) धरती माता
(4) गंगा जमना (5) राम और कृष्ण (6) भैरव (7) गूगा पीर
(8) देवी की पूजा (9) पंच पीर और सन्त महात्मा (10) पीपल, तुलसी, कुआ, जोहड़ आदि (11) जन जागरण (12) ग्रहण (13) भूत प्रेत
(14) शुभ चिन्ह (15) यन्त्र, मन्त्र, तन्त्र और जादू टोने टोटके (16) शुभाशुभ स्वप्न (17) शकुन विचार ।

- -

नवम् अध्याय

पृष्ठ संख्या

बागड़ लोक साहित्य का काव्य शास्त्रीय अध्ययन

-0-0-0-0-0-0-0-

"प्रथम अध्याय"

भाग क :- <u>विषय प्रस्तुति</u>

1- "लोक" शब्द की व्युत्पत्ति और व्याख्या :-

2- "फोक"लोर" और "लोकवार्ता" की व्यापकता

3- लोक साहित्य

4- लोक साहित्य और साहित्य

5- लोक साहित्य की विशेषताएं :-

(1) लोक साहित्य श्रुति परम्परा पर आधारित है

(2) लोक साहित्य में प्रामाणिक मूलपाठ का अभाव रहता है

(3) अज्ञात रचयिता तथा रचना में उसके व्यक्तित्व का अभाव

(4) अलंकृत शैली का अभाव (5) कोरे उपदेशों का अभाव

(6) लोक साहित्य लोक संस्कृति को प्रतिबिम्बित करता है ।

6- लोक साहित्य का महत्व :-

(1) ऐतिहासिक महत्व (2) भौगोलिक महत्व

(3) सामाजिक महत्व (4) धार्मिक महत्व

(5) शिक्षा विषयक महत्व (6) आर्थिक महत्व

(7) व्यावहारिक महत्व (8) नैतिक महत्व

(9) साहित्यिक महत्व (10) सांस्कृतिक महत्व

(11) भाषा शास्त्रीय महत्व

7- लोक साहित्य का वर्गीकरण

भाग ख :- बांगरू लोक साहित्य का सामान्य परिचय एवं वर्गीकरण

1- बांगरू लोक साहित्य का सामन्य परिचय

2- बांगरू लोक साहित्य का वर्गीकरण :-

(1) लोकगीत

(2) कथात्मक गीत (लोक गाथाएं)

(3) लोक कथाएं

(4) लोक नाट्य

(5) प्रकीर्ण साहित्य

भाग ग:-

1- अद्यावधि बांगरू लोक साहित्य का समीक्षात्मक विवरण:-

2- शोधार्थी के अध्ययन पक्ष का संक्षिप्त विवेचन और वर्तमान विषय पर शोधार्थी की दृष्टि

0- - - - 0-----0

"प्रथम अध्याय"

विषय- प्रस्तुति

लोक साहित्य "पर विचार करने से पहले "लोक" तथा "साहित्य" पर विचार करना आवश्यक जान पड़ता है । वैसे तो " लोक" शब्द मानव मात्र का वाचक है । परन्तु यह शब्द सामान्यतः ऐसे व्यक्तियों के लिये प्रयुक्त किया जाता है जो निरक्षर तथा कम पढ़े लिखे हों ।

1- "लोक"शब्द की व्युपति व्युत्पत्ति और व्याख्या :-

लोक भावना का उद्गम स्रोत वेद है । वेदों में विशेषतः ऋग्वेद में इस शब्द और भाव की उपलब्धि दृष्टव्य है । ऋग्वेद में "लोक" शब्द का प्रयोग स्थान और भुवन के अर्थ में प्राप्त है । :-

नाभ्या आसीदन्तरिक्षं शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत ।

पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकां अकल्पयन् ।"[1]

ऐतरेयोपनिषद् में परमेश्वर द्वारा समस्त लोकों के सृजन का उल्लेख है यहां भी "लोक"शब्द का प्रयोग भुवन के अर्थ में हुआ है । परमेश्वर ने अम्भ, मरीचि मर और जल- इन लोकों की रचना की :-

स इमाँल्लोकान सृजत । अम्भो मरीचिर्मरमापो दो अदः परेण दिवं द्यौ प्रतिष्ठान्तरिक्षं मरीचयः पृथ्वी मरो या अधस्तात्ता आपः ।"[2]

आर्यों के आगमन पर आर्येतर जातियों से उनकी मुठभेड़ दो भिन्न सांस्कृतियों के संघर्ष के रूप में हुई । फलतः "वेद" और "वेदेतर" स्थिति

- -

1- ऋग्वेद 10/90/14

2- ऐतरेयोपनिषद्-1/1/2

प्रकट हुई । इससे एक अन्य अर्थ की उद्भावना सहज ही हो गई, जिसके अनुसार "लोक" का दूसरा अर्थ वेद विरोधी (वेदेतर) हुआ ।"[1] परन्तु लोक शब्द ने तत्पश्चात अपना स्वतंत्र रूप गीतानुसार धारण किया:-

यस्मात्क्षरमतीतोऽहमक्षरादपि चोत्तम: ।
अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथित: पुरुषोत्तम: ।।"[2]

क्योंकि मैं नाशवान जड़ वर्ग क्षेत्र से सर्वथा अतीत हूँ और लोक अविनाशी जीवात्मा से भी उत्तम हूँ इसलिये लोक में और वेद में पुरुषोत्तम नाम से प्रसिद्ध हूँ । इस प्रकार गीता में "लोक" शब्द की व्याख्या भिन्न भिन्न स्थानों पर भिन्न भिन्न रूपों में प्राप्त है । यहां इसका महत्व लोक शास्त्र और लौकिक नियमाचारों में स्थापित हो गया । "लोक का साधारण जनता के लिये प्रयोग अशोक के शिला लेखों में भी हुआ है :-

कतव्य मतेहि मे सर्व लोक हितं ।"[3]

बौद्ध धर्म ने इसे मानवीय उत्कृष्टताओं का बोधक बनाया । प्राकृत और अपभ्रंश में प्रयुक्त लोक जत्ता (लोकयात्रा) एवम् लोकप्प वाय (लोकप्रवाद) शब्द भी लौकिक व्यवहारों का महत्व प्रकट करते हैं । यजुर्वेद में "लोक" (समाज) की एक विराट कल्पना की गई है । वह पुरुष रूप ईश्वर है । उसके सहस्रों

- -

1- भारतीय लोक साहित्य लेखक- श्याम परमार पृष्ठ- 1

2- गीता अध्याय 15, श्लोक 18

3- अशोक की धर्मलिपियां (प्रधान शिलाभिलेख) पहला खण्ड 62

पुरुष, सहस्त्रों नेत्र और सहस्त्रों पैर है :-

सहस्त्र शीर्षा पुरुषः सहस्त्राक्ष सहस्त्रपाद् ।

"यह "लोक" अनेक रूपों में परिव्याप्त है :-

"बहु व्याहितो वा अयं बहुशो लोकः ।

क एतद् अस्य पुनरीहितो अर्याद् ।।"[1]

तुलसी दास ने लोक और वेद की भेदात्मक स्थिति इस प्रकार स्पष्ट की है :-

1- लोक कि वेद बड़ेरो ।"[2]

11- सो जानव सतसंग प्रभाऊ ।

लोकहु वेद न आन उपाऊ ।"[3]

वेदों में लोक का अन्यार्थ पृथ्वी, मानव, और जीवन का कलात्मक रूप है ।"[4] कतिपय विद्वानों के मतानुसार लोक शब्द के "लोकदर्शने" धातु में "धञ्" प्रत्यय लगाने से निष्पन्न हुआ है इस धातु का अर्थ है - देखना। लट् लकार के अन्य पुरुष एक वचन में इसका रूप होता है -" लोकते" । अतः लोक का अर्थ हुआ - देखने वाला । वहसमस्त जन-समुदाय जो इस क्रिया को करता है, "लोक" के अन्तर्गत समाविष्ट है ।"[5]

- -

1- जैमनीय उपनिषद ब्राह्मण 3/28

2- विनय पत्रिका- गोस्वामी तुलसीदास पद 172 {गीता प्रेस}

3- राम चरित्रमानस, बालकाण्ड ।

4- सम्मेलन पत्रिका {लोक संस्कृति विशेषांक} में डा० वासुदेवशरण अग्रवाल का" लोक का प्रत्यक्ष-दर्शन" शीर्षक निबन्ध पृष्ठ 65

5- लोक बरहिर गीतों की सांस्कृति पृष्ठ भूमि लेखिका- विद्या चौहान 1972 पृष्ठ 41

विश्वभारती निकेतन के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष डा० कुंज बिहारी दास ने लोकवार्ता की परिभाषा बतलाते हुए "लोक" शब्द की भी सुन्दर व्याख्या प्रस्तुत की है उनका कथन है - "लोकगीत उन लोगों के जीवन की अनायास प्रवाहात्मक अभिव्यक्ति जो सुसंस्कृत तथा सुसभ्य प्रभावों से बाहर रह कर कम या अधिक रूप से आदिम अवस्था में निवास करते हैं।"[1] इससे यह स्पष्ट है कि जो लोग संस्कृति तथा परिष्कृत लोगों के प्रभाव से बाहर रहते हुए अपनी पुरातन स्थिति में वर्तमान है, उन्हें "लोक" की संज्ञा प्राप्त है।"[2]

अंग्रेजी में इसके प्रर्यायवाची   शब्द की व्याख्या ब्रिटेनिका विश्व कोश में इस प्रकार दी गई है :-

" In a primitive community the whole body of persons composing it, is the folk and in the widest sense of the word it might equally be applied to the whole population of a civilized state. In its common application of the western type (in such compounds as folk lore, folk music, etc.). It is narrowed down to include only those who are mainly outside the currents of urban culture, systematic education the unlettered, a little lettered inhabitants of the village, a country side."[3]

- -

1- हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास राहुल सांकृत्यायन षोडश भाग प्रस्तावना में उद्धृत

2- - वही - ।

3- Encyclopedia Britania (1951 edu) VolX IX p. 444

अर्थात आदि कालीन जातियों के समस्त व्यक्ति समूहों को ही "लोक" की संज्ञा दी जाती है तथा इसके व्यापक अर्थ में किसी भी सभ्य देश के समस्त निवासियों के लिये इस्तेमाल किया जा सकता है । पाश्चात्य देशों में इसका प्रयोग (उदाहरणार्थ लोक-गीत, लोक नृत्य आदि समासों में) साधारणतः संकुचित अर्थ में किया जाता है जो कि नागरिक सभ्यता का प्रभाव ग्रहण न कर सके हों, सुशिक्षित न हों, अथवा निरक्षर या कम पढ़े लिखे देहाती लोग हों ।

इस प्रकार लोक का अर्थ सरल स्वाभाविक मानव समाज है जिसकी भावनाओं, विचारों परम्पराओं क्रियाओं एवं मान्यताओं में वास्तविक कल्याण के तत्व विद्यमान रहते हैं । इसी को हम लोक संस्कृति भी कह सकते हैं ।

"बाहर का संसार हमारे मन के भीतर प्रवेश करके एक दूसरा ही संसार हो उठता है उसमें केवल बाहरी संसार का रंग आकृति, ध्वनि ही ऐसा नहीं होता, उसके साथ हमारे अच्छे लगने वाले,काम बुरे लगने वाले काम, हमारे भय-विस्मय हमारे सुख दुख जुड़े रहते हैं - वह हमारी हृदय वृत्ति के विविध रस से अनेक भावों में अभिव्यक्त हो साहित्य है ।"[1]

साहित्य की परिभाषा के विषय में हम इतना कहना ही पर्याप्त समझेंगे कि "सत्यं" तथा "सुन्दरं" की सुदृढ़ भित्ति पर सुस्थित "शिवं" ही साहित्य है दूसरे शब्दों में ऐसा "शिवं" जिसके आधारभूत "सत्यं तथा सुन्दरं" की भित्तियें समय की बाढ़ में गोते खाती हुई विलुप्त न हो जायें । "शिवं" वही है जो मानव को मानव के निकट लाने में सहायता प्रदान करे । उसे बर्बर न बनने दे ।[2]

1- साहित्य लेखक - श्री रवीन्द्र नाथ टैगोर पृष्ठ 5

2- [illegible] मानस विशेषांक 1965 पृष्ठ 87- 88 पर "लोक साहित्य" शीर्षक लेखक नानक चन्द शर्मा ।

2- फोक लोर और लोकवार्ता की व्यापकता :-

"लोक" और "वार्ता" अत्यन्त प्राचीन शब्द होते हुए भी इनका शास्त्रीय अर्थ अत्याधुनिक है । डा० वासुदेव शरण अग्रवाल ने "लोकवार्ता"[1] डा० सुनीति कुमार चटर्जी ने "लोकयान" की संज्ञाएं प्रदान की ।[2] "लोकवार्ता अंग्रेजी के Folk Lore शब्द का पर्यायवाची है ।"[3] डा० कृष्ण देव ने अंग्रेजी के Folk Lore शब्द के मूल अर्थ को ध्यान में रखकर "लोक संस्कृति" को लोक साहित्य के समानार्थक मानने का सुझाव दिया है ।"[4] और फोक (Folk) शब्द की उत्पत्ति एंग्लो शब्द Fore से हुई जर्मन में वह Volk के रूप में प्रचलित है और वह Fokk के संकुचित और व्यापक दोनों अर्थ मिलते हैं । संकुचित अर्थ में असंस्कृत और मूढ़ समाज का और व्यापक अर्थ में सुसंस्कृत राष्ट्र के सभी लोगों के लिये होता है । जबकि लोर शब्द की उत्पत्ति एंग्लो सैक्सन शब्द Lare से हुई जिसका अर्थ है - जो सीखा जाए अतः Folk Lore का अर्थ हुआ असंस्कृत लोगों का ज्ञान । पाश्चात्य विद्वानों ने सामाजिक वर्गीकरण की कल्पना उच्च एवम् निम्न दो वर्गों में करके निम्न वर्गों के आचारों से सम्बन्धित समस्त विचारों एवम् व्यापारों को Folk Lore शब्द के भाव में आबद्ध किया है ।"[5]

- -

1- लोक साहित्य विज्ञान लेखक डा० सत्येन्द्र पृ० 4
2- राजस्थानी कहावतें भाग प्रथम लेखक नरोत्तम स्वामी पृ० 11
सम्वत् 2006
3- लोक साहित्य की भूमिका लेखक - श्री सत्यव्रत अवस्थी पृ० 8
4- हिन्दी साहित्य का वृहद इतिहास राहुल सांकृत्यायन प्रस्तावना पृ० 11
5- लोक गीतों की सांस्कृतिक पृष्ठ भूमि लेखिका विद्या चौहान पृ० 42
से ली गई

डा० हजारी प्रसाद ने "लोक संस्कृति"[1] तथा सत्येन्द्र ने "लोकाभिव्यक्ति और "लोकतत्व" शब्द दिये।"[2] "यद्यपि फोक के लिए लोक शब्द ग्रहण करने के समान Lore के पर्याय वाची हिन्दी शब्द के ग्रहण के लिए विद्वानों में मतैक्य नहीं है और नित्य नवीन शब्दों की उद्भावना की जा रही है। तथापि भाषा शास्त्र की दृष्टि से रूढ़ प्रयोगों द्वारा विशिष्ट अर्थ एवं महत्व प्राप्त कर लेने के कारण "लोकवार्ता" को "फोकलोर" की समानार्थक महत्ता प्राप्त हो गई। तथा हिन्दी में उसका प्रयोग स्वीकृत हो गया है। अतः फोक लोर के अभीष्ट अर्थ की व्यंजना के लिए "लोकवार्ता" शब्द का प्रयोग ही उपयुक्त है।"[3]

कुछ पाश्चात्य विद्वानों की फोक लोर सम्बन्धित परिभाषायें इस प्रकार हैं:-

Folk Lore is not something for away and long ago, but real and living among us."[4]

Folk Lore is material about the hopes and yearning of the people."[5]

लोक जीवन की गाथा में लोकवार्ता { } शास्त्र के तत्व संगठित होते हैं सामान्य जन समाज में व्याप्त समस्त विचार, आदर्श

- -

1- सम्मेलन पत्रिका लोक संस्कृति अंक सम्वत् 2010 पृष्ठ 436 लेखक डा० भोला नाथ तिवारी।
2- हिन्दी साहित्य का वृहद इतिहास राहुल सांस्कृत्यायन प्रस्तावना पृष्ठ 11 { सोलहवां भाग}

3- भारतीय लोक साहित्य लेखक डा० श्याम परमार पृष्ठ 14
4- Introduction of American Folk Lore Page 15
5- लोक साहित्य की भूमिका लेखक सत्यव्रत अवस्थी पृष्ठ 10

मनोभाव, विश्वास, परम्परायें, राग-द्वेष, रहन-सहन, रीति रिवाज, अनुष्ठान, क्रियाओं आदि का समन्वित अध्ययन लोक वार्ता शास्त्र का अध्ययन है। लोक जीवन की सतत प्रवाह मान सरिता की लहर लहर में लोक वार्ता के तत्व अनुस्यूत होते हैं। अनादि काल से अनवरुद्ध गति में लोक जीवन की यह विराट स्वरूपिनि तरंगिनी अनन्त की ओर प्रवाहित होती। अपनी सर्वकालीन, सार्वदेशीय और सर्व सम्मत प्रतिष्ठा को प्रमाणित करती आ रही है। युग-व्यापी परिवर्तन, विवर्तन, हर्ष-विषाद, उत्थान, पतन और जीवन मरण के इतिहास को समेटे प्रवीनता में नवीनता का सृजन करता हुआ लोकवार्ता का प्रत्येक चरण अपने दैवत्व अस्तित्व का आभास देता है।"[1]

लोकवार्ता के अन्तर्गत साहित्य, मौखिक, आचार, सौन्दर्यात्मकता अनुष्ठानात्मक अथवा अन्य सांस्कृति परम्परा तथा लोक जीवन को अन्तर्भुक्त किया है व्यापक क्षेत्र से सम्बद्ध होने के कारण लोकवार्ता की सीमाओं का स्पष्ट निरूपण तथा उसमें अन्तर्निहीत विषय वस्तुओं का समुचित उल्लेख कठिन प्राय है। यद्यपि का लोकवार्ता का विषय क्षेत्र विशाल एवं व्यापक है तथापि विद्वानों ने सुविधानुसार वर्गीकृत किया है। सोफिया बर्न द्वारा प्रस्तुत वर्गीकरण का अनुवाद डा० सत्येन्द्र ने इस प्रकार किया है[2]:-

---

1- लोक गीतों की सांस्कृति पृष्ठ भूमि लेखिका विद्या चौहान 1972 पृष्ठ 43

2- ब्रजलोक साहित्य का अध्ययन डा० सत्येन्द्र पृष्ठ 4

{1} वे विश्वास और आचरण-अभ्यास जो सम्बन्धित है -

पृथ्वी और आकाश से,

वनस्पति जगत से

पशु जगत से,

मानव से

मानव निर्मित वस्तुओं से

आत्मा तथा दूसरे जीवन से

शकुनों अपशकुनों, भविष्यवाणियों, आकाशवाणियों से

जादू टोना से

रोगों तथा स्थानों की कला से

{2} रीति रिवाज -

सामाजिक तथा राजनीतिक संस्थायें

व्यक्तिगत जीवन के अधिकार, व्यवसाय, धन्धे तथा उद्योग

तिथियां, व्रत तथा त्योहार

{3} कहानियां, गीत तथा कहावतें

कहानियां {अ} जो सच्ची मान कर कही जाती है,

{आ} जो मनोरंजन के लिये होती है ।

गीत सभी प्रकार के

कहावतें तथा पहेलियां

पद्यबद्ध कहावतें तथा स्थानीय कहावतें ।

उपर्युक्त तीनों वर्गों में समाहित विषय-वस्तु तक ही लोकवार्ता का विस्तार नहीं है । लोकवार्ता की व्यापक सामग्री का अधिक विस्तृत वर्गीकरण हो सकता है और एक एक विभाग के अनेकानेक उपविभाग किये

- -

[illegible]

जा सकते हैं ।"1

3- <u>लोक साहित्य</u> :-

लोक साहित्य लोक वार्ता का एक अंग है [illegible] की द्वारा प्रस्तुत लोक सामग्री के उपर्युक्त तीन वर्गों में से तीसरे वर्ग की सामग्री लोक साहित्य है । इस प्रकार लोक साहित्य और लोक वार्ता में अंग और अंगी का सम्बन्ध है । लोक साहित्य का अध्ययन करने वालों में डा० सत्येन्द्र का स्थान प्रमुख है । उनके अनुसार लोक साहित्य के अन्तर्गत वह समस्त भाषागत अभिव्यक्ति आती है जिसमें :-

(क) आदिम मानस के अवशेष उपलब्ध हों ।

(ख) परम्परागत मौखिक क्रम से उपलब्ध बोली या भाषागत अभिव्यक्ति हो जिसे किसी की कृति न कहा जा सके, जिसे श्रुति ही माना जाता हो, और जो लोक मानस की प्रवृत्ति में समाई हुई हो ।

(ग) कृतित्व हो किन्तु वह लोक-मानस के सामान्य तत्वों से युक्त हो कि उसके किसी व्यक्तित्व के साथ सम्बन्ध रहते हुए भी लोक उसे अपने ही व्यक्तित्व की कृति स्वीकार करे ।"2

इस परिभाषा से यह स्पष्ट होता है कि लोक साहित्य में आदि मानस के अवशेष का अधिक महत्व है आदि मानस को ही लोकमानस कहा जाता है । जम्स ड्रीवर ने परिभाषा आदिमानस के विषय में दी है ।"3

- -

1-

2- लोकगीतों की सांस्कृतिक पृष्ठ भूमि लेखिका - विद्या चौहान 1972 पृष्ठ 46 से उद्धृत ।

3- लोक [illegible]

लोकवार्ता और लोक साहित्य का अंग और अंगी का सम्बन्ध है । लोकवार्ता को लोकसंस्कृति की संज्ञा से अभिहित करते हुए डा० कृष्णदेव उपाध्याय ने लोकसाहित्य का उससे सम्बन्ध इस प्रकार दर्शाया है - "लोकसाहित्य लोक संस्कृति का एक अंग है । यदि लोक संस्कृति की उपमा किसी विशाल वटवृक्ष से दी जाये तो लोक साहित्य उसका एक अवयव है । लोक संस्कृति का जो विस्तार अत्यन्त व्यापक, परन्तु लोक साहित्य का विस्तार संकुचित है । लोक संस्कृति की व्यापकता जीवन के समस्त व्यापारों में उपलब्ध होती है । परन्तु लोक साहित्य जनता के गीतों, कथाओं, मुहावरे और कहावतों तक ही सीमित है । एक जो अत्यन्त व्यापक है दूसरे का सीमित है तथा संकुचित । लोक साहित्य अंग है तो लोक संस्कृति अंगी है । लोक संस्कृति में लोक साहित्य का अन्तर्भाव होता है परन्तु लोक साहित्य लोक संस्कृति का समावेश होना सम्भव नहीं है ।"[1]

संक्षेप में लोक साहित्य लोक वार्ता का एक सबसे सुन्दर रूप

4- <u>लोक साहित्य और साहित्य :-</u>

इन दोनों के मौलिक भेद की विवेचना का उल्लेख इस प्रकार करना अधिक उपयुक्त होगा-" लोक साहित्य और साहित्य दोनों में मानव मन की अनुभूतियों एवं भावनाओं का प्रकाशन होता है भावाभिव्यंजना की दृष्टि से दोनों में मौलिक साम्य है । साहित्य का प्रत्येक चरण लोक सापेक्ष होता है । लोक जीवन की सांस्कृतिक चेतना उसमें अनुप्राणित होती है । लोक साहित्य और साहित्य में आंतरिक साम्य होते हुए भी वैषम्य है । साहित्य अपने अस्तित्व को उस धरातल से ऊपर उठकर संवारता है उसके पोषक तत्व उपलब्ध होते हैं । जबकि लोक साहित्य सम्पूर्ण तल्लीनता उस धरातल पर छाया रहता है । साहित्य में व्यक्तिवादी स्वर मुखर होता है जबकि लोक साहित्य में समूह की प्रधानता रहती है ।"[2]

- -

1- हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास प्रस्तावना पृष्ठ 14

2- लोकगीतों की सांस्कृतिक पृष्ठ भूमि प्रस्तावना-व

5- <u>लोक साहित्य की विशेषताएं:-</u>

लोक साहित्य में साहित्य के तत्व तो विद्यमान हैं ही इसके अतिरिक्त इसमें कुछ और विशेषताएं हैं इनका वर्णन निम्नलिखित है:-

(1) <u>लोक साहित्य श्रुति परम्परा पर आधारित है :-</u> लोक साहित्य आदिकाल से ही सुनी सुनाई परम्परा चला आ रहा है। इसे लोक सभ्यता का वेद (श्रुति) भी कहा जाता है। क्योंकि वेद भी आरम्भ में श्रुति कहलाते थे। और सुन सुन कर याद किये जाते थे। वेदने तो कालान्तर में लिपि का सहारा ले लिया परन्तु लोक साहित्य आज भी श्रुति ही है लोक साहित्य का सहज सौन्दर्य उसके मौखिक रूप में ही है। उसका प्रवाह लिपि के शिकन्जे में नहीं जकड़ा जा सकता। लोक वार्ताकार जो साहित्य की मौखिक परम्परा को बनाये रखने में विश्वास रखते हैं।

(2) <u>लोक साहित्य में प्रमाणिक मूलपाठ का अभाव रहता है :-</u> लोक-साहित्य की सम्पत्ति पीढ़ी दर पीढ़ी वितरित होती है। स्मरण में जहाँ कोई व्यक्तित्व कम हुआ, व गायक उसमें अपनी ओर बढ़ता जाता है लोक की भाषा के विकास के साथ साथ ही लोक साहित्य की भाषा भी परिवर्तित होती जाती है और एक ऐसी स्थिति भी आ सकती है कि आदि प्रणेता उसके वर्तमान स्वरूप एवं स्वर को सुने तो वह निश्चय ही अपनी रचना नहीं पहचान सकेगा। परिणाम यह होता है। कि लोक साहित्य का मूलपाठ मिलता ही नहीं है लोक साहित्य की इसी प्रकृति के कारण यह कहा जाता है कि वह अत्यधिक दूर और कोई प्राचीन वस्तु नहीं है, वह तो हमारे मध्य यथार्थ होकर जीवित है।"[1]

- -

1- बी.ए.बोटकिन- अमेरिकन फोकलोर (पाकेट बुक) पृ० 15

(3) **अज्ञात रचियिता तथ्य रचना में उसके व्यक्तित्व का अभाव:-**

लोक साहित्य की विपुल राशि हमारे समक्ष मौजूद है परन्तु उ
उसके निर्माता के विषय में बतलाना बड़ा मुश्किल है वैसे कुछ लोक गीतों
में कबीर, तुलसी आदि की छाप रहती है परन्तु ऐसा माना गया है कि
रचना की प्रतिष्ठा बढ़ाने के उद्देश्य से यह काम बाद में किया है ।
यों तो सभी रचनाएं किसी न किसी व्यक्ति की सहज प्रतिभा का रूप है ।
परन्तु रचना में उसके नाम का अभाव रहता है इसके लिए अनेक कारण हो
सकते हैं । नाम के अलावा रचयिता का व्यक्तित्व के विषय में भी रचनाओं
की कोई जानकारी उपलब्ध नहीं होती परिनिष्ठ साहित्य की यह सबसे
बड़ी विशेषता मानी जाती है कि कलाकार का उसमें व्यक्तित्व झलकता हो
पर लोक साहित्य में तो रचना की विशेषता रचयिता के व्यक्तित्व में
नही वरन् उसके व्यक्तित्व के नितान्त अभाव में है ।"[1] लोक साहित्य की क
कसौटी यही है कि कृतित्व हो किन्तु लोक मानस के ऐसे सामान्य तत्वों से
युक्त हो कि व्यक्तित्व के साथ सम्बद्ध करते हुए भी लोक उसे अपने ही
व्यक्तित्व की कृति स्वीकार करें ।"[2] जैसे "आल्हा" जगनिक की
रचना स्वीकार की गई परन्तु उसका वर्तमान रूप विभिन्न बोलियों का हो
गया है । इसी प्रकार कहावतों में भी घाघ-भड्डरी के नाम लिये जाते हैं
परन्तु इनका रूप ही बदल गया है । और नाम रह ही नहीं गये । जैसे
कुछ लोक साहित्यकारों को साहित्यकार की कोटी में रखने का प्रयास किया
गया परन्तु यह प्रयोग भी असफल रहा ।

- -

1- "दी बैलेड, मार्टिन सेकर"- फ्रैंक सिजविक- (लन्दन) पृष्ठ 11
2- मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य का लोक तात्विक अध्ययन लेखक डा० सत्येन्द्र पृष्ठ 5 ।

§4§ अलंकृत शैली का अभाव :- परिनिष्ठत साहित्य में जहां अंलकारों को अत्यधिक महत्व दिया गया है वहां लोक साहित्य में इनका अभाव ही दृष्टिगोचर होता है । यह तो उस बन कुसुम की भान्ति है जो बिना सजाएं स्वारे ही अपने प्राकृति सौंदर्य से देदीप्यमान रहता है । ग्रामगीत और महाकवियों की कविता में अन्तर है । ग्रामगीतों में रस है । महाकाव्यों में अलंकार । ग्रामगीत हृदय का धन है महाकाव्य मस्तिष्क का ग्रामगीत प्रकृति केउद्गार है इनमें अलंकार नहीं केवल रस है ।"[1]

§5§ कोरे उपदेशों का अभाव.- लोक साहित्य में लोक जीवन के क्रिया कलापों के होने से उनमें लोक जीवन के गुण अवगुण पाना स्वाभाविक है क्योंकि लोक साहित्य का आधार लोक आदर्श होते हैं परन्तु उनमें न तो कोरी आदर्श वादिता की झलक मिलती है और न ही कोरी उपदेशात्मकता । लोकोक्तियों में अधिकांश मिलने वाले उपदेशों को हम केवल उपदेशात्मकता नहीं कह सकते इनमें यथार्थकता एवम् चमत्कार अभिव्यंजित होता है ।

§6§ लोक साहित्य लोक संस्कृति को प्रतिबिम्बित करता है :- लोगों का रहन सहन, खान-पान, आचार, व्यवहार, प्रेम, वात्सलय, करूणा, घृणा विश्वास सबका स्वभाविक आकलन लोक साहित्य मे मिलता वर्णित होता है जो लोक का वास्तिविक रूप दर्शाता है । लोक साहित्य की इसी विशेषता के कारण शायद समाज शास्त्री, नृविज्ञानवेता और इतिहासकार असको अपने अध्ययन का प्रमाणिक स्त्रोत मानने लगे है शिष्ट साहित्य में तो उनकी निराशा कारण है वास्तविकता कम और आदर्शवादिता अधिक ।

उपर्युक्त लोक-साहित्य की सार्वदेशिक विशेषताएं है :- वे लोक साहित्य में उपलब्ध होती है परन्तु किसी विशिष्ट देश या जाति के

- -

1- कविता कौमुदी §भाग 3§ द्वितीय संस्करण लेखक प० राम नरेश त्रिपाठी पृष्ठ 69

6- <u>लोक साहित्य का महत्व :-</u>
{6}

सुविधानुसार लोक साहित्य के महत्व को निम्नलिखित रूप से बांटा जा सकता है :-

{1} <u>ऐतिहासिक महत्व</u> :- लोक साहित्य में इस प्रकार की सामग्री का समावेश रहता है जो युग, समाज और व्यक्ति के इतिहास की कड़ियाँ अपने गीतों में, अपनी कथाओं से जोड़े रखती है। विस्मृत घटनाएं और बहुत सी इतिहास के पन्नों द्वारा विलुप्त एवम् अस्तित्वहीन घटनाएं लोक मस्तिष्क द्वारा लोक साहित्य में स्थान पा जाती है। अतः इतिहास के मर्मज्ञों को भी कभी कभी अनेक कड़ियां जोड़ने के लिए लोक साहित्य की शरण लेनी पड़ती है।

{2} <u>भौगोलिक महत्व</u>:- लोक साहित्य के माध्यम से भूमि, नदियां, पर्वत, सागर, तीर्थों आदि भौगोलिक स्थानों की वर्णित उपलब्धि भी होती है। देशकाल की ऋतुओं, जलवायु, सवारएवम् परिवहन के साधन, व्यापारिक सम्बन्धों एवं साधनों, वहां का वातावरण आदि का वर्णन लोक साहित्य में दर्शनीय होता है।

{3} <u>सामाजिक महत्व</u> :- समाज के सभी पहलुओंएवम् क्रीड़ाओं तथा क्रिया कलापों का "सुख-दुःख" राग विराग, आशा-निराशा, ईर्ष्या-द्वेष आदि मनोभिव्यक्ति का रीति रिवाजों, आचार विचार,
- -

रहन सहन विश्वास एवम् परम्पराओं का चित्रण प्राप्त होता है । समाज में व्याप्त समस्त सम्बन्धों का भावनात्मक निरूपण तथा विभिन्न जातियों का पारस्परिक अनुबन्ध इसमें प्राप्त होता है ।" ।

किसी समाज का सर्वाधिक सच्चा और स्पष्ट देखना हो तो उसके लोक साहित्य का स्तर एवं समृद्धि की जानकारी लिजिए । जो उसका वास्तविक प्रतिबिम्ब दर्शायेगा ।

(4) <u>धार्मिक महत्व</u> :- जिस प्रकार लोक साहित्य का समाज से सम्बन्ध है उसी प्रकार समाज के साथ साथ उसकी धार्मिक भावनाओं का रिश्ता जुड़ा होता है देवी देवताओं चान्द, सूरज, धरती, वृक्ष नदियों तथा जल, व्रत पुण्य आदि सामान्य जीवन में किये जाने वाले आस्थित विचारों की क्रियाएँ लोक साहित्य में वर्णित होती है । किसी विशिष्ट समाज की धार्मिक विचारधारा की महानता एवम् गम्भीरता का आभास लोक सहित्य को हो जाता है ।

(5) <u>शिक्षा विषयक महत्व :-</u> लोक साहित्य द्वारा ग्रामीण एवं अनपढ़ जनता भी शिक्षा ग्रहण करती है यदि वे पढ़ लिख न सकते हों तो श्रवण विधि उनके लिए उपयोगी सिद्ध होती है । और यह मौखिक एवम् सुनने का माध्यम उन्हें लोक साहित्य से अवगत कराता रहता है । चौपाल आदि में उनके गीतों भजनों, एवम् सांगों का कार्यक्रम चलता रहता है। फिर वृद्ध एवम् वृद्धाएँ संचित ज्ञान को बच्चों को कथाएँ आदि सुनाकर उनको

1- लोक गीतों की संस्कृति पृष्ठ भूमि लेखिका विद्या चौहान 1972 पृ० 66

शिक्षा प्रदान करती है । बालक अनुकरण बड़ी शीघ्रता से करता है ।

(6) <u>आर्थिक महत्व</u> :- पुरानी कहावतें चली आ रही है कि "छप्पन छुरियों का घर सोने का गात्र की और मुझे भजन न होय गोपाला । चान्दी की जूती सोने के थाल आदि । इनमें हमें प्रत्येक युग के सामान्य जीवन के विषय में उनकी गरीबी अमीरी का बोध हो जाता है कि अमुक युग में आर्थिक स्तर किस प्रकार का था और साथ में गरीब जनता का भी

(7) <u>आचारिक महत्व</u> :- लोकाचार स्पष्ट करता है कि लोगों का आचार । यदि हम अपनी दृष्टि लोक साहित्य पर दौरायें तो यह बात और भी साफ हो जाती है कि इनमें लोकोत्तर नैतिक एवं आचरण सम्बन्धि अवस्थाओं का उल्लेख सुन्दर तरीके से वर्णित होता है । जहां लोक साहित्य में कृष्ण- चित्रण, महेश के अवतारों की चारित्रिक झांकियाँ है मनोरम शब्द छवी दृश्य हो वहां आदर्श और मर्यादा के आवरण को कैसे भुलाया जा सकता है । सीता का पति व्रत धर्म हमारे समाज के समक्ष अमिट तथा अटल उदाहरण बने रहेंगे ।

(8) <u>नैतिक महत्व</u> :- जन मानस की भावनाओं की मान्यताओं से नैतिक रूप जिसमें मातृत्व, पितृत्व, भ्रातृत्व, आदि का रूप, पिता का त्याग, आदर्शवती नारी कि दिव्यता, मित्र एवं शिष्य की नैतिक भावनाओं का समावेश मिलता है । समाज के नैतिक स्तर का सजीव पूर्ण वर्णन प्राप्त होता है ।

{9} <u>साहित्यिक महत्व</u> :- साहित्य मानव हृदय की भावना अभिव्यक्ति होती है। फिर लोक साहित्य भी तो वही है। परन्तु दोनों में अन्तर विचारणीय है वह है कि अलंकारिक एवम् छन्द दृष्टि से तुलना करें यदि लोकसाहित्य को रसात्मक वाक्य व. अन्त रुचि को लोक साहित्य में साहित्य से किसी प्रकार भी कम नहीं माना जा सकता है।

{10} <u>सांस्कृतिक महत्व</u>:- "संस्कृतियों के पुनीत इतिहास की तरफ अधिकांश में लोक साहित्य से सम्भव है सच पूछा जाये तो लोक साहित्य ही संस्कृति की अमूल्य निधि है। "महात्मा गांधी ने भी तो कहा है कि लोक गीत समूची संस्कृति के पहरेदार हैं। अतः यदि हम यह कहें कि लोक साहित्य जन संस्कृति का दर्पण है तो अत्युक्ति न होगी।"[1]

{11} <u>भाषा शास्त्रीय महत्व</u> :- भाषा विकास के क्रम में बोली का महत्वपूर्ण योग है। शब्दों के प्रमाणित निश्चित ज्ञान के हेतु भी हम बोलियों का अध्ययन करते हैं लोक बोलियों के प्राकृतिक शब्द रूप लोक साहित्य में ही प्राप्त होते हैं। लोक भाषा में वर्णित होने के कारण लोकसाहित्य का भाषा वैज्ञानिक महत्व भी है। डा० शंकर लाल यादव के अनुसार तो "यह वह धरातल है जहाँ पर भाषा तत्ववेता भाषा के परतों को उघाड़ कर देखते हैं और गम्भीर से गम्भीर स्तरों में प्रवेश पाते हैं।"[2]

आगे की पंक्तियों में हम लोक साहित्य के भेदों के विषय में विचार करेंगे।

1- हरियाणा प्रदेश का लोक साहित्य लेखक - शंकर लाल यादव पृ० 48
2- हरियाणा प्रदेश का लोक साहित्य लेखक - शंकर लाल यादव पृ. 36

7- लोक साहित्य का वर्गीकरण :-

लोक साहित्य लोक जीवन की सहज भावाभिव्यक्ति है। अतः उसमें लोक-हर्षोल्लास, हास- परिहास, विषाद, पीड़ा, सुख: दुख, जय-पराजय, ज्ञान- विज्ञान, चिन्तन-मनन आदि सभी अभिव्यक्त हुआ है। इन सभी स्थितियों और मनोदशाओं को वाणी रूप प्रदान करने के लिये जिन विधाओं को अपनाया गया है, उन्हें लोक साहित्य के भेद या प्रकार कहते हैं। मोटे तौर पर हम इस साहित्य को कथा, गीत और कहावतें आदि के रूप में प्राप्त करते हैं। लोक कथाओं की विभेदता भी तीन रूपों में मानी जाती है - धर्मगाथा, लोकगाथा, तथा लोक कहानी। धर्म गाथा अध्ययन का विषय है शेष रह जाती है- लोक गाथा और लोक कहानी।

लोक साहित्य को श्री रामनरेश त्रिपाठी ने 28 वर्गों में बांटा है :- (1) संस्कारों के गीत 2- व्रतों और त्योहारों के गीत 3- ग्राम गाथाएं, 4- ग्राम कथाएं, 5- मन्दिरों में गाये जानेवाले पद, 6- रास के गीत, 7- खेल के गीत 8- भिखमंगों के गीत, 9- कोल्हू के गीत 10- भिन्न जातियों के गीत, 11- चक्की के गीत, 12- ऋतुओं के गीत 13- बच्चों के गीत, 14- गुड़ियों के गीत, 15- गांव में मनोरंजन के साधन मेले और तमाशे· 16- गांव के खेल 17- ग्राम संगीत (नाच और गीत) 18- नाच और उसके तरीके, 19- बाजे और उनके उपयोग, 20- नीति की कहावतें 21- स्वास्थ्य की कहावतें 22- खेती की कहावतें, 23- कुतूहल और ढकोसले, 24- बारहमासे, 25- नये नये शब्द और मुहावरे, 26- मनुष्य और पशुओं के रोगों के नुस्खे 27- पेशेवर शब्द और 28- जड़ी बूटियों की पहचान और उनके उपयोग[1]।

- -

1. ग्राम साहित्य - पहला भाग पृष्ठ 38-39

उपर्युक्त विभाजन से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह विभाजन वैज्ञानिक नहीं है। डा० कृष्णदेव उपाध्याय ने वैज्ञानिक ढंग से लोक साहित्य को इन पांच प्रधान भागों में बांटा है।:-

1- लोकगीत 2- लोकगाथा 3- लोक कथा 4- लोकनाट्य 5- लोक सुभाषित। लोक सुभाषित को उन्होंने प्रकीर्ण साहित्य की संज्ञा भी दी है।"[1]

(1) लोक गीत :- लोकभाषा के माध्यम से स्वर और लय के संगीतात्मक आवरण में लिपटी हुई सामान्य जन-समुदाय के हार्दिक रागात्मकता से पूर्ण भावानुभूतियाँ लोकगीत कहलाती हैं। जगत की विभिन्न चेष्टाओं एवं स्थितियों का प्रभावपूर्ण चित्र इन गीतों में निबद्ध रहता है।"[2]

लोक गीत लोक साहित्य का सबसे अधिक महत्वपूर्ण एवम् प्रभावशाली अंग। लोक के पास जिन्दगी में उत्साहित प्रेरणा देने का माध्यम लोकगीत ही है। सभी प्रकार के अवसरों पर गेय तथा सभी भावों से युक्त पद्यमयी अभिव्यक्ति इसी के अन्तर्गत आती है।

(2) लोक गाथा:- लोक साहित्य के विपुल भंडार में कुछ ऐसे भी गीत पाये जाते हैं जिनमें कथात्मकता की प्रधानता होती है तथा वे बड़े लम्बे होते हैं। इन्हें अंग्रेजी में "बैलेड"[3] कहते हैं। और हिन्दी में इनका प्रायः पर्यायवाची शब्द "लोक गाथा" भी स्वीकार किया गया है।"[4]

- -

1- हिन्दी साहित्य का वृहद् इतिहास, सोलहवां भाग, प्रस्तावना।
2- लोकगीतों का विशद विवेचन।
3- ओल्ड बैलेड - आर्ई फ्रैंक सिजविक पेज।
4- भोजपुरी लोक गाथा लेखक - श्री सत्यव्रत सिन्हा पृष्ठ 2

(3) लोक कथा :- लोक कथा लोक साहित्य का अत्यन्त महत्वपूर्ण अंग है अपनी प्रचुरता एवम् लोकप्रियता दोनों ही कारणों से लोक साहित्य में लोक कथाओं विशेष महत्व प्राप्त है । मनोरंजन, शिक्षा, व्रतों के अनुष्ठान, जातियों के स्वभाव तथा पशु पक्षियों, भूतप्रेतों तथा परियों से सम्बद्ध सभी प्रकार की गद्यमयी अभिव्यक्ति लोक कथाओं के अन्तर्गत आती है ।

(4) लोक नाट्य - गीत, नृत्य और संगीत से युक्त लोकानुरंजक कथावस्तु का लोक भाषा में अभिनीत होना लोक नाट्य है । नाट्य साहित्य रूप का स्वांग आदि जो गद्य, पद्य एवं नाट्य का मिश्रण है, इसी में आता है ।

(5) प्रकीर्ण साहित्य :- प्रकीर्ण साहित्य में उन सभी लोक अभिव्यक्तियों का समावेश होता है जिनका उल्लेख लोक गीत, लोकनाट्य, और लोक कथा में नहीं आये हैं । वे हैं कहावतें, चुटकुले, मुहावरे, पहेलियां, सूक्तियां आदि ।

कहावतों में प्रदेश की अपनी सांस्कृतिक चेतना और अपना जीवन दर्शन होता है । सामान्य जन का जीवन दर्शन, उनकी गतिविधियां आदि विभिन्न रूपों में प्रकट होते रहते हैं इनमें सांसारिक व्यवहार पटुता, सामान्य बुद्धि का बहुत सुन्दर वर्णन मिलता है ।

चुटकले कथा का गतिमय रूप होता है ।

मुहावरों में ज्ञान और अनुभव का विशेष भंडार सुरक्षित है जिन तथ्यों के विषय में इतिहास उदासीन रहा है उन्हें भी इनके द्वारा जन मानस सदियों से सुरक्षित रखता चला आ रहा है ।

घाघ आ भड्डरी की सूक्तियों में ऋतु विज्ञान सम्बन्धि बहुमूल्य तथ्य उपलब्ध होते हैं । इनमें खेती और वर्षा की अनुभूति भी प्राप्त होती है । पहेलियों के माध्यम से बुद्धि विलास होता है ।

- -

भाग ब

बांगरू लोक साहित्य का सामान्य परिचय एवम् वर्गीकरण

1- बांगरू लोक साहित्य का सामान्य परिचय:-

साहित्यकारों द्वारा उपेक्षित रहने की वजह से बांगरू -ब्रज, अवधी, खड़ी बोली की तरह बोली से भाषा पद पर सुशोभित नहीं हो पाई। एक समय में ब्रज ने और आज खड़ी बोली ने राष्ट्र भाषा का रूप धारण कर लिया है परन्तु बांगरू विशुद्ध लोक भाषा ही रही है। अतः साहित्य के नाम पर जो कुछ बांगरू बोली के माध्यम से प्राप्त होता है वही वह लोक साहित्य ही है।

लोक साहित्य के तत्व पर हम विचार करने से यह पाते हैं कि लोक साहित्य लोक मानस की आधारशिला पर ही निर्मित होता है। इस प्रश्न पर ध्यान देने के लिए लोक साहित्य के आधारभूत तत्वों पर ध्यानाकर्षण करना आवश्यक होगा:-

(1) निर्व्याज अभिव्यक्ति (2) भाव जगत की सुन्दरता एवं स्वाभाविकता (3) भाषा अनगढ़ प्रयोग (4) लोक काव्य में प्रयुक्त छंदों के निर्वाह में शैथिल्य; (5) तर्जों या धुनों का सौन्दर्य (6) अप्रस्तुत विधान में सादृश्य का अनूठापन (7) नैतिकता एवं धार्मिकता का संरक्षण (8) धरती के वातावरण की संसृष्टि (9) रूढ़ियों एवं परम्पराओं का निर्वाह (10) लोक-संस्कृति के अभिव्यक्ति।

उपर्युक्त तत्वों पर विचार करने पर हमें लोक साहित्य के अन्तर्गत निम्नलिखित विशेषताएं दिखाई पड़ती हैं।" लोक साहित्य लोकमानस की सहज

- -

सहज और स्वाभाविक अभिव्यक्ति है। यह बहुधा अलिखित ही रहता है और अपनी मौखिक परम्परा द्वारा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक आगे बढ़ता रहता है। इस साहित्य के रचयिता का नाम प्रायः अज्ञात रहता है। लोक कुछ प्राणी जो कुछ कहता सुनता है, उसे समूह की वाणी बनकर और समूह की वाणी में घुलमिलकर कहता है। संभवतः लोक साहित्य संस्कृति का वास्तविक प्रतिबिम्ब भी होता है। अभिजात, परिष्कृत या लिखित साहित्य से भिन्न लोक साहित्य परिमार्जित भाषा, शास्त्रीय रचना पद्धति और व्याकरणिक नियमों से मुक्त रहता है। लोक भाषा के माध्यम से लोक-चिन्ता की अकृत्रिम अभिव्यक्ति लोक साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता है।"[1]

आंगिक लोक साहित्य का क्षेत्र बड़ा विशाल एवं विस्तृत है उसके रूप विविध एवं अनेक प्रकार के है। आंगिक बोली में लोक साहित्य की विपुल राशि उसकी विविध विधाओं में सरसता, मृदुता, एवं गंभीरता की दृष्टि से समृद्ध है।

इन बातों के गम्भीर विवेचन से पता लगता है लोक साहित्य बड़ा उपयोगी है आंगिक लोक साहित्य की जो सामग्री प्राप्त हो सकी है। उसी आधार पर उसका आगे वर्गीकरण प्रस्तुत किया जा रहा है। डा० शंकर लाल यादव के साहित्यक तत्व इस प्रकार है :-

1- लोक साहित्य संचित परम्परा से चलता रहता है अर्थात औलाद दर औलाद
2- लोक साहित्य मनोरंजन शिक्षा या ज्ञान वृद्धि का सरल मार्ग है।
3- लोक साहित्य लोक के संस्कार, व्रत पूजादि से संबन्धित है।
4- लोक साहित्य ग्रामीण खेलों एवं वाक प्रचार से सम्बन्धित है।
5- लोक साहित्य में लोक जन सुलभ विश्वास श्रद्धा आदि के लिये स्थान है।[2]

- -

1- लोक साहित्य विवेक - जगदम्बा प्रसाद पाण्डे पृष्ठ 14
2- हरियाणा प्रदेश का लोक साहित्य डा० शंकर लाल यादव 1960 पृष्ठ 64
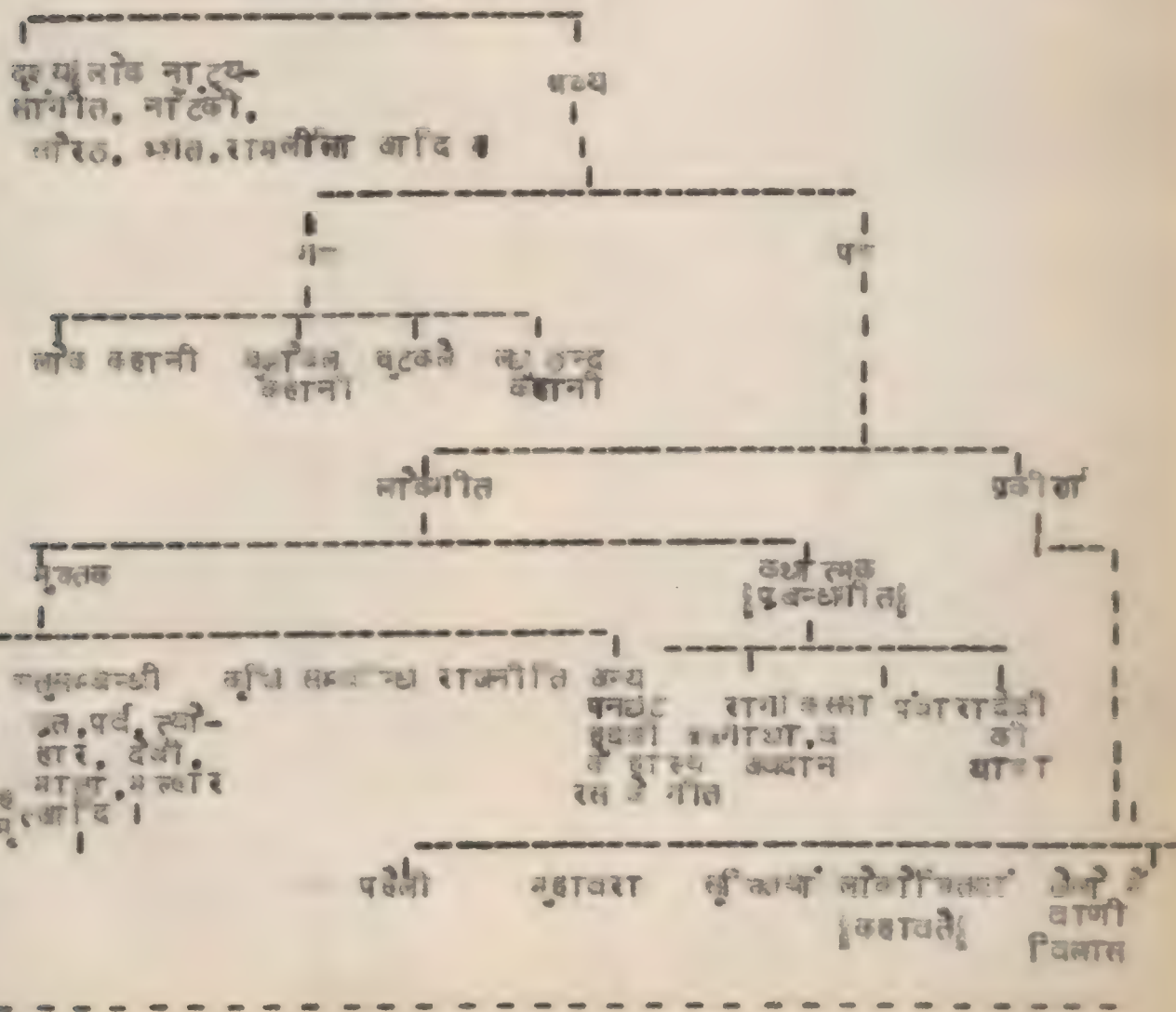
दृश्य काव्य में लोक नाट्य (अभिनयात्मक) लोक साहित्य के अन्तर्गत सांग, भगत, नौटंकी, सोरठा, आदि ग्रामीण लोगों की रुचि का कार्यक्रम आता है। इनमें खुले मैदान में सांग मण्डली अपने साजिन्दों के साथ तख्त या तख्त पर बैठ कर अपना सांग दिखाती है। दादा लखमी चन्द और उनके शिष्य मांगे राम के सांगों को लोग बड़े चाव एवम् उत्साह से देखते थे। अन्य सांगियों में राम किशन व्यास, चन्द्रबादी, धनपत निदाणा, कर्मवीर, बलबीर, श्याम आदि आते हैं।

श्रव्य काव्य से गद्य एवं पद्य दोनों ही लोक साहित्य में आते हैं इनमें लोक कहानियां, चुटकले, कहावत, स्वच्छन्द कहानियां आदि सम्मिलित हैं। पद्य भाग में (मुक्तक व प्रबन्ध) दोनों प्रकार के गीत पहेलियां, सूक्तियां आदि श्रेय वस्तुएं आती हैं। विभिन्न व्रत उत्सवों, त्योहारों, जन्म और विवाह आदि के अवसरों पर अनड़ा अनड़ी बा द, देवी (शीतलामाता) मल्हार, सांझी, कार्तिक स्नान आदि गीत छोटे छोटे गीतों की गिनती में आते हैं। और कामी विलास के अन्तर्गत बालकों की खेल क्रियायें आदि का पुट रहता है। इनमें कहीं कहीं गद्य का भी अंश सम्मिलित होता है।

बड़े या प्रबन्ध गीतों में गद्य एवं पद्य दोनों का समावेश होता है जबकि गद्य का अंश कम और पद्य का भाग ज्यादा होता है परन्तु इन्हें गीत ही कहकर कथात्मक गीत कहा जाता है। बहुत से गीत तो कई मास में

- -

समाप्त होते हैं जैसे आल्हा ऊदल । ढोलामारू, रसालदे, निहालदे, आदि इसी प्रकार की व्याख्यायें है । लोक गाथाओं के अन्तर्गत आल्हा, साके पंवारे आदि लोक प्रबन्ध का वर्णन मिलता इनमें ऐतिहासिक या पौराणिक वृत्त को आधार बनाकर उसके इर्द गिर्द कथाओं का जाल बुना जाता है । इन्हें प्रबन्ध की संज्ञा भी प्राप्त है ।

प्रकीर्ण साहित्य के अन्तर्गत सर्वप्रथम लोकोक्तियाँ, कहावतें आती है इनमें गागर में सागर के समान नीति, शिक्षा, अध्यात्म, राष्ट्र समाज एवं जाति के व्यापक नियम, सिद्धान्त एवं आचार विचारों का समावेश मिलता है ।

लक्षणा एवं व्यंजना द्वारा सिद्ध वाक्य ही मुहावरा होता है ।

पहेलियों द्वारा बुद्धि का व्यायाम होता है पहेलियों को बुझौवल भी कहा गया है । इन्हीं पहेलियों को यहाँ "फाली" या "पाल"आड़ना" कहते हैं । फाली का सीधा सादा अर्थ हैकि प्रश्न कर्ता के प्रश्न का शालीनता से उत्तर देना । बुद्धि परीक्षा के अनुपम साधन के रूप में ये व्यवहृत होती हैं । भावनाओं से इनका सम्बन्ध नहीं।मस्तिष्क के कौशल से उत्पन्न होकर ये मस्तिष्क पर ही प्रभाव डालती है ।

चुटकुले कहानी का रोचक संक्षिप्त रूप होता है ।

सूक्तियों में ज्ञान मार्ग दर्शन की बातें भरी रहती हैं । इन्हें इसीलिये तो इन्हीं उक्तियां कहा गया है । " सूक्तियों में ग्रामीण व्यक्तियों का शताब्दियों के अनुभव का निचोड़ एवम् सार भरा होता है । ये खेल व्यापार के मामले में तथा पशु पक्षी सम्बन्धी यथोचित मार्ग दर्शन कराती है । और गुरु मन्त्र का काम देती है ।"[1]

यदि रचना की दृष्टि से बांगरू लोक साहित्य का वर्गीकरण किया जाये तो इसके निम्न दो वर्ग बनते हैं :-

1- गद्य:- इसके अन्तर्गत सभी कहानियां और चुटकले आ जाते हैं ।

2- पद्य:- इसके अन्तर्गत सभी प्रकार के गीत, पंवारे, कथात्मक गीत और लोकोक्तियां आ जाती हैं ।

3 तीसरा वर्ग भी बनाया जा सकता है जिसमें पद्य एवं गद्य मिश्रित कहानियां, सांग, नौटंकी आ सकते हैं ।

आश्रय के आधार पर बांगरू लोक साहित्य के तीन वर्ग बनाये जा सकते हैं :-

I- बाल साहित्य

II- युवक साहित्य

III - वृद्ध साहित्य

प्रथम वर्ग में खेल कूद से सम्बन्धित लोरियां, झांकी, आदि खेलों के गीत नाना-दादी द्वारा कही जाने वाली कहानियां आती हैं ।

- -

द्वितीय वर्ग में वह समस्त साहित्य आयेगा जो यौवन की उद्दाम भावनाओं से लबालब है। संयोग, वियोग एवम् सरस गीतियाँ इस वर्ग में अतिप्रिय होती है। आल्हा, साके, पवाँरे, सांग, नौटंकी, ये सब युवक युवतियों के कण्ठहार होते हैं। नवयुवकों और युवतियों के कण्ठ में जवानी की उमंग भरने वाले प्रेम और शृंगार के रस गीत पूर्वजों के सच्चे अनुभवों को बताने वाली कहावतें, बुझौवलें, खेती की कहावतें, ज्ञानवर्धक पाठ इसमें आते हैं।

तृतीय वर्ग में भजन, हरजस, गोपी चन्द भरथरी आदि गीत और गाथाएं आते हैं। संसार के सुख भोगने के बाद शान्ति एवं पवित्रता की पिपासा-मिश्रित, नीतिपरक उपदेशात्मक कहानियाँ, कहावतें, (लोकोक्तियाँ) का खजाना वृद्ध एवम् वृद्धाओं द्वारा सभी को निरन्तर रूप से लुटाया जाता है।

लिंग भेद के अनुसार यदि लोक साहित्य का वर्गीकरण किया जाये तो उसके दो वर्ग बनते हैं:-

I- पुरुषों का साहित्य (बालकों का साहित्य भी इसमें आ जायगा)

II- स्त्रियों का साहित्य (बालिकाओं का साहित्य भी इसमें आ जायगा)

पुरुषों के साहित्य में लोकगीतों का प्रायः अभाव रहता है। विरह भी अपवाद रूप में होता है पुरुषों का साहित्य लोक गाथाओं, बारहमासा होली, (फाग) आदि तक सीमित रहता है। वृद्धावस्था में भजन, हरजस, पहेलियाँ, कहावतें आदि आलापों के भिन्न भिन्न वाद्य के खेल आदि के

- -

मनोरंजक गीत होते हैं ।

स्त्रियों के साहित्य में गीतों की विविधता मिलती है । जो जिन्दगी के प्रत्येक पहलू का स्पर्श करती है । उनमें शृंगार एवं करुण रस की अधिकता होती है और बहुत ही अवसाद और रस स्त्रियों के साहित्य में विशेषकर गीतों में करुणामयी सागर उमड़ता है । बालिकाएं खेलों एवम् लालन के गीतों से अपना मन बहलाती है ।

ऊपर बांगरू लोक साहित्य के विविध दृष्टिकोणों से वर्णन करते आ चुके हैं । अब इस साहित्य की संक्षेप में ऐसी रूपरेखा देने का प्रयास किया जा रहा है । जिससे कि पाठक इस पर दृष्टि डालकर बांगरू लोक साहित्य के स्वरूप का कुछ आकलन कर सकें ।

बांगरू लोक साहित्य का वर्गीकरण अध्ययन की सुविधा के लिए निम्नलिखित चार वर्गों में किया जा सकता है ।

1- लोक गीत 2- लोकगाथा 3- लोक कथा 4- प्रकीर्ण

बांगरू लोक साहित्य का वर्गीकरण

लोकगीत	लोक कथा (गाथा) (कथात्मक गीत)	लोक कहानियां	प्रकीर्ण साहित्य
- संस्कार गीत 1- जन्म 2- विवाह 3- मृत्यु - कृषि गीत - देवी देवता व्रत त्योहार के गीत - ऋतु गीत - क्रीड़ा गीत नृत्य, अनुभूति, तर्क, एवम संवाद प्रधान गीत - बालगीत - राजनीति सम्बन्धी - अन्य	- प्रबन्धात्मक (कथात्मक गीत) - स्वांग गीत भगत या नौटंकी गीत		- कहावतें (लोकोक्तियां) - चुटकले, - मुहावरे - पहेलियां - सूक्तियां

1- <u>बांगड़ लोकगीत</u> :- लोक गीतों में विभिन्न अवसरों, ऋतु, शृंगार, देवी देवताओं, हास्य आदि प्रकार के गीतों के गीतों का समावेश है। कहीं कहीं तो इन गीतों में उच्च कोटी का कलात्मक परिष्कारयुक्त वचन, संगीत की मधुरता और शैली का निखार पाया जाता है। लोक गीतों में सहजता, निश्छल भोलापन, नि:संकोच अभिव्यक्ति, सांकेतिकता, नाटकीय, चमत्कार और सरसता के तत्व गायक की अनुभूति के साथ उसकी सृजनशीलता रूपी भट्ठी की तेज आंच और व्यापक तपन के द्वारा स्वत: उभरते हैं। लोकगीतों में समरसता, समानता और अनुभूति के उत्कर्ष से सर्जित अभिव्यक्ति की सहजता के चिन्ह पहचाने जाते है।"[1] अनुभूति के भीतर से उगती हुई कला ही वस्तुत: सच्ची गीति कला है। जो लोकगीतों में पूरित है। :- देखिए -

मेरी मेहंदी के चौड़े चौड़े पात रे बीरा वारी वारी जां
मैं ते पीसूंगी चकले के पाट रे बीरा वारी वारी जां
मैं ते घालूंगी चिरणी के दूध रे बीरा वारी वारी जां
मैं ते ल्याऊंगी-2---के हाथ रे बीरा वारी वारी जां [2]

यह रहा उदाहरण अत: गीति का प्राण अनुभूति ही तो है। इसी प्रकार एक से एक निराली सूझबूझ आपको बांगड़ लोकगीतों में दृष्टिगोचर होगी।

बांगड़ लोकगीतों को हम प्राप्त सामग्री के तथ्यों की जानकारी जान के निम्नलिखित ढंग से बांट सकते हैं। वैसे तो इनका क्षेत्र व्यापक है।

- -

1- हरियाणा के लोकगीत सांस्कृतिक मूल्यांकन लेखक डा० भीम सिंह 1981 पृष्ठ 9

2- कोई नाम

1- संस्कार सम्बन्धी गीत :-

(क) पुत्र जन्म के सम्बन्ध में गाये जाने वाले अनेक गीत ।

(ख) विवाह के विभिन्न अवसरों पर गाये जाने वाले गीत ।

(ग) मृत्यु समय गाये जाने वाले गीत ।

2- कृषि गीत:-

धरती, फसल, गाय, खेती, (बैल, कपास, बाजरा आदि) से सम्बन्धित गीत ।

3- देवी देवता व्रत त्योहार आदि के गीत :-

देवी देवता,जागरता, तीर्थ-व्रत त्योहार, पर्व आदि अवसरों के गीत ।

4- ऋतु गीत :-

सावन, बारहमासा, मल्हार, आश्विन,(सांझी) कार्तिक स्नान फागुन, आदि में गाये जाने वाले गीत।

5- क्रिया गीत :-

(नृत्य, अनुभूति, तर्क और संवाद प्रधान गीत ।

6- सामाजिक राजनीति सम्बन्धी गीत :-

राजनीति प्रभाव के गीत

8- अन्य गीत :-

बचे हुवे गीत ।

उपरोक्त श्रेणियों की पूरी व्याख्या निम्नलिखित है :-

1- संस्कार सम्बन्धी गीत :-

(क) पुत्र जन्म के गीत :- इनमें दम्पति की रति क्रीडा, गर्भिणी,स्त्री

- -

की स्थिति ननद भाभी की शर्त, गर्भिणी की इच्छा, प्रसव पीड़ा, दाई
[illegible] बिदाई, (बेमाता) छटी, जच्चा, पीला, आदि अनेक प्रकार के गीत
गाये जाते है ।

(ख) <u>विवाह के गीत</u> :- इनमें गीतों की भरमार रहती है । विवाह के
भिन्न भिन्न अवसरों पर गाये जाने वाले गीतों में श्रृंगार तथा हास्य रस के
गीत सम्मिलित होते है । लगन, भात, बाना , रतजगा, हल्दी तेल,
बनड़ा, बनड़ी, दुकाव, फेरे, सीठने, लड़की विदाई आदि के गीत आते
हैं ।

(ग) <u>मृत्यु संस्कार के गीत</u>:- यहां शोक पूर्ण गीतों का ही वर्णन होता है ।

2- <u>कृषि गीत</u>:- इसमें भूमि के महत्व, खाद की महत्ता, बीजों की
किस्म, फसले बोने का समय, फसले काटने का समय, धरती माता, गाय,
बैल, ईख, कपास, बाजरा आदि फसलों के सुख दु:खो गीत ।

3- <u>देवी देवताओं, व्रत एवं त्योहारों के गीत</u> :- वर्ष के बारह महीनों के
दौरान मनाये जाने वाले बागड़ के सभी तीज त्योहारों, पर्वों, व्रत आदि
के गीतों का वर्णन वर्णित है - सेढल माता, शीतला माता, देवी, हनुमान,
गूगा, कृष्णावतार, दुबड़ी, तुलसी, गंगा स्नान आदि के गीत गाये
जाते है ।

4- <u>ऋतु गीत</u>:- सावन के गीतों में झूला, तीज, एवम् बारह मासा, मल्हार
एवं अन्य श्रृंगारिक प्रेममयी गीतों की बहार रहती है । फागुण में होली
फाग, आदि मस्ती भरे गीतों की अधिकता रहती है । इसके अलावा इसमें
आश्विन के सांझी के गीत और कार्तिक में पथवारी और कार्तिक स्नान के

- -

भजन और गीतों का भी उल्लेख है ।

5- क्रिया गीत:- इनमें नृत्य, अनुभूति, तर्क, और संवाद प्रधान गीतों को रखा गया है ।

6- बालगीत:- बालक एवम् बालिकाओं के खेल क्रिड़ाओं के गीतों का वर्णन इसमें किया गया है । लोरियां, पलना, खेलने और खिलाने के गीत ।

7- राजनीति प्रभाव के गीत :- इसमें देश प्रेम के गीत, गान्धी जी के विषय में, इन्दिरा गांधी का जीवन वृत, उधम सिंह का बलिदान, और संजय की मृत्यु के गीत है ।

8- अन्य गीत :- सभी बच्चे हुवे गीतों का इनमें वर्णन होता है । जैसे साकिया, दहेज सम्बन्धी, शराबी की पत्नी का दुःख, हास्य व्यंग्य आदि का वर्णन है ।

2- लोक गाथा :- यहां लोक गाथा जिन्हे प्रबन्धगीत या कथात्मक गीत भी कहा जाता है की संख्या भी अत्याधिक प्राप्त होती है । यह आकार में बड़े और इनमें इतिवृतात्मक तत्व प्रधान होता है इनका आधार पौराणिक और ऐतिहासिक प्राय: होता है । इनमें कल्पना और चमत्कारिक अंशों की भी कहीं कहीं परिलक्षित होता है । आल्हाउदल जैसी लोक गाथाएं तो बहुत दूर दूर तक वर्णित हो चुकी है । काल्पनिक लोक गाथाओं में ज्यानी चोर जैसे किस्से हैं । जो ग्रामीण जनता में अति लोकप्रिय है । अनजारा, गोपीचन्द, पूर्ण मल, गुगा, शालादे, निहालदे, हरफूल जाट जुलाणी का कुछ एक प्रसिद्ध लोक गाथाएं है । भूरा बादल के बरहामें और जयमल फत्ता के पंवारे भी इसी के अन्तर्गत आते है ।

- -

बांगड़ सांगों को भी हमने लोकगाथाओं के दूसरे भाग में वर्णित किया है। यह सांग, नौटंकी सोरठ का बहुत प्रचार रहा है। और अब भी सांगों की प्रति दिलचस्पी पाई जाती है। इसकी समृद्धि को बनाने का काम हरियाणा में काफी हुआ है। यहां के सांगों में अपनी कला ही विशेषता है उनकी रागनियों के माध्यम से कही गई उपमा एवं उक्ति बड़ी ही अवसरानुकूल होती है। जिन्हें यहां "अकल के बोल" भी कह देते हैं। पं० दीपचन्द, पं० लख्मीचन्द, पं० मांगेराम, राम किशन व्यास, धनपत निदाणा, चन्द्रबादी के सांगों में मनोरंजक प्रधान तत्वों की प्रधानता मिलती है परन्तु इसके उपरान्त जो इनकी रागनियों में अश्लीलता का समावेश होने लगा है 2 वह शिक्षाप्रद की बजाये हानिप्रद ही है।

आज भी यहां के सांगियों को सांग करने के लिये दूर दूर तक बुलाया जाता है देखिए एक उदाहरण :-

मोर पपीहे, कोयल कैसी,
मीठी वाणी बोल्ले।
चिलमक का पाड़ू मारें दूर ते
मेरे जिगर नैं छोल्ले ।।

3- लोक कथा :- लोक साहित्य के अन्तर्गत लोककथाओं का विशेष महत्व है। यह लोक कथाएं लोक जीवन से व्याप्त है। वृद्ध- वृद्धाएं बच्चों को रात्रि में कथाएं सुनाकर उनके मन को बहलाते है। "कल्पित कथा के अन्तर्गत पशुपक्षियों द्वारा नैतिक उपदेश का निरूपण किया जाता है। परियों की कथा में परि, अप्सराओं एवम् लौकिक व्यक्तियों की कथा रहती है। दंत कथाओं में ऐतिहासिक आधार पर आधारित कथाएं आती है जो कि मौखिक परम्परा के क्रम में अनेक नवीन तथ्यों से युक्त हो जाती है। पौराणिक कथा

- -

के अन्तर्गत देवी देवताओं सम्बन्धित कथाओं का समावेश होता है।"[1]

इन लोक कथाओं में निम्नलिखित तत्व पाये जा सकते हैं:-[2]

i- प्रेम का अभिन्न पुट ii- अश्लील शृंगार का अभाव

iii - मानव की मूल प्रवृत्तियों से निरन्तर सम्बन्ध

iv- सुखान्तता v- मंगल कामना की भावनाएं

vi- रहस्य, रोमान्च एवम् अलौकिकता की प्रधानता

vii- उत्सुकता की भावना और viii- वर्णन की स्वाभाविकता।

अतः उपरोक्त विवेचन से हमें बांगर की निम्नलिखित प्रकार की कहानियां मिलती हैं:-

(क) व्रत एवं त्योहारों सम्बन्धी लोक कथाएं :- ये वे कहानियां हैं जो व्रत एवं त्योहारों के मूल एवं मूल्य पर प्रकाश डालती हुई व्रत एवं त्योहारों का अंग बन गई हैं।- करवा चौथ, ग्यास की कथा, सोमवार आदि के व्रतों की कथाएं।

(ख) पौराणिक लोक कथाएं :- धार्मिक देवता के करतब, शिव-पार्वती की उदारता एवं संकट से मुक्ति दिलाके अन्तर्धान होने की अनेक कहानियां हैं।

(ग) साहस तथा शौर्य की लोक कथाएं :- इसमें भूत, राक्षस, (दाने) आदि से मुकाबला करने की साहस एव शौर्य की कथाएँ मिलती हैं।

(घ) चतुराई पूर्ण लोक कथाएं :- यह बड़ी रोचक, मनोरंजक एवम् ज्ञान वर्धक कहानियां होती हैं।

(ङ) उपदेशात्मक लोक कथाएं :- पशु पक्षियों आदि के द्वारा उपदेश दर्शाया जाता है।

1- लोक गीतों की सांस्कृतिक पृष्ठ भूमि लेखिका चिन्ता वोहरा 1972 पृष्ठ 53

2- लोक गीतों की सांस्कृतिक पृष्ठ भूमि लेखिका चिन्ता वोहरा 1972 पृष्ठ 54

(व) <u>मनोरंजन प्रधान एवम् कौतूहल पूर्ण लोक कथाएं</u> :- उपदेश और मनोरंजन तत्वों का इन कहानियों में कम या अधिक समावेश अवश्य पाया जाता है परन्तु मनोरंजन प्रधान कहानियां भी उपलब्ध होती है जिनमें कौतूहल पूर्ण बातें रहती है। इसमें परियों, दानें, आदि की कहानियां आती है।

6- <u>प्रकीर्ण साहित्य</u> :- लोकोक्तियां (कहावतें) चुटकुले, मुहावरे, पहेलियां सूक्तियां आदि को प्रकीर्ण साहित्य के अन्तर्गत रखा गया है।

कहावतों में यहां की जन जाति की अवस्था, सभ्यता, आचार विचार और जीवन दर्शन का अध्ययन किया गया है। बालक, स्त्रियां और पुरुष इन सब की बातचीत में इनका प्रयोग स्वाभाविक रूप से मिलता है। इन लोकोक्तियों में यहां के लोगों का वर्षों का चिरसंचित अनुभव है।

चुटकुले कहानी के अतिलघु खण्ड होते हैं जिनमें मनोरंजन का समावेश होता है।

मुहावरे :- उस वाक्य खण्ड को कहते है जिसकी उपस्थिति से कथन की रोचकता और सफलता में वृद्धि मिलती है जिस प्रकार "भात भरणा" आदि।

पहेलियों को यहां "फली" या "पढल" कहा जाता है। लड़कों के मनोरंजन के लिए इसका अधिक प्रयोग होता है, बुद्धि परीक्षा, बुद्धि कौशल, होने के कारण "कौतूहल" की नींव की पहेली की आधारशिला है। चमत्कृति इनका प्रधान गुण है। पूर्वपक्ष बताकर उत्तर पक्ष की आकांक्षा रहती है।

यथा :- एक जगह में बांस - बसोली एक जगह में कुंआं।
एक जगह में आग लागी एक जगह में धुम्मां।।
पाठक विस्मता में पड़ जाता है।

यहां दोहा, भजन, ख्यालदेवा तथा अन्य प्रकार की सूक्तियां प्राप्त है।

- -

"भाग ग"

1- अद्यावधि बांगरू लोक साहित्य का समीक्षात्मक विवरण :-

अद्यावधि बांगरू लोक साहित्य का समीक्षात्मक विवरण यहां उपलब्ध लोक साहित्य सम्बन्धि सामग्री के आधार पर प्रस्तुत है । सर्वप्रथम "हरियाणा का इतिहास पुस्तक की समीक्षा करने से यह स्पष्ट होता है कि इसमें हरियाणा की ऐतिहासिक वर्णन में इतिहास की पृष्ठभूमि की बजाय राजनीतिक उल्लेख एवम् राजनीतिक आंकड़ों की व्याख्या अधिक की गई है । साहित्य की दृष्टि से इस पुस्तक का कोई विशेष महत्व दृष्टि-गोचर नहीं होता ।

यहां उपलब्ध कुछ भाषा सम्बन्धि पुस्तकों में सर्वप्रथम "बांगरू का संरचनात्मक अध्ययन है जो अंग्रेजी माध्यम की पुस्तक है और अमेरिकन पद्धति पर लिखी गई है इसमें विशेष रूप से बांगरू का अध्ययन रखते हुए भी पश्चिमी हिन्दी का मूल ढांचा ही स्वीकारा गया है । और यह भाषा शास्त्र के आधुनिक नियमों पर लिखी गई है । हिन्दी में अभी तक इस विषय पर कोई पुस्तक नहीं है । प्रस्तुत प्रयास में डा० जगदेव सिंह का उक्त व्याकरण तथा कामता प्रसाद के व्याकरण को मानदण्ड बनाया गया है । मुहावरे एवम् लोकोक्तियां सांगों से उद्धृत की गई हैं ।

" हरियाणवी का उद्गम एवम् विकास " में हरियाणा का नामकरण व्युत्पत्ति और उसकी सीमाओं के साथ-साथ यहां का अन्य बोलियों की शब्दावली का अध्ययन तथा व्याकरण सम्बन्धी अन्य समस्याओं की पूर्ण

- -

1- बांगरू का संरचनात्मक अध्ययन लेखक डा० जगदेव सिंह 1970

रूप से व्याख्या की गई परन्तु लोक साहित्य की दृष्टि से केवल हरियाणा की व्युत्पत्ति और व्याकरण आदि सम्बन्धी सामग्री भी सहायक सिद्ध हो सकती है बांगरू के संरचनात्मक अध्ययन के पश्चात जो पुस्तक बांगरू के भाषा सम्बन्धी प्रकाश में आई वह " बांगरू बोली का भाषा शास्त्रीय अध्ययन" है।"[1] इसमें बांगरू बोली का ध्वनीय, पदीय, और वाक्यीय संरचना पर अध्ययन उपलब्ध है और साथ ही बांगरू के प्रत्यय, उपसर्ग, समास तथा शब्द समूह पर भी अपेक्षित विस्तार से चर्चा की गई है। यह पुस्तक डा० नानक चन्द शर्मा की "हरियाणवी का उद्गम एवम् विकास"[2] का ही विकसित एवम् आधुनिक रूप है। क्योंकि इसमें शर्मा जी ने पहले खण्ड में हरियाणवी की ध्वनियों पर विचार किया गया और दूसरे में रूप तत्व - संज्ञा सर्वनाम लिंग, वचन उपसर्ग, प्रत्यय आदि पर अध्ययन किया गया है। इसमें मुहावरे लोकोक्तियां का भी कुछ संकलन है। भाषा सम्बन्धी पुस्तकों में भाषा विभाग हरियाणा द्वारा प्रकाशित "हरियाणा की उपभाषाएं"[3] पुस्तक में भिन्न भिन्न लेखकों द्वारा बांगरू एवम् उसकी अन्य बोलियों- अहीरवाटी, मेवाती, बागड़ी और शेखावटी, तथा कौरवी की सामान्य जानकारी, क्षेत्र, बोलने वालों की संख्या तथा संस्कृति पर भाषा के नमूने शब्दावली, लोकगीत के नमूने आदि पर सामग्री प्राप्त है जिसमें संक्षिप्त वर्णनात्मक सामग्री उपलब्ध है। कौरवी जो यहां की सीमावर्ती भाषा है बाकी हरियाणा में बोलने वाली उप भाषाएं है।

1- बांगरू बोली का भाषा शास्त्रीय अध्ययन लेखक डा० शिव कुमार खण्डेलवाल 1980

2- हरियाणवी का उद्गम एवं विकास लेखक डा० नानक चन्द शर्मा 1968

3- हरियाणा की उपभाषाएं सम्पादित डा० साधु राम शारदा प्रकाशित भाषा विभाग हरियाणा।

लोकगीत विषयक उपलब्ध सामग्री में पांच पुस्तकें हैं जिनमें तीन पुस्तकों का शीर्षक तो " हरियाणा के लोकगीत" नाम से अभिहित है[1]। और इन दो संग्रहों पुस्तकों में अपने अपने समयानुसार गीतों का संकलन मात्र है। एक पुस्तक को "हरियाणा के लोक गीतों का संग्रह"[2] नाम दिया है। जो कि संकलित है अन्य दो पुस्तकों से एक हरियाणा लोकगीतों की धरती सांस्कृति मूल्यांकन"[3] है जिसमें यहां के सामाजिक पर्वोत्सव, पारिवारिक संस्कारों एवम् ऋतुओं के गीतों को यहां के लोक जीवन, संस्कृति, समाजशास्त्र, इतिहास, मनोविज्ञान कला, धर्म इत्यादि के विविध माध्यमों से जांचने का प्रयास किया गया है। अन्य पुस्तक "हरियाणा लोकगीतों की धरती"[4] में बागड़ी जन्म, विवाह आदि गीतों के साथ साथ बागड़ी गीतों का संक्षिप्त व्याख्या सहित संकलन मिलता है कुछ एक फागण, सावण, कार्तिक, आश्विन मासों के गीतों के साथ रसात्मक गीतों का भी संकलन है ।

लोकगाथाओं सम्बन्धी "हरियाणा लोकगाथाएं"[5] नामक पुस्तक उपलब्ध है जिसमें हरियाणवी गीतात्मक आख्यानों का जिसमें वीरगाथाएं, जन आख्यान एवं प्रेमगाथा आदि का व्याख्यात्मक वर्णन किया गया है ।

लोक नाट्य सम्बन्धी उपलब्ध सामग्री में " हरियाणा लोक नाट्य कथा

1- हरियाणा के लोकगीत - एम.एस. रंधावा और देवी शंकर प्रभाकर 1953

2- हरियाणा के लोकगीत - संकलित डा० नानक चन्द शर्मा और सोमदत्त बंसल भाषा विभाग हरियाणा ।

3- हरियाणा लोकगीतों का संग्रह लेखक मादान हरियाणवी

4- हरियाणा के लोकगीत सांस्कृतिक मूल्यांकन लेखक डा० भीमसिंह 1981

5- हरियाणा लोकगीतों की धरती लेखक देवी शंकर प्रभाकर 1974

रंगमंच कथा[1] " इसमें इसके नाम से अनुरूप भी कथा सम्बन्धी अध्ययन दृष्टिगोचर होता है । एक अन्य सांग सम्बन्धी पुस्तक " हरियाणा के सूर्य कवि लख्मीचन्द[2] " में केवल लख्मीचन्द के सांगों में प्रेम तत्व, गुरु भक्ति आदि तत्वों की व्याख्या की गई है । जो बाकि बाकी सांगियों से सांगों के अध्ययन के प्रति पक्षपात का रवैया प्रस्तुत करता है ।

लोक कथाओं सम्बन्धी " हरियाणा लोक कथाएं तथा कहावतें[3] " में यहां की लोककथाओं का संक्षिप्त परिचय एवं उनकी विशेषताओं का विवेचन करने का प्रयास किया गया है परन्तु तात्विक पक्ष कमजोर है ऐसा प्रतीत होता है कि संकलन पर करना अधिक ध्यान रहा है ।

प्रकीर्ण साहित्य सम्बन्धी सामग्री में "हरियाणवी लोकोक्तियां शास्त्रीय विश्लेषण[4] " में बागड़ लोकोक्तियों का सांस्कृतिक, भाषा वैज्ञानिक एवम् काव्य शास्त्री विवेचन और विश्लेषण किया गया है । इसमें लोकोक्तियों का सांस्कृतिक एवम् ऐतिहासिक विश्लेषण इस प्रस्तुती द्वारा यहां की संस्कृति को ऋग्वेदिक तथा सिन्धु घाटी की परम्परा का ही विकसीत सांस्कृति रूप दर्शाने का प्रयास किया है ।" हरियाणा [illegible] लोक कथाएं एवम् कहावतें[5] में यहां की कहावतों का संकलन मिलता है । वह भी संक्षिप्त रूप में।

"हरियाणवी "सांगों का वस्तुपरक विश्लेषण" पुस्तक में यहां के सांगों

- -

1- हरियाणा लोक नाट्य तथा रंग मंच कथा लेखक देवी शंकर प्रभाकर 1976
2- हरियाणा के सूर्य कवि लख्मीचन्द लेखक कृष्णचन्द्र शर्मा 1981
3- हरियाणा की लोक कथा तथा कहावतें भाषा विभाग हरियाणा
4- हरियाणवी लोकोक्तियां शास्त्री विश्लेषण प्रो० जय नारायण वर्मा 1972
5-

से वस्तुपरक विश्लेषण का अध्ययन किया गया है । इस पुस्तक" हरियाणवी सांगों का वस्तुपरक विश्लेषण" [1] में कई तथ्य अछूते रह गये हैं और कुछ एक तथ्यों का मूल्यांकन संक्षिप्त रूप में दर्शाया गया है । क्योंकि वाचिक सांग साहित्य तो बहुत व्यापक एवं विस्तृत है ।

यहाँ उपलब्ध साहित्य सम्बन्धी कुछ अन्य पुस्तकें भी प्राप्त होती हैं जिनमें "हरियाणा एक सांस्कृतिक अध्ययन" नामक दो पुस्तकें हैं [2]। इनमें से एक में हरियाणवी सांस्कृतिक एवम् ऐतिहासिक स्थानों का इतिवृत्त जुटाने का प्रयास किया गया है । और दूसरी में इस प्रदेश की भौगोलिक एवम् ऐतिहासिक परिस्थितियों के विवेचन के साथ साथ पुरा तात्विक तथा कुछ एक ऐतिहासिक स्थानों का संक्षिप्त जिक्र किया गया है । इस प्रकाशन में विभिन्न लेखकों ने हरियाणा की संस्कृति के विभिन्न पहलुओं पर लेखों का संचित संकलन मिलता है । कुछ सूफी साधकों और हरियाणवी काव्यपरम्पराओं के बारे कुछ लेख उपलब्ध हैं । " हरियाणा के पथ प्रवर्तक सन्त" [3] पुस्तक में सन्तों का संचित एवम् आकर्षक विवरण और उनका विवेचन शास्त्रीय दृष्टिगोचर होता है परन्तु लोक साहित्य की दृष्टि से यह अध्ययन पूर्ण नहीं माना जा सकता ।" हरियाणवी गीता" [4] पुस्तक में तो केवल लेखक ने अपनी बुद्धि अनुसार गीता के श्लोकों के भावों को हरियाणवी में रूपान्वित करने का प्रयत्न किया है परन्तु यह पुस्तक न तो गाथाओं में रखी जा सकती और न ही साहित्य की दृष्टि से महत्व ही रखती है ।

1- हरियाणवी सांगों का वस्तुपरक विश्लेषण भाषा विभाग हरियाणा द्वारा प्रकाशित
2- हरियाणा एक सांस्कृतिक अध्ययन लेखक -देवी शंकर प्रभाकर 1974
2- हरियाणा एक सांस्कृति अध्ययन भाषा विभाग हरियाणा द्वारा
3- हरियाणा के पथ प्रवर्तक सन्त भाषा विभाग हरियाणा द्वारा ।
4- हरियाणवी गीता लेखक मानक चन्द शर्मा

2- शोधार्थी के अध्ययन पक्ष का संक्षिप्त विवेचन और वर्तमान विषय पर शोधार्थी की दृष्टि :-

उपर्युक्त शोधावधि बांगड़ लोक साहित्य का समीक्षात्मक अध्ययन करने पर इस तथ्य की पुष्टि हो जाती है कि उपलब्ध सामग्री बांगड़ के समूचे एवं सर्वांगपूर्ण लोक साहित्य का वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत नहीं कर सकता ।

बांगड़ में उपलब्ध लोक साहित्य सम्बन्धी सामग्री की समीक्षा करने से यह बात भी स्पष्ट हो जाती है कि अभी तक विद्वान एवं कार्यकर्ताओं का संचयन ही एक मात्र लक्ष्य रहा है । लोक गीतों सम्बन्धी संग्रह तो यहां काफी संख्या में प्राप्त होते हैं और उनमें भी एक रूपता (समान सामग्री) का बाहुल्य है । विविध सामग्री का अभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है । लोकगाथाओं एवं लोक कथाओं सम्बन्धी लिखित संचयका अभाव भी पूरी तरह खटकता है । इसके साथ साथ विवेचनात्मक अध्ययन का अभाव भी लक्षित होता है ।

प्रकीर्ण साहित्य सम्बन्धी कहावतों के अध्ययन को छोड़ कर पहेलियां चुटकले, मुहावरे एवं सूक्तियों का संचय नाम मात्र है। डा० शंकर लाल यादव के इस प्रदेश सम्बन्धी लोक साहित्य के अध्ययन के अस्तित्व को नकारा नहीं जा सकता । इस पुस्तक का नाम" हरियाणा" प्रदेश का लोक साहित्य" है । इस अध्ययन का अपना एक विशेष स्थान है जितना कार्य उन्होंने इस क्षेत्र में किया है उसमें लोक साहित्य की विभिन्न विधाओं पर कई वर्ष पूर्वप्रकाश डाला गया है ।

- -

समय के बड़ी तेजी से बदलता जा रहा है । इसके साथ मनुष्य प्राचीन परम्पराओं की जटिलता को पीछे छोड़ता जाता है और आस्थाएं कायम रखने के लिये उनका वर्तमान एवम् व्यवहारिक स्वरूप अपनाता जाता है । जो सरल नजर आये । डा० शंकर लाल यादव का शोध प्रबन्ध 23 साल पुराना हो चुका है ।

तत्पश्चात तो समाज नये युग में पदार्पण कर चुका है । जिसे पूर्ण रूपेण वैज्ञानिक युग कहा जाता है । तो यह आवश्यक हो जाता है कि इस परिवर्तन शील समाज की परिवर्तित और जागृत भावनाओं के अनुरूप समय के साथ समन्वय की गई नवीनता में प्राचीनता का स्वरूप दर्शाने वाली सामाजिक, धार्मिक ऐतिहासिक परम्पराओं का शुद्ध एवम् सांस्कृतिक और वैज्ञानिक अध्ययन किया जाए ।

मेरा उद्देश्य बांगरू लोक साहित्य के विविध आयामों का वर्तमान रूप में वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत करना है । क्योंकि बांगरू लोकजीवन में सुरक्षित सम्पूर्ण भावात्मक एवम् सृजनात्मक सामग्री जिसमें विश्वास, मान्यताएं, परम्पराएं, प्रथाएं और रीति रिवाज आती हैं । वहां के मानव के अथाह गहराइयों में निहित बहुमूल्य भाव रत्नों का जिनमें उसके जीवन के उत्साहपूर्ण क्षणों एवम् सुख दुख पूर्ण मन स्थितियों का अत्यन्त स्वाभाविक निरूपण हुआ है । ये भावनाएं ही लोक साहित्य कहलाती हैं और इन्हीं के भिन्न भिन्न आयामों लोकगीत, लोक गाथा, लोककथा, लोकनाट्य [सांग], प्रकीर्ण साहित्य जिनमें कहावतें चुटकले चुटकुले मुहावरे, पहेलियां, सूक्तियां आदि सम्मिलित हैं का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत है ताकि भविष्य में बांगरू लोक साहित्य की विभिन्न दिशाओं पर कुछ वैज्ञानिक अध्ययन के लिये रुचि पैदा हो सके और इस नई दिशा में और अधिक अनुसन्धानात्मक कार्य सम्भव हो । ताकि बांगरू लोक साहित्य सशक्त एवं समृद्धिशाली बन कर हिन्दी साहित्य को नई दिशा प्रदान कर सकें ।

- -

(==========)

द्वितीय अध्याय

बांगरू बोली का ऐतिहासिक एवम् भाषा वैज्ञानिक अध्ययन

1- बांगरू बोली का इतिहास, नामकरण एवम् सीमा क्षेत्र

2- बांगरू का ऐतिहासिक विकासक्रम

3- बांगरू का समीपवर्ती बोलियों से पार्थक्य (समता और भिन्नता)

i- बांगरू और कौरवी

ii- बांगरू और पंजाबी

iii- बांगरू और राजस्थानी

iv- बांगरू और ब्रज

v- बांगरू और केन्द्रीय हरियाणवी

4- बांगरू और समीपवर्ती बोलियों के नमूने

5- बांगरू बोली का लोक साहित्य में विनियोजन

6- लोक साहित्य में प्रयुक्त बांगरू बोली के कुछ कतिपय विशिष्ट शब्द

0----0----- 0

"द्वितीय अध्याय"

बांगड़ बोली का ऐतिहासिक एवम् भाषा वैज्ञानिक अध्ययन

प्रथम अध्याय में विषय प्रस्तुति के साथ साथ बांगड़ लोक साहित्य के वर्गीकरण एवम् उसकी विभिन्न विधाओं की रूपरेखा खींची है। परन्तु इसका लोक साहित्य का सर्वांगीण अध्ययन तभी सम्भव हो सकता है जब इस क्षेत्र के इतिहास का नामकरण तथा सीमाक्षेत्र का सिंहावलोकन किया जाये। इसी उद्देश्य की पूर्ति तथा बांगड़ लोक साहित्य को सुव्यवस्थित तरीके से उल्लेखित करने के लिए भी इस क्षेत्र के ऐतिहासिक एवम् भाषा वैज्ञानिक अध्ययन की आवश्यकता है। अतः यहां हम इन प्रश्नों पर संक्षिप्त परन्तु गंभीरता से विचार प्रस्तुत कर रहे हैं।

1- बांगड़ बोली का इतिहास, नामकरण एवम् सीमाक्षेत्र :-

संसार के इतिहास काल से पूर्व इस भूमण्डल पर लाखों वर्ष बीत चुके हैं। वर्तमान काल से लगभग पचास हजार वर्ष पूर्व पृथ्वी का मान चित्र नितान्त भिन्न था। उत्तरी भारत हिमाच्छादित था। नीचे दल-दल तथा झीलों का जाल था। वर्तमान में जो भूभाग राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, उत्तरप्रदेश, बंगाल, बिहार के नाम से प्रख्यात है वह समुन्द्र तल में था। कभी कुछ काल पश्चात समुन्द्तल इन स्थानों से उतर गया और पृथ्वी पर उभर आया। कहीं कहीं पृथ्वी समुन्द्तल में समा गई। इस तरह असंख्य सहस्र वर्ष बीत गये तथा दक्षिणी भारत जो किसी कालक्रम में द्वीप था - उत्तरी भारत का अंग बन गया।[1]

1- हरियाणा का इतिहास लेखक श्री राम शर्मा तृतीय संस्करण 1974 पृष्ठ 5

हरियाणा का इतिहास नामक पुस्तक में आगे इस प्रकार वर्णन मिलता है कि पाश्चात्य विद्वानों का अनुमान है। कि संसार की प्राचीनतम सभ्यता पांच सहस्त्र वर्ष की है। परन्तु लोक मान्य गंगा धर तिलक ने सूर्य सिद्धान्त के आधार पर यह प्रमाणित कर दिया कि ऋग्वेद में दस सहस्त्र वर्ष पूर्व के कथानक प्राप्त हैं। यह सर्वमान्य प्राप्त हो चुका है अतः इस विषय में सन्देह का कोई स्थान नहीं है।"[1] अतः इस प्रकार हरियाणा (बांगर) के भू भाग का सूर्य सिद्धान्तानुसार अस्तित्व हुआ। इसके सरोवर-गहन वन भी इस बात को सिद्ध करने में सहायक सिद्ध होते हैं। वैदिक काल से रामायण काल तक हरियाणाका यह प्रदेश ब्रह्मावर्त कहलाया। वेदों में सरस्वती और दृषद्वती नदियों का जिक्र आया है।

सरस्वती दृषद् वत्यो देवनद्योर्यदन्तरम्।
तं देव निर्मित देशं ब्रह्मावर्तं प्रचक्षते ।।"[2]

अर्थात सरस्वती और दृषद्वती नदियों के निर्मित देश ब्रह्मावर्त कहलाया और यह प्रदेश कुरुक्षेत्र, पंचाल आदि देशों से अलग और ब्रह्मर्षि देश के साथ का देश है:-

कुरुक्षेत्रं च मत्स्याश्च पंचालाः शूरसेनकाः।
एष ब्रह्मर्षिदेशो वै ब्रह्मावर्तादनन्तरः ।।"[3]

- -

1- हरियाणाका इतिहास लेखक श्रीराम शर्मा तृतीय संस्करण 1974 पृष्ठ 6
2- मनुस्मृति 2·17
3- मनुस्मृति 2·19

यह प्रदेश हरियाणा कहलाया जिसका वर्णन इस प्रकार भी मिलता है :-

सतगुरी हमकूं पाया संतों सत्गुरु हम कूं पाया ।
दिल्ली मंडल देस कहावे हरियाना कहलावे ।
बागड़ जमना मधि विचाले सुखदाई मन भावे ।।
ब्रज और लाहौर मध्य हरियाना सबक विचारो भाई ।[1]

हरियाणा नाम की व्याख्या कई प्रकार से की गई है । हरियाणा का सम्बन्ध शिव, भगवान कृष्ण, इन्द्र महाराज, राजा हरिश्चन्द्र से भी जोड़ा जाता है । ऋग्वेद में इस विषय का एक मन्त्र उपलब्ध है :-

"ऋज्रमुक्षण्यायने रजतं हरयाणे ।
रथं युक्त मसनाम सुषामणि ।।"[2]

" हरियाणा" का अर्थ निरुक्तकार यास्क ने "हरमाणयान" किया है - "नित्यकालमेवाभि प्रस्थितयान:" अर्थात जिस प्रदेश में रथ आदि यान आसानी से हर समय चल सकते हैं ।"[3]

इस प्रदेश का नाम "हरियाणक" विक्रम सम्वत् 1337 के लेख के बोहर (पालम बावली) शिलालेख में, "हरितानक" विक्रम सम्वत् 1373

- -

1- हरियाणे की महिमा नामक गीत लेखक -सन्त जैत राम- सम्वाद पत्रिका विशेषांक 1980 पृष्ठ 33 ।

2- ऋक संहिता 6·2·29·2

3- निरुक्त -नैगम काण्ड अध्याय 9 खण्ड 15 पृष्ठ 529 दुर्गाचार्य की टीका ।

4- जर्नल आफ एशियाटिक सोसाइटी आफ बंगाल खण्ड 43 पृष्ठ 108

के लाडनू {जोधपुर} शिलालेख में,[1] "हरियाणा" विक्रम सम्वत् 1384 के सरबन शिलालेख तथा राजा लखनपाल के तेहरवीं शताब्दी के बदाउ शिलालेख में मिलता है :-

देशोऽस्ति हरियानाख्यः पृथिव्यां स्वर्गसन्निभः ।
ढिल्लिकाख्या पुरी तत्र तोमरैरस्ति निर्मिता ।"

हरियाना नाम का एक देश है जो मानों भूलोक पर स्वर्ग उतर आया है । इस देश में तोमरों की बनाई हुई ढिल्लिका नाम की नगरी है ।"[2] ईस्वी सन् 1863 में हिसार जिला सैन्टलमेन्ट की रिपोर्ट के अनुसार हरियालवन जो बिगड़ कर हरियाणा बन गया ।- {हरिआणक के रूप में मिलता है :-

अस्तीजलो मरेरादो वोहारोस्तदनंतरम् ।
हरिआणक भूरेषा शकेन्द्रैः शास्यतेऽधुना ।।" [3]

1863 की रिपोर्ट के लेखक श्री मुन्शी अमीन चन्द ने "हरिया बन की सम्भावना इस प्रकार की है :-

That prior to the formation of the villages and Town in this wild country, these used to grow a kind of wild wood called Harriban, from which the name Haryana has derived its origin."[4]

- -

1- लाडनू {जोधपुर} शिलालेख से

2- ऐपीग्राफिया इंडिका खण्ड -1 पृष्ठ 93- 95

3- हिसार जिला की बन्दोबस्त रिपोर्ट रिपोर्ट में यह निर्देश है कि यह श्लोक पं० धरमीधर हांसी वाले अपनी पुस्तक " अखण्ड प्रकाश" में लिखा ।

4. Settlement Report Hissar District 1863-64 Page 15.

डा० वासुदेव शरण अग्रवाल ने "अभिरायण" अहीरों का घर से हरियाणा की उत्पति माना है ।[1] इसकी उत्पति " हरियाणा का उद्गम स्थान "शार्याणक से भी मानते हैं ।[2] ओम प्रकाश भारद्वाज हरियाणा की उत्पति "शर्याणा" शब्द से मानते हुए हरियाणा एक सांस्कृतिक अध्ययन के प्रकाशन में प्राक्कथन में लिखते हैं कि ऋग्वेद में कुरुक्षेत्र प्रदेश के निम्न भाग को शर्याणा नाम दिया गया है । एक शर्याणा नामक झील का वर्णन भी आता जिसे टीकाकार महापंडित सायणा कुरुक्षेत्र के निम्न भाग में स्थित मानते हैं । यह ध्यान देने योग्य है कि कुछ समय पहले तक हरियाणा नाम हिसार, जीन्द, भिवानी, रोहतक और पटियाला जिले के कुछ भाग को दिया जाता । यह प्रदेश भी निश्चित रूप से कुरुक्षेत्र का निम्न भाग बनता है जिससे शर्याणा और हरियाणा की भौगोलिक समता स्पष्ट होती है। भाषा की विकास के साथ साथ " श" का " ह" बनना भाषा विज्ञान के अनुसार स्वाभाविक है । सिन्धु का हिन्द तथा तैशायन का टोहाना में विकास इसी प्रकार के उपयुक्त उदाहरण प्रस्तुत करता है । ऋग्वेद का शर्याणा पाणिनि के समय में भी जीवित था । राजनैतिक स्थिति के कारण संस्कृत का इस प्रदेश में ह्रास हुआ तब शर्याणा का अपभ्रंश रूप हरियाणा, हरियाणक नाम

- -

1- हरियाणा प्रदेश का लोकसाहित्य लेखक डा० शंकर लाल यादव पृष्ठ 59

2- हरियाणवी शब्दावली पृष्ठ । और वाने इम्पीरियल गजेटियर आफ इण्डिया खण्ड 13 पृष्ठ 53 ।

एक बार फिर प्रधानता ग्रहण कर गया तथा परिस्थितिवश 1966 में सारे कुरुक्षेत्र प्रदेश के लिए प्रयोग में आया ।"[1] कुरुक्षेत्र का भौगोलिक परिचय सर्वप्रथम तैत्तिरीय आरण्यक में मिलता है :-

> तेषाम कुरुक्षेत्रं वेदिरासीत । तस्यै खाण्डवो दक्षिणार्ध आसीत्
> तूर्घ्नमुत्तरार्धः । परीणज्जघनार्धः । मरव उत्कर ।।[2]

अर्थात दक्षिण की ओर कुरुक्षेत्र की सीमा इन्द्रप्रस्थ अथवा वर्तमान दिल्ली से नीचे तक उत्तर में वर्तमान जगाधारी से ऊपर तक तथा पश्चिम में राजस्थान मरु प्रदेश तक जाती थी । उत्तरपश्चिम में सरस्वती के दूसरी ओर तक इसका विस्तार सर्वविदित है । कुरुक्षेत्र की ये सीमाएं वर्तमान हरियाणा से पूर्ण-रूपेण मेल खाती है जिससे स्पष्ट होता है कि भारतवर्ष का यह भूभाग प्राचीन समय से ही अपने आपमें एक पूर्ण भौगोलिक तथा ऐतिहासिक इकाई माना जाता रहा है ।"[3] इसकी सीमाओं का जिक्र सन्त जैतराम द्वारा किया हुआ है । जिसका वर्णन पिछली पंक्तियों में कर चुके है । "ब्रज और आहिरि मध्य हरियाना समझ पिआरी भाई" आदि मेल खाता है । विषम अंडाकार की आकृति तथा इसकी धुरी उत्तर पश्चिम और दक्षिण पूर्व में स्थित है उत्तरपश्चिम में ये अन्तिम सीमाएं घग्गर है दक्षिण पश्चिम में बागड़ और ढूंढोती का रेतीला क्षेत्र है जो बीकानेर तक है पूर्व में खादर दक्षिण में अहीरवाटी, (गुड़गांवा) दक्षिण पश्चिम

- -

1- हरियाणा एक सांस्कृतिक अध्ययन के प्राक्कथन (लेखक ओम प्रकाश भारद्वाज) (1/1) से

2- तैत्तरीय आरण्यक 1/.1.11

3- हरियाणा एक सांस्कृति अध्ययन के प्राक्कथन (1/11) लेखक ओम प्रकाश भारद्वाज

में शेखावटी, पश्चिम उत्तर में पड़ाधा और उत्तर तथा पूर्व में बांगर ।[1] यमुना नदी पहले सरस्वती नदी में मिलती थी प्रागैतिहासिक काल में सरस्वती के सूख जाने से यमुना गंगा में मिली ।[2] मथुरा नगरी यमुना के तट पर बसी हुई है और उसका अर्द्ध चन्द्राकार रूप था- अर्धचन्द्रप्रतीकाशा यमुना तीर शोभिता ।[3] मथुरामण्डल [ब्रजप्रदेश] के वनों में खादर वन का भी वर्णन आता है ।[4] हरियाणा का एक भाग खादर कहलाता है । इसकी सीमाएं मथुरा मण्डल के खादर वन की सीमाओं से स्पर्श करती है । जो खाण्डव वन के साथ लगता है और अर्धचन्द्राकार मथुरा की परिधि हरियाणा को अपने घेरे में स्पर्श करती है । महाभारत काल से भी पूर्व ही यमुना के दोनों ओर छत स्तत: बस्तियां बस गई थी । यमुना के दोनो किनारे गहरे वन से आच्छादित थे । इसका का नाम खाण्डव वन था कौरवों का राज्य यमुना पर हस्तिनापुर था । हरियाणा के उत्तर में शिवालिक पर्वत माला [शात्वकागिरी] जिसकी के उत्तरी भागों कुरुक्षेत्र तथा उशीनरगिरी, वर्तमान मोरनी का पहाड़ [मयूर गिरी] तथा कसौली [शिवालकागिरी] कहलाते थे ।

1- हरियाणवी का उद्गम एवम् विकास लेखक डा० नानक चन्द शर्मा 1968 पृष्ठ 7

2- जर्नल आफ रायल सोसायटी 1893 पृष्ठ 49

3- हरिवंश पुराण 1/54/60

4- वराहपुराणोक्त मथुरा मण्डल के प्रमुख तीर्थ वराहपुराण पृष्ठ 429

महाभारत तथा वामन पुरान में कुरुक्षेत्र के सात वनों काम्यक वन, व्यासावन, फलकीवन, मधुवन, शीतवन, (सोवन) सूर्यवन आदि का जिक्र भी आता है[1]। इसके अलावा साहित्य में द्वैत वन, शरवन, खाण्डव वन, रोहित्यकारण्य, वैतरथ, पृथ्वन, शालवन, भ्रयाना वन, माहण्ड, उत्पलारण्य आदि वनों का उल्लेख भी मिलता है[2]। इससे साफ जाहिर है कि यह प्रदेश सदैव गहरे वनों से घिरा रहा है और इसके मध्य सरस्वती दृषद्वती तथा आपगा आदि नदियां बहती रही हैं। "आज भी हरियाणा की पश्चिमी सीमा पर सरस्वती तथा दृषद्वती (घग्गर) नदी बहती है।"[3]

आधुनिक हरियाणा कुरुवन प्रदेश का वह भाग है जो कौरवों ने पांडवों को दिया था पाण्डवों ने अपनी राजधानी इन्द्रप्रस्थ (दिल्ली) में बनाई जहां चौहान बांगर नाम का क्षेत्र अब भी है। तथा सुवर्णप्रस्थ (सोनीपत) प्राणिप्रस्थ (पानीपत), व्याघ्रप्रस्थ (बागपत), तलप्रस्थ (तिलपत) आदि बस्तियाँ बसाई यह सब आज भी विद्यमान हैं। इनमें अधिकांश भाग आज बांगर साहित्य के अन्तरगत है। अतः सभी उपरोक्त ऐतिहासिक भौगोलिक परिस्थितियां आदि के परिणाम स्वरूप हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि हरियाणा की उत्पत्ति "शर्याणा" से हुई जो बहुत सार्थक तथा युक्ति संगत नजर आती है तथा ऋग्वेद के शर्याणा से हरियाणा शब्द का उद्भव हुआ जो सांस्कृतिक भी है। उपरोक्त भौगोलिक सीमाओं के प्रमाण भी सार्थक हैं।

- -

1-वामन पुराण अध्याय 34 श्लोक 4 से 7

2-हरियाणा एक सांस्कृति अध्ययन प्राक्कथन (11/11) से लेखक ओम प्रकाश भारद्वाज।

3- वामन पुरान अध्याय 39 श्लोक 6-8

हरियाणाप्रदेश जो दिल्ली से घग्गर नदी के कांठे तक चला गया है।
तीन उपभागों में बंटा हुआ है जिन्हे खादर, बांगड़, बागड़ कहा गया है।
और एक अन्य भाग हरियाणा भूखण्ड कहलाया।"[1] यह प्रदेश सदैव ही
खुशहाल एवम् समृद्धिशाली रहा है जिसके कई प्रमाण मिलते हैं।"[2] यौधेय
की मुद्राओं में भी इसका वर्णन आता है। रोहतक इनकी राजधानी रही है।
नकुल की पश्चिमी दिग्विजय में भी इस प्रदेश के भागों का वर्णन आता है।"[3]

खादर वर्तमान हरियाणा का यमुना के पश्चिमीतट से सटा हुआ जिला करनाल एवम् सोनीपत तहसील तक ही सीमित है। बांगर का अर्थ है- ऊर्ध्व भूमि यानि ऐसी भूमि जो उभरी हुई हो। कदाचित यमुना के खादरों मुकाबले में इसे बांगर की संज्ञा मिली। यह भाग अरब सागर की ओर बहने वाली तथा बंगाल की खाड़ी की ओर बहने वाली नदियों के बीच जल विभाजक का काम देती है। तीसरा भूभाग मूल हरियाणा जिससे वर्तमान हिसार के जिले पूर्व दक्षिण भाग में घग्गर नदी से पूर्व में फैला हुआ है जिसके अन्तर्गत हिसार तहसील का पूर्वार्द्ध, फतेहाबाद का कुछ भाग तथा हांसी तहसील आती है इन तीनों भूखण्डों को क्रमशः हरियाणा कहते है।"[4]

यह प्रदेश का मध्य एवम् धुरी भाग बांगर रहा जो सबसे बड़ा है। बांगर शब्द से ऐसे भूभाग का चित्र हमारे सामने आता है जो रूखा सूखा धन-जन विहीन तथा संस्कृति एवम् सभ्यता से एकदम विपरित रहा हो।

1- हरियाणा प्रदेश का लोक साहित्य ले॰ डा॰ शंकर लाल यादव, पृष्ठ 55
2- "काव्य धारा" राहुल सांस्कृत्यायन पृ. 190

3- महाभारत सभापर्व अध्याय 35

4- हरियाणा प्रदेश का लोक साहित्य लेखक डा॰ शंकर लाल यादव पृष्ठ 55

कुछ काल तक इस इलाके की ऐसी स्थिति रही भी है परन्तु आज कल बांगर धन-धान्य से परिपूर्ण उर्वर भूमिखण्ड के रूप में नहरों से सिंचित प्रदेश है । अतः कहा जा सकता है कि जिस प्रदेश में नदियां कम और नहरों से सिंचाई होती है वह प्रदेश बांगर है । बांगर नामकरण के इतिहास में जो प्रमाण मिले हैं वह सबल प्रमाण तो नहीं है परन्तु जो किंवदन्तियां प्रचलित है उसी को आधार माना जा सकता है । उनमें से कुछ निष्कर्ष इस प्रकार है :-

<u>प्रथम</u> :- यहां अन्तर नदी क्षेत्र[1] में अतिनूतन युग की पुरानी तलछटी पाई जाती है जिसे भांगर कहते हैं ।[2] यह शब्द भांगर ही अपभ्रंश होकर बांगर बना । दूसरे भांग का अर्थ - मादक वस्तु जो English की Bhang से मिलता है जिसका अर्थ भी यही है । यहां भांग उगती रही है तभी तो भांग का क्षेत्र कहलाया है । और भगवान शंकर का यह क्षेत्र है जैसा कि हम ऊपर प्रमाण दे चुके हैं । यहां उन्होंने भांग पीकर नृत्य किया बताते हैं । उन्हें भांग अतिप्रिय रही "भांग रगड़ के पिया शिव कहां में ------ ।" इस पर पूर्णतया चरितार्थ होती है ।

द्वितीय :- यह प्रदेश बांगड़ा, बांगड़ या बांगडू क्षेत्र के भी नाम से जाना जाता है यही बांगड़ा -बांगड़- बांगर बना । बांगर का मतलब टेढ़े मेढ़े वनों का क्षेत्र से लिया गया है । जिस प्रकार हरियाणा को हरि+अरण्य से बना हुआ माना गया है ।(जिसका अर्थ है)- हरि+क्षेत्र

1- नदियों के मध्य का क्षेत्र अन्तर नदी क्षेत्र कहलाया ।

2- हरियाणा एक सांस्कृतिक अध्ययन डा० भीम सिंह लाठर के लेख से पृष्ठ 2

अर्थात हरि का हरियाला जंगल[1] ठीक उसी प्रकार बांगर- वाम्+ अर: = बांगर और फिर बांग+अर: (सन्धि नियमों द्वारा) जिसका अर्थ बांग या बांगा (अर का अरण्य यानि जंगल) इस प्रकार बांगर का अर्थ टेढ़े मेढ़े वेनों वाला जंगल लिया गया। यह महाभारत काल में मथुरा तक भारी जंगल था वर्तमान मथुरा (प्राचीन ब्रज प्रदेश) के उत्तर में गुड़गांवा और अलिगढ़ के भाग है। जो बांगड़ के जंगलों को स्पर्श करते हैं प्रमाण इस प्रकार है।

इत बरहदां उत सोनहद उत सूरसेन को गाम।
ब्रज चौरासी कोस में मथुरा मण्डल धाम।।[2]

<u>तृतीय</u> :- कुछ विद्वानों का मत है कि यह इलाका जंगलों से परिपूर्ण था इसलिये यहां डाकू रहते थे जिसे English के Bang शब्द का Prov.Bangster जिसका अर्थ a veilent person से निकला हुआ बताते हैं क्योंकि Bang भिन्न भिन्न अर्थ इस बात को स्पष्ट करते हैं :-

1. a sudden loud noise (अचानक तेज शोर)
2. Banger (n) slang a sainsage (बांगर)

अर्थात प्रतिष्ठित व्यक्तियों की (वैसे) अस्पष्ट भाषा। यहां इसके समानान्तर बांगर का डांगर और बागर मारना आदिशब्द भी यही स्पष्ट करते हैं। इनकी बोलचाल से यही झलकता है मानो यह किसी को धमका रहे हो। या गाली गलोच दे रहे हों। उनकी बोलचाल में शोर शराबा अर्थात भारीपन या अक्खड़ पन था। जो धीरे धीरे खत्म हो रहा है और सभ्य रूप धारण कर रहा है।

1- हरियाणा के लोकगीत लेखक - एम.एस. रंधावा और देवी शंकर प्रभाकर पृष्ठ 4

2- गुड़गांवा जिले सोन नदी के किनारे का प्रदेश - ब्रज का इतिहास पृष्ठ संख्या 2- 4।

चतुर्थ= बांगड़ का डांगर." बांगड़ मारणा, "बांगड़" शब्द इस क्षेत्र की प्राचीनता की ओर संकेत करता है और बांगर का बोट" बांगर की डोरी" बांगर" शब्द क्षेत्र की सुन्दरता और आधुनिकता का संकेत देता है इन शब्दों से बांगड़ फिर बांगर का प्रचलन से स्पष्ट हो जाता है कि बांगड़ ही अपभ्रंश होकर बांगर बना ।

तृतीय मत में जो हमने इस बात का जिकर कियाहै कि यह अंग्रेजी शब्द बांग से बांगर बना क्योंकि यहां प्राचीनकाल में नहरें व जंगल होने के कारण लोगों की भाषा असभ्य और अखड़ पन लिये हुये थी जो निसन्देह उस समय इस प्रदेश का नाम बांगड़ा प्रचलित रहा होगा और इसके साथ साथ इसे बांगड़ या बांगड़ भी उच्चरित करते होंगे । यहां बागड़ी (बांगड़ी) जाती के जाट रहते थे जिनका मूल स्थान प्राचीन फिरोजपुर का इलाका बताते हैं जो सर पर लम्बे लम्बे बाल रखते थे और उन बालों को गांठ बांध कर रखते थे । उनका स्वभाव कठोर एवं निर्दयता पूर्ण था । उस समय सिंचाई के इस इलाके में साधन न होने के कारण वे धीरे धीरे बांगड़ी जाट इस क्षेत्र को छोड़कर अपने मूल निवास फिरोजपुर में चले गये और अपने पीछे बांगड़, बांगड़ा, बांगड़ी, बांगड़ आदि शब्द छोड़ गये जो इस प्रदेश के नाम से मिल गये । यही बांगड़ नूतन युग में बांगर वेश में प्रचलित हो गया क्योंकि अब यहां के लोग सभ्य और सुशिक्षित हैं । और यहां की भूमि भी खुशहाल है । बांगड़ ही बांगर बना ।

- -

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात और विशेषकर 1961 की नई जनगणना के उपरान्त एक नई चेतना ने जन्म लिया इस चेतना के परिणाम स्वरूप भाषाई चेतना जागी। इसी चेतना के फलस्वरूप 1966 में भाषाई आधार पर हरियाणा का जन्म हुआ। इसकी सीमाएं निश्चित की गई। विद्वानों ने इस प्रदेश की भाषा को विभिन्न नामों से अभिहित किया है। इस प्रदेश की बोली का नाम सबसे पहले डा० ग्रियर्सन ने "लिंग्विस्टिक सर्वे" में दिया बांगरू दिया। "The best general name for it is Bangru"[1]

डा० ग्रियर्सन ने साथ में हरियानी, देसड़ी, जाटू और चमरवा (चमार) आदि नामों का भी उल्लेख किया है। इस प्रदेश की बोली के अनेक नामों का आधार इस प्रदेश में रहने वाली भिन्न भिन्न जातियां एवं क्षेत्र हैं। देसी जाटों की भाषा देसड़ी जो रोहतक में जाटू और दिल्ली के पास चमरवा कहलाई। हरीदेव बाहरी ने इसे अहीरों की भाषा भी माना है। क्योंकि इस प्रदेश में अहीरों और जाटों की संख्या अधिक है।"[2]
डा० नानक चन्द शर्मा ने अपनी पुस्तक में इस प्रकार लिखा है कि डा० सुनिती कुमार चटर्जी ने इस प्रदेश की भाषा को बांगड़ू और हरियानी कहा है।"[3]
डा० धीरेन्द्र वर्मा ने बांगरू के साथ जाटू, हरियानी और सरहदी नाम भी दिए हैं।"[4]

- -

1- Ling Survey of India Vol. IX Part I By George Grieson Page 67.

2- पंजाबी ते लहन्दी लेख, लेखक हरि देव बाहरी भाषा विभाग पंजाब की लेखक गोष्ठी में पढ़ा गया निबन्ध 1958- 1959

3- हरियाणवी का उद्गम एवं विकास लेखक - डा० नानक चन्द शर्मा 1968 पृष्ठ 9

4- ग्रामीण हिन्दी लेखक डा० धीरेन्द्र वर्मा 1950 का परिचय भाग पृष्ठ 19

अयोध्यासिंह उपाध्याय ने बांगड़ (हरियाणा) की भाषा को बांगड़ू नाम दिया[1]। डा० जगदेव सिंह ने बांगरू[2] परन्तु स्थाणुदत्त शर्मा ने इसे हरियाणई[3], डा० नानक चन्द शर्मा ने हरियाणवी, डा० शंकर लाल यादव ने हरियानी माना है।[5]

इनमें से बांगरू, बांगड़ू, हरियानी, हरियाणवी और हरियाणई आदि देशपरक नाम हैं। देसड़ी, चमरवा, जाटू, आदि जाति परक नाम हैं। इसलिये प्रान्त की भाषा को जाति परक नाम देना उचित नहीं है। इन नामों की कोई तर्क मूलक सार्थकता नहीं है। ये जातिगत आधार पर केवल किसी भाषा के आंशिक स्वरूप के द्योतक हो सकते हैं। ऊंचे और शुष्क प्रदेश की भाषा बांगरू कहलाई। हरियानी, हरियाणई और हरियाणवी आदि का स्पष्ट संकेत हरियाणा की भाषा से है "हरियाणी का दूसरा नाम बांगरू भी है। इस भूखण्ड की विशेषता के कारण यहां की बोली का नाम बांगरू दिया गया है। बांगर का अर्थ है शुष्क और ऊंची भूमि" [6] "हरियानी या बांगर हरियाणा राज्य की बोली है।"[7]

- -

1- हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास लेखक पंडित अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध, सम्वत् 1997 पृष्ठ 55
2- "बांगरू की ध्वनात्मक संरचना" लेख डा० जगदेव सिंह भाषा विभाग पंजाब की लेखक गोष्ठी में पढ़ा गया निबन्ध, 1962-63
3- "हरियाणे की भाषा" लेख स्थाणुदत्त शर्मा भाषा विभाग पंजाब की लेखक गोष्ठी में पढ़ा गया लेख, 1958
4- हरियाणवी का उद्भव एवं विकास लेखक डा० नानक चन्द शर्मा, 1968 पृष्ठ 10।
5- हरियाणा प्रदेश का लोकसाहित्य डा० शंकर लाल यादव 1967 पृष्ठ 85.
6- हिन्दी और उसकी विविध बोलियां लेखक प्रो० दीपचन्द जैन, डा० कैलाश तिवारी, 1972 पृष्ठ 87-88।
7- हिन्दी और उसकी विविध बोलियां लेखक प्रो० दीपचन्द जैन, डा० कैलाश तिवारी, 1972 पृष्ठ 51।

हरियाणा राज्य में बोली जाने वाली प्रमुख उपभाषाएं इस प्रकार हैं :- 1- बांगरू 2- मेवाती 3- अहीर वाटी 4- बागड़ी 5- शेखावटी और 6- ब्रज ।

बांगरू का क्षेत्र व्यापक एवं विस्तृत है ।

इसके पश्चिम में राजस्थानी की उप भाषा बागड़ी है । "हिसार जिले की उस सीमा पर जहां बिकानेर का आरम्भ होता है विशुद्ध बागड़ी सुनने को मिलेगी परन्तु ज्यों ज्यों वहां से हिसार की ओर आते हैं । बागड़ी बांगरू से प्रभावित होती है ।"[1]

मेवाती का प्रयोग मुख्य रुप से गुड़गांवा जिले की नूंह, फिरोजपुर झिरका तहसील और रिवाड़ी के दक्षिणी भाग में होता है । यह भी राजस्थानी की एक उपभाषा है । "दक्षिणी सीमा पर मेवाती का बांगरू के साथ मिश्रित रुप पाया जाता है ।"[2]

अहीरवाटी का क्षेत्र महेन्द्रगढ़ जिला, गुड़गांवा जिले की गुड़गांवा तहसील, रोहतक जिले की झज्जर तहसील का दक्षिणी भूभाग, महेन्द्रगढ़ जिला सम्मिलित है । "इस पर मेवाती की बजाय हरियाणवी का प्रभाव अधिक है । यह राजस्थानी और बांगरू के बीच की सन्धि भाषा है ।"[3]

भिवानी जिले की पश्चिमी सीमा पर रहने वाले शेखावटी का प्रयोग करते हैं जो राजस्थानी की एक उपभाषा है । यह बागड़ी नहीं कहलाई जा सकती । हां शेखावटी बागड़ी के निकट अवश्य है ।

- - - - - --- -

1- बांगरू बोली का भाषा शास्त्रीय अध्ययन लेखक - शिव कुमार खण्डेलवाल 1980 पृष्ठ 22

2- हरियाणा की उप भाषाएं - के "भूमिका" के लेख से ।

3- - वही-

ब्रज फरीदाबाद जिले की पलवल तहसील तथा हसनपुर और होडल के आस पास बोली जाती है। "सर्वे के मानचित्र में फरीदाबाद और बल्लभगढ़ को भी बांगरू की सीमाओं में सम्मिलित किया गया है।"[1]

इसी अध्याय के बांगरू का समीपवर्ती बोलियों से पार्थक्य में ब्रज और बांगरू की समता का उल्लेख कियागया है। जो कि इस बात की पुष्टि करता है।

स्थाणुदत्त ने खादरी और जाटू को भी हरियाणा की उपभाषाएं माना है इसीप्रकार नानक चन्द ने केन्द्रीय हरियाणवी को भी स्थान दिया है। परन्तु जब सिंचन की भौगोलिक परिस्थितियों को आधार मान कर हरियाणा के बांगर, बागड़ और खादर तीन भाग किये जाते है। "ये तीनों आधार भूमि को स्थूल आधार मान करके हैं किन्तु इन तीनों भूखण्डों के अतिरिक्त एक अन्य खण्ड भी है जिसे हरियाणा खण्ड कहते है। बांगरू भाषा (बोली) की दृष्टि से खादर, बांगर, और हरियाणा, भूखण्ड ही विशेष महत्व रखते हैं। क्योंकि इन्हीं तीन खण्डों की भाषा का व्यापक और प्रचलित नाम बांगरू है।"[2] इस प्रकार प्राचीन हरियाणा के खादर, बांगर, और हरियाणा ये तीनों भूखण्ड विस्तार की दृष्टि से बांगरू बोली के अन्तर्गत आते हैं।

"हरियाणा की समस्त उपभाषाओं का शुद्ध रूप हिन्दी होने के कारण हिन्दी ही इस प्रदेश की राज काज की भाषा निर्धारित की गई है।"[3] परन्तु हिन्दी प्रदेश के इस विशाल भूभाग में बोली जाने वाली सभी बोलियां

1- हरियाणवी का उद्भव एवं विकास लेखक डा० नानक चन्द शर्मा 1968 पृष्ठ 11
2- हरियाणा की उप भाषायें पृष्ठ 4
3- हरियाणा एक सांस्कृतिक अध्ययन के स्थाणु दत्त शर्मा के "हरियाणा की भाषा - उपभाषायें) के लेख से पृष्ठ 165

हिन्दी के अन्तर्गत आती है । "[1] इनमें से परिनिश्चित हिन्दी को जन्म देने का श्रेय पश्चिम हिन्दी क्षेत्र को है और इस पश्चिमी क्षेत्र की बोलियों में भी इस दृष्टि से सर्वाधिक महत्व दिल्ली की बोली को है । स्वतन्त्रता से पूर्व तक दिल्ली बांगरू भाषीप्रदेश था आज भी नगर को छोड़ कर दिल्ली के ग्रामों में बांगरू ही बोली जाती है ।"[2] क्योंकि दोहान बांगर नामक क्षेत्र आज भी दिल्ली में है जो इस तथ्य की पुष्टि करता है । इस भाषा का नाम ग्रियर्सन महोदय ने बांगरू दिया और यह पश्चिम हिन्दी की एक शाखा है । " हिन्दी की यह बांगरू बोली है-[कोई भी ऊंची एवं सूखी भूमि बांगर के नाम से भूगोल शास्त्र में पुकारी जाती है इस प्रकार बांगर खण्ड कई हो सकते हैं और इन सब खण्डों की बोली बांगरू कहलायेगी जो सम्भवतः समान नहीं हो सकती । इस प्रकार बांगरू नाम अति व्याप्त हो जायेगा ।"[3]

जिस प्रकार बंगाल की बंगाली, गुजरात की गुजराती, पंजाब की पंजाबी बोली कही जाती है उसी प्रकार हरियाणा की हरियाणवी कहलाती है । प्रान्तीयता की वजह से ही हरियाणवी नाम दिया गया है । क्योंकि हरियाणवी ही बांगरू का सभ्य,साहित्यिक एवं सांस्कृतिक रूप है । क्योंकि बांगरू में इस प्रदेश की सभी उपभाषाओं का कहीं प्रचुर मात्रा में और कहीं आंशिक रूप में समावेश अवश्य है । जिसके प्रभाव एवं प्रमाण हम उपर्युक्त वर्णन में कर चुके हैं । वास्तव में बांगरू, उपभाषा, ही इस प्रदेश की भाषा की आत्मा है + जान है । इसको यहां के 70% लोग बोलते हैं ।

1- ग्रामीण हिन्दी बोलियां लेखक डा० हरदेव बाहरी ,1961 पृष्ठ 27

2- बांगरू बोली का भाषा शास्त्रीय अध्ययन लेखक शिव कुमार खण्डेलवाल 1980 पृष्ठ 17

3- हरियाणा प्रदेश का लोक साहित्य लेखक डा० शंकर लाल यादव 1967 पृष्ठ 84-85

बांगड़ (बांगर) प्रदेश की भाषा को बांगड़ कहा गया।[1] जिससे यह बांगड़ से बांगरू बनी। यहां इस प्रदेश में उपलब्ध एक प्राचीन कहावत भी "बांगरू ढांगरू खेव।
अड़े, कड़े, उड़े, सें, कैसे ततपरम खेव।।" भी इस प्रदेश की भाषा बांगरू होने की पुष्टि करती है। जिससे स्पष्ट हो जाता है कि बांगरू में अड़े, उड़े, कड़े आदि शब्दों का प्रयोग होता था जो अब भी प्रचलित है और इस बोली का आधार प्रतीक है। डा० शिवकुमार खण्डेलवाल ने अपने शोध ग्रन्थ बांगरू बोली का भाषा शास्त्री में बांगरू की उत्पत्ति बांगर के साथ सम्बन्ध वाची "ऊ" प्रत्यय लगा कर की है।[2] बांगर उस भूमि को कहा गया है जो प्रायः समतल शुष्क और रेतीली होती है।

सामान्य विस्तार की दृष्टि से बांगरू, सोनीपत, कु.क्षे. जिले का दक्षिणी भाग, करनाल, जीन्द, रोहतक (झज्जर तहसील को छोड़कर), हिसार के पूर्वी भाग, भिवानी जिले के पूर्वोत्तर भाग, फरीदाबाद एवं बल्लभगढ़ तहसील के कुछ भाग आते हैं।

उपरोक्त वर्णित सम्पूर्ण क्षेत्र में बोली जाने वाली बोलियों में भी केवल स्थानीय एवं सीमावर्ती प्रभावों को छोड़कर एकरूपता है। इसकी सम्पूर्ण बोली को बांगरू कहा गया है। केवल उच्चारण भेद दिखाई पड़ता है। फिर भी व्याकरण और शब्दावली सारे क्षेत्र में समान है। उपर्युक्त सारे क्षेत्र की भाषा को बांगरू कहना ही अधिक उपयुक्त है।

1- हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास लेखक पं० अयोध्या सिंह उपाध्याय, हरिऔध सम्वत् 1997 पृष्ठ 59

2- बांगरू बोली का भाषा शास्त्रीय अध्ययन लेखक शिव कुमार खण्डेलवाल 1980 पृष्ठ 27

2. बांगरू का ऐतिहासिक विकास क्रम :-

भारतीय आर्य भाषा भारत की ही नहीं, संसार भर की भाषाओं में सबसे अधिक सशक्त और समृद्ध भाषा है। मात्र भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से ही का इसका महत्व नहीं है अपितु साहित्य (विशेष रूप से प्राचीन साहित्य) की दृष्टि से भी इसका महत्व है। अन्य आधुनिक आर्य भाषाओं की भांति इसके ऐतिहासिक क्रम के साथ बांगरू के इतिहास का सम्बन्ध भी जुड़ा हुआ है।

प्राचीन भारतीय आर्य भाषा की ऐतिहासिक विकासक्रम की दृष्टि से इसका समय 1500 ई० पू० से 500 ई० पू० माना गया है। इस समय की साहित्यिक भाषा वैदिक संस्कृत है। इसी भाषा की प्राचीनतम रचना ऋग्वेद रही जिसका रचना काल 1200 ई० पू० से 900 ई० पू० माना (अनुमानित) गया है। उस समय निश्चित रूप से कोई न कोई लोक भाषा अवश्य रही। वैदिक साहित्यिक भाषा से संस्कृत का विकास हुआ। संस्कृत वैदिक भाषा की अपेक्षा अधिक सरल एवं स्पष्ट थी। "पंजाब की भूमि का उन दिनों विशेष महत्व था। वास्तव में यह भूमि संस्कृति और सभ्यता की केन्द्र थी। विशेषकर बांगरू बोली के क्षेत्र हरियाणा में प्रवाहित होने वाली सरस्वती के किनारे पर स्थित कुरुक्षेत्र का अपेक्षाकृत अधिक महत्व था। संस्कृत के आदि ग्रन्थों की रचना ऋषिमुनियों ने इसी पवित्र नदी के किनारे बैठ कर की थी। अतः स्वाभाविक ही वर्तमान बांगरू क्षेत्र की भाषा विशुद्ध संस्कृत रही होगी।"[1]

1- बांगरू बोली का भाषा शास्त्रीय अध्ययन - लेखक शिव कुमार खण्डेलवाल 1980, पृष्ठ 23.

ईसा की पांचवी -छटी शताब्दी के पूर्व पाणिनि ने संस्कृत के आदर्श रूप का गठन किया और इस प्रकार पाणिनि की अष्टाध्यायी ने संस्कृत को स्थिरता प्रदान की । उसके साथ और दूसरी जन (लोक) भाषायें भी प्रचलित थी । संस्कृत के नियम बद्ध करने पर यह भाषा (संस्कृत) भी जन साधारण के व्यावहारिक दृष्टिकोण से कठिन होती गई ।

<u>प्राकृत काल</u> :- जिस प्रकार छान्दस भाषा में अपने समय की देशी भाषाओं के सम्पर्क में आकर संस्कृत का रूप धारण किया उसी प्रकार संस्कृत भी आगे चल कर अपने समय की देशी भाषाओं के सहयोग से प्राकृत के रूप में ढली ।

अर्थात संस्कृत के उपरान्त भाषा के विकास में जो परिवर्तन दिखाई दिया जाने लगा उसे प्राकृत नाम दिया गया । प्राकृत का उद्भव संस्कृत से ही है । यह तब से जनता का स्वाभाविक वचन व्यापार है अतः जिसमें व्याकरण आदि नियमों का बन्धन नहीं होता । प्राकृत को भाषा के अध्ययन की दृष्टि से तीन कालों में विभाजित किया गया है।-

I- प्रथम प्राकृत - 500ई० पू० से 100ई० तक ।
II- द्वितीय प्राकृत - 100 ई० से 500 ई० तक ।
III- तृतीय प्राकृत - 500 ई० से 1000 ई० तक ।

प्रथम प्राकृत में अध्ययन सामग्री के रूप में पालि साहित्य और अशोक के अभिलेख मिलते है । पालि वस्तुतः बौद्ध धर्म मत की प्रचार भाषा थी इसका अन्य नाम मागधी प्राकृत या देशभाषा मिलता है । अशोक ने बौद्ध धर्म के सिद्धान्तों को इसी भाषा में अभिलेखित किया है । पालि के क्षेत्र विस्तार के सम्बन्ध में मतभेद है । बौद्ध इसे मगधी की भाषा मानते है ।[1]

- -

1- हिन्दी और उसकी विविध बोलियां - लेखक प्रो० दीपचन्द जैन, डा० कैलाश तिवारी, 1972 पृष्ठ 18 ।

"उनका तर्क है कि क्योंकि बुद्ध की अपनी भाषा मागधी थी अतः पालि का उस पर आधारित होना स्वाभाविक है।"[1]

वास्तव में इस प्रकार की भिन्न स्थापनाएं यह सूचित करती है कि पालि का प्रसार उप-बोलियों के रूप में इन सभी (विन्ध्यप्रदेश, उज्जयिनी कौशाम्बी और कोसल प्रदेश) प्रदेशों में था। पालि का अधिकांश साहित्य भगवान बुद्ध से संबद्ध है। इसमें कविता, कथा तथा अन्य साहित्य विधाएं विकसित हुईं फुट कर रूप में छन्द शास्त्र और व्याकरण की भी पुस्तकें मिलती हैं।"[2]

किन्तु विभिन्न प्रकार प्राकृतों के रूपों की पालि के रूपों से तुलना करने पर यह सिद्ध हो जाता है कि वह किसी पूर्वी प्रदेश की भाषा या बोली पर आधारित नहीं है।"[3] "इस विषय में डा० चटर्जी का कहना है कि इस पालि भाषा को गलती से मगध या दक्षिण बिहार की भाषा मान लिया जाता है। वस्तुतः यह उज्जैन से मथुरा तक के भूभाग की भाषा पर आधारित साहित्यिक भाषा थी।"[4] "वैसे पालि मध्य देश की भाषा थी। यह शौरसेनी प्राकृत (पश्चिमी हिन्दी) का पूर्वरूप है।"[5] मध्य देश की भाषा के रूप में पालि भाषा का आधुनिक हिन्दी या हिन्दुस्तानी की भांति केन्द्रीय- आर्यावर्त (उत्तरापथ) देश के हृदय की भाषा थी। अतएव

- -

1- पालि साहित्य का इतिहास लेखक - भरत सिंह उपाध्याय पृष्ठ 26 संवत् 2008

2- हिन्दी और उसकी विविध बोलियां लेखक - प्रो० दीप चन्द जैन, डा० कैलाश तिवारी, 1972- पृष्ठ 18

3- आंगिक बोली का भाषा शास्त्रीय अध्ययन लेखक शिवकुमार खण्डेलवाल, 1980 पृष्ठ 24

4- = वही -

5- = वही -

आसपास से पूर्व-पश्चिम, पश्चिमोत्तर, दक्षिण- पश्चिम आदि के लोग इसे सरलता से समझ लेते थे ।"[1] जिस प्रकार वैदिक तथा संस्कृत भाषाएं मुख्य रूप से पूर्व की न होकर पश्चिम की ही थी । ठीक उसी प्रकार यह भी पश्चिम की ही भाषा थी ।

बांगर (बांगड़) क्षेत्र की पश्चिम हिन्दी के क्षेत्र में आता है इसलिए स्वाभाविक है इस प्रदेश की प्रमुख भाषा पालि रही होगी । हां अन्य स्थानों के समान यहां की लोक बोली में अपना स्थानीय प्रभाव अवश्य रहा होगा ।"[2] बांगड़ का लिखित साहित्य न होने के कारण उस वक्त भी स्थानीय बोली के बारे में ठीक से कहना मुश्किल सा लगता है । परन्तु जिस प्रकार वैदिक के बाद संस्कृत यहां की बोली रही ठीक उसी प्रकार प्राकृत में इस क्षेत्र में पालि का अधिपत्य रहा होगा ।

द्वितीय प्राकृत में प्रचलित भाषा रूपों को प्राकृत कहा जाता है । जिस प्रकार प्राचीन भारतीय आर्य भाषा को सामान्यतः संस्कृत के नाम से सम्बोधित किया जाता रहा है । ठीक उसी प्रकार मध्य भारतीय आर्य भाषाओं के सभी रूप प्राकृत कहलाये । यद्यपि इन प्राकृतों की संख्या को लेकर अनेक मतभेद है । फिर भी प्रमुख प्राकृतें यह है :-

I- शौरसेनी प्राकृत	II- मागधी प्राकृत
III- महाराष्ट्री प्राकृत	IV- अर्धमागधी प्राकृत
V- पैशाची प्राकृत	

- -

1- बांगड़ बोली का भाषा शास्त्रीय अध्ययन लेखक - शिव कुमार खण्डेलवाल 1980 पृष्ठ 24

2- हिन्दी और उसकी विविध बोलियां लेखक - प्रो० दीपचन्द जैन, डा० कैलाश तिवारी, 1972 पृष्ठ 18

साहित्य की दृष्टि से शौरसेनी (शूरसेन जनपद) प्राकृत मथुरा के आस पास की भाषा थी । इसमें गद्य साहित्य की रचना मिलती है । संस्कृत नाटकों में इसका प्रयोग मध्यम श्रेणी के पात्रों में और महिलाओं के संवादों में किया गया । इसका प्राचीनतम रूप हमें अश्वघोष के नाटकों और दिगम्बर जैन मत के सिद्धान्त ग्रन्थों में भी इसका प्रयोग मिलता है । पश्चिमी हिन्दी का विकास इसी से हुआ है । क्योंकि शौरसेनी से ही ब्रजभाषा एवम् खड़ी बोली का विकास हुआ है । सच तो यह है कि पुरातन काल से ही मध्य देश की भाषा ही भारत का सर्वाधिक गौरव पूर्ण स्थान की अधिकारिणी बन कर अन्य भारतीय भाषाओं को प्रभावित करती रही है । यहाँ की भाषा को युग युग से राष्ट्र भाषा होने का गौरव मिलता रहा है ।"[2]

जिस प्रकार पालि मध्य देश की भाषा रही उसी प्रकार उसके बाद शौरसेनी प्राकृत भी इसी प्रदेश की मुख्य भाषा रही । अतः वैदिक भाषा, संस्कृत और पालि की परम्परा को आगे बढ़ाने में शौरसेनी प्राकृत आती है । इसका स्थान मध्यकाल में ब्रज भाषा और आधुनिक युग में खड़ी बोली को प्राप्त हुआ हमारी बांगरू का सम्बन्ध इसी शौरसेनी से है जिसका महत्व स्वतः सिद्ध है ।"[3]

- -

1- हिमवद्विन्ध्ययोर्मध्यं यत्प्राग्विनशनादपि ।
   प्रत्यगेव प्रयागाच्च मध्यदेशः प्रकीर्तितः ।। मनुस्मृति 2/21।

2- बांगरू बोली का भाषा शास्त्रीय अध्ययन - लेखक - शिव कुमार खण्डेलवाल 1980 पृष्ठ 25 ।

3- -वही-

इसके पश्चात् महाराष्ट्री प्राकृत है जिसका मूलस्थान महाराष्ट्र रहा और इसका प्रयोग प- साहित्य में रहा । साहित्य की दृष्टि से यह अत्यन्त समृद्ध और प्रभावशाली प्राकृत रही (शौरसेनी की भांति) मराठी का विकास इसी से माना जाता है । अर्धमागधी का क्षेत्र मागधी और शौरसेनी के मध्य का पड़ता है । पैशाची भारत के उत्तर पश्चिमी प्रदेशों की बोली रही है । इसमें साहित्य नहीं मिलता है मागधी मगध की भाषा रही । इसका प्रयोग संस्कृत नाटकों में नीची श्रेणी के पात्र करते थे । साहित्य में इसका प्रयोग बहुत ही कम है ।

अत: इन प्राकृतों के ऐतिहासिक विकास क्रम का अध्ययन करने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि मध्य देश की भाषा सदैव उत्तर भारत की भाषा पर आधिपत्य जमाये रहा ।

तृतीय प्राकृत, जब जब भी व्याकरणों ने भाषा को अपने कठोर नियमों में बांधा । तब तब भाषा का नया रूप सामने आता गया । जब पाणिनि ने संस्कृत को कठोर नियमों में जकड़ा उसका विकास रुक गया । प्राकृत को व्याकरण के नियमों में बांधा तो उसका विकास ठप्प पड़ गया - वह भी विद्वानों की भाषा बन कर रह गई । क्योंकि साधारण जनता बोल चाल की भाषा में वैयाकरण के इन नियमों की गुलाम बन कर नहीं रह सकी । जब जन साधारण ने अपनी भाषा अपनाई तो उसे अशुद्ध कहा गया । अर्थात प्राकृत और आधुनिक आर्य भाषाओं के मध्य जन्मने वाली जन भाषा का नाम अपभ्रंश दिया गया । अपभ्रंश का अर्थ है - अशुद्ध । इसी अपभ्रंश के आधार पर यह काल अपभ्रंश कहलाया ।

\- -

अपभ्रंश के वर्गीकरण की चेष्टा की गई। वैयाकरणों ने इसके अनेक भेदों की चर्चा की है - नमिसाधु और मार्कण्डेय ने अपभ्रंश को तीन वर्गों में रखा। नमि साधु के अनुसार अपभ्रंश के तीन भेद हैं। - उपनागर, आभीर और ग्राम्य। मार्कण्डेय की संख्या तो तीन ही है परन्तु उसने नाम नाम बदल दिए- नागर, उपनागर तथा व्राचड़। डा० याकोबी ने अपभ्रंश को स्थान-गत आधार पर उत्तरी, दक्षिणी, पूर्वी और पश्चिमी वर्गों में रखा। डा० हजारे ने चार के स्थान पर तीन वर्ग = पूर्वी, दक्षिणी, और पश्चिमी रखा। डा० नामवर सिंह ने इसके दो भेद माने हैं।- पूर्वी और पश्चिमी। डा० उदय नारायण तिवारी उपर्युक्त किन्ही भेदों को स्वीकार नहीं करते।

उनका कहना है कि- अपभ्रंश में जो साहित्य मिलता है उसमें भाषागत भेद बहुत कम है। आधुनिक विद्वानों ने इसीलिये प्रत्येक प्राकृत के आधार पर अपभ्रंश की कल्पना की है। प्रत्येक प्राकृत का एक अपभ्रंश रूप होगा।
जैसे :-

शौरसेनी प्राकृत का शौरसेनी अपभ्रंश,
मागधी प्राकृत की मागधी अपभ्रंश
महाराष्ट्री प्राकृत की महाराष्ट्री अपभ्रंश इत्यादि।"[1]

डा० भोला नाथ तिवारी के अनुसार अपभ्रंश को इस प्रकार बांटा गया है

i- शौरसेनी
ii- पैशाची
iii- व्राचड़
iv- महाराष्ट्री
v- अर्धमागधी vi- मागधी।

- -

1- हिन्दी और उसकी विविध बोलियां लेखक- प्रो० दीप चन्द जैन, डा० कैलाश तिवारी, 1972 पृष्ठ 24

अपभ्रंश के विभिन्न रूपों का विकास आधुनिक आर्य भाषाओं के रूप में प्राप्त होता है । इसमें पश्चिमी हिन्दी की जननी शौरसेनी अपभ्रंश को माना गया है । इसी पश्चिमी हिन्दी एक शाखा बांगरू है । अपभ्रंश तो उकार बहुला है परन्तु बांगरू का रूप आकारान्त है । इसके लिए चटर्जी का विचार महत्वपूर्ण है - उनका कहना है, यह तो आकारान्त पश्चिमी हिन्दी की बोलियों से विकसित तथा प्रथम भारतीय मुसलमानों की पंजाबी भाषा से प्रभावित एक अदृष्ट रूप से निर्मित हुई भाषा थी । क्योंकि अपभ्रंश का प्रसार पंजाब, गुजरात, राजस्थान में निश्चित रूप से हुआ था । " दिल्ली के बाजारों में इसका स्वभावतः ही व्यवहार होता था क्योंकि दिल्ली आकारान्त बोली वाले बांगरू क्षेत्र में है । इसका नाम सर्वप्रथम हिन्दी या हिन्दवी जिसका अर्थ हिन्द या भारत की अथवा हिन्दुओं की भाषा थी।"[1]

उपर्युक्त तथ्यों से प्रथम भारतीय मुसलमानों की पंजाबी भाषा के प्रभाव से आकारान्त हो जाना और बांगरू को सर्वप्रथम " हिन्दी" का नाम प्राप्त करने का गौरव हासिल करना स्पष्ट हो जाता है । हाँ बांगरू का राष्ट्र भाषा होने से वंचित रह जाने का का मुख्य कारण यह दृष्टिगोचर होता है कि इसका लिखित साहित्य का न होना या यूं कहिए कि यदि इसे साहित्यिक रूप में ढाला जाता तो यह हमारे देश की राष्ट्र भाषा होती । क्योंकि आज • हिन्दी के रूप और स्वरूप को संवारने में बांगरू का अप्रत्याशित एवम् महत्वपूर्ण योगदान रहा है ।

इसप्रान्त (हरियाणा) के बनने के बाद निरन्तर बांगरू के रूप और स्वरूप में विकास हो रहा है । बल्कि इसका साहित्य भी निरन्तर वृद्धि कर रहा है । अब इसका रूप मौखिक नहीं रहा - बांगरू का लिखित रूप भी उत्तरोत्तर वृद्धि की ओर अग्रसर है और पड़ोसी राज्यों की भाषाओं की भांतिइस इसका भी साहित्यिक सुमन विकसित होकर अपनी खुशबू जन मानस में फैलायेगा ।

- -

1- बांगरू बोली का भाषा शास्त्रीय अध्ययन लेखक - शिव कुमार खण्डेलवाल 1980 पृष्ठ 26

3- बांगरू का समीपवर्ती बोलियों से पार्थक्य (समता और विषमता):-

आसपास की भाषा बोलियों में आपस में व्यावहारिक लेन देन चलना स्वाभाविक सा है। और इससे परस्पर बोलियों में शब्द भण्डार की वृद्धि होती है। यदि आसपास की बोलियों का उद्गम एक ही हो तो भी जलवायु खानपान, पहनावा, रहन सहन तथा उच्चारण सम्बन्धी फर्क आ जाना स्वाभाविक है। कभी आपस की काफी समानता और कभी कभी काफी असमानता परिलक्षित होती है। इतना पार्थक्य हो जाता है कि मानों एक दूसरे का परस्पर कोई सम्बन्ध ही न हो। बांगरू का इसकी समीपवर्ती बोलियों से पार्थक्य (समता एवं विषमता) का अध्ययन प्रस्तुत है:-

i- बांगरू और कौरवी :- कौरवी, बांगरू सीमा से मिलने वाली कौरवी का क्षेत्र पूर्व दिशा में यमुना नदी, पश्चिम में अम्बाला, कुरुक्षेत्र-दिल्ली रेलवे लाईन या ग्रांड ट्रंक रोड उत्तर में अम्बाला- सहारनपुर रेलवे लाईन और दक्षिण में पानीपत का पूर्वी भाग की ओर यमुना पार है।

i- कौरवी में दो स्वर मध्यवर्ती "ह" ध्वनि का प्रायः लोप हो जाता है परन्तु बांगरू में हकार की बाहुलता प्राप्त होती है यहाँ सहर (शहर) में आने वाली "ह" ध्वनि का लोप हो गया है। इसी प्रकार कौरवी में महाप्राण ध्वनियां अधिकांश अल्प प्राण होती है मगर बांगरू में आ, ई, उ, ए, ओ प्रत्येक स्वर के हृस्व और दीर्घ प्राप्त होते हैं:-

बांगरू	कौरवी
बाह्मण	बाम्हण
सहर	सैर
सहमी	सामने

व्यंजना के द्वित्वी करण की प्रवृत्ति दोनों में अधिक है। जैसे:- उज्जड़, कुंडडा, गाड्डा आदि।

- -

ii - कौरवी में संज्ञा का बहुवचन "न" जोड़ने से अथवा खड़ी बोली की तरह "ओं" लगाने से बनता है। जैसे :- बांगरू कौरवी

बांगरू	कौरवी
बुल्दां की जोड़ी	बैलन (बैलों) की जोड़ा
लोगां का काम	लोगन का काम

iii - ईकारान्त स्त्रीलिंग शब्दों के बहुवचन केवल "ईकार" को अनुनासिक करने से बनते हैं। यह प्रवृत्ति अकर्मक धातुओं के कर्ता के रूप में विशेष प्राप्त होती है। - कितनी छोड़ी है ? सकर्मक धातुओं के कर्मरूप में आने वाले शब्दों में "न" बढ़ाने से बहुवचन बनता है :-

घोड़ियां ने पाणी पिलादो (बांगरू)

घोड़ीन कूं पानी पिलादो (कौरवी)

iv/- कौरवी में "ना" की वृद्धि से तथा बांगरू में "ण" या "णा" लगाने से बनता है जैसें:-

बांगरू	कौरवी
खाणा	खाना
जाणा	जाना

v/- सर्वनाम शब्दों के रूपों में प्रायः एकता है जैसे :- उत्तम और मध्यपुरुष के एक वचन के रूपों में कहीं कहीं कुछ फर्क है।:-

	बांगरू	कौरवी
उत्तम पुरुष (पुरुष तथा स्त्रीलिंग)	मन्नै, मनै	मनै, मुझ को, मुझे
मध्यम पुरुष (पुरुष तथा स्त्रीलिंग)	तैं तन्नै, तनै	तुझे, तुझको, तुझे
अन्य पुरुष (बहुवचन)	उन्होंनै	उनन

किन्तु, कौरवी के कुछ सर्वनामों के बहुवचन रूपों पर बांगरू का स्पष्ट प्रभाव झलकता है - थारा, म्हारा आदि।

- -

1/i - सहायक क्रिया के रूप में जो अन्तर लक्षित है - देखिए:-

बांगरू	कौरवी
जां सूं	जाउं हूं

1/ii - कौरवी के स्थान वाचक क्रिया के विशेषण में कड़े, उड़े, किड़े का प्रयोग होता है।

1/iii - कौरवी में "ही" का स्थान बहुधा "ई" ले लेता है परन्तु बांगरू में "ए" "ही" के स्थान में प्रयोग होती है जैसे :- आप्पे आप {बांगरू}, आपी आप {कौरवी} ।

12- <u>बांगरू और पंजाबी :-</u> हरियाणा और पंजाब दोनों ही पंजाब के विभक्त प्रदेश हैं। इसी लिए वहां से आये लोगों की भाषा का भी यहां की भाषा पर काफी प्रभाव पड़ा है। माहौल में एक दूसरे की बोली काफी समता भी आई दोनों भाषाओं में समानता और असमानता देखिए :-

i- दोनों में ध्वनी स्वाराघात एवं ध्वनी परिवर्तन में साम्य और "ह" की प्रधानता है परन्तु उच्चारण में भिन्नता है -उदाहरणार्थ :- दोनों में घ, झ, ढ, ध, भ आदि ध्वनिग्राम है परन्तु पंजाबी में इनकी ध्वनि कम निकलती है - यहां "ह" की ध्वनि का उच्चारण बहुत हलके होता है - घर-कहर, हजार, हजार। हिन्दी की "ढ़" ध्वनि पंजाबी और बांगरू में "ढ" हो जाती है और यही "ड़" का हालत है - पढ़ना-पढना, पड़ना- पड़ना परन्तु इसके पंजाबी में {ड़" के दोनों रूप मिलते हैं - जैसे :- जेड़ा, उड़ा आदि

ii - पंजाबी में संयुक्त व्यंजन के स्थान पर द्वित्व हो जाता है। जब संस्कृत

- - - - - - — - - - - - - - - - - - - - - - - - -

शब्द में ह्रस्वस्वर के बाद कोई संयुक्त व्यंजन होता है परन्तु बांगरू में पूर्ववर्ती स्वर दीर्घ हो जाता है :-

संस्कृत	बांगरू	पंजाबी
कर्म	काम	कम्म
मस्तक	माथा	मात्था
शुष्क	सूका	सुक्का

(iii)- "ण" का प्रयोग दोनों में भिन्न है जैसे :- सारा (बांगरू) हरा (पंजाबी)

(iv)- स्वर से शुरू होने वाले शब्दों के आरम्भ में इन दोनों में कई बार हकार का आगम होता है :-

संस्कृत	प्राकृत	बांगरू और पंजाबी
अस्थि	अट्ठि	हड्डी
ओष्ठ	ओट्ठ	होंठ होट

(v)- कारकों का प्रयोग दोनों में निम्नलिखित ढंग से होता है :-

	बांगरू	पंजाबी
कर्ता	राम ने मारा	राम ने मारा
सम्प्रदान	राम ने मारा	राम नूं मारा
सम्बन्ध	राम का लड़का	राम दा मुंडा

(vi)- संस्कृत के "त, क्त" प्रत्यय का रूप जो बांगरू में लुप्त और पंजाबी में विकसित होता है :-

संस्कृत	बांगरू	पंजाबी
सुप्त	सोया	सुत्ता
कृत	किया (कर्या)	कीता

- -

बांगरू में अपभ्रंश " ब" का "ब" परन्तु पंजाबी में " ब" का "व" होता है :-

बांगरू	पंजाबी
बेबसा	बेब वेबसा
बिरला	विरला
बाँट	वाँट

1/ii- दोनों में प्रायः पुंलिंग चिन्ह "आ" और स्त्रीलिंग "ई" - दोनों के भूतकालिक कृदन्त शब्दों में भी यह प्रवृत्ति पाई जाती है जैसे :-

बांगरू	पंजाबी
काला छोड़ा	काला घोड़ा
छोरा भाज्या	मुंडा दौड़्या

दोनों के विशेषणों में प्रयोग :-

	बांगरू	पंजाबी	
एक वचन	लड़का	लड़का	
बहु वचन	लड़के	लड़के	ऋजु रूप
एकवचन	माणसां का	माणसा दा	
बहु वचन	मणसां का	माणसां दा	तिर्यक रूप

व्यक्ति वाचक सर्वनामों के उत्तम पुरुष और मध्यम पुरुषों के रूपों में बड़ा अन्तर है - तुम, तम और हम हैं (बांगरू) तुसीं, (तुसां) है (पंजाबी)

इसी प्रकार सर्वनामों के सम्बन्ध कारकों रूप में बांगरू में म्हारा, थारा और पंजाबी में साड्डा, त्वाड्डा है ।

- -

1/iii - कहीं कहीं क्रिया के तिङन्त रूपों का प्रयोग दोनों में दिखाई देता है परन्तु बांगरू में तिङन्त क्रिया - सामान्य वर्तमान और पंजाबी में भूतकाल वाची क्रिया तिङन्त रूप धारण करती है। जैसे :- उसने तम ते के कहया [बांगरू] :- उन्होंने त्वानूं की आख्या [पंजाबी]।

पंजाबी में द्वित्व के अत्याधिक प्रभाव के फलस्वरूप में कहीं कहीं कृदन्त रूपों में कुछ अन्तर पाया जाता है। जैसे :- काट्या, पीट्या [बांगरू] -कट्टेया, पिट्टेया [पंजाबी]

पटियाला के समीप वर्ती बांगरू पंजाबी से स्पष्ट प्रभावित है। वहां "से" का रूप कहीं कहीं पंजाबी की सहायक क्रिया "ऐ" में मिलता है। उदाहरणार्थ :- उडे छमे छोरे जावे ऐ। इसी प्रभाव के फलस्वरूप वहां बान्दा, जान्दा, खान्दा आदि रूप भी प्राप्त हैं।

3+1- <u>बांगरू और राजस्थानी</u> :- बांगरू और राजस्थानी में उच्चारण ध्वनि परिवर्तन, लिंग और वचन के दृष्टिकोण से काफी समानता है क्योंकि इसका काफी भाग राजस्थानी सीमा से मिलता है दोनों में सांस्कृतिक दृष्टिकोणों में भी काफी साम्य है। क्रिया, क्रिया विशेषण, सर्वनाम, तथा कई अन्य व्याकरणीक असमानताओं के कारण ये भिन्न वर्गीय भाषाएं हैं। दोनों का तुलनात्मक [समता और विषमता] का कथन देखिए :-

1- दोनों में "ळ" का उच्चारण दन्त और मूर्धन्य दोनों प्रकार का मिलता है और "ल" ध्वनिग्राम है :-

शब्द	अर्थ
पाल	बान्ध
पाळ	बिछाने का कपड़ा
खाल	परनाला
खाळ	चमड़ा

- -

आजकल प्रायः मूर्धन्य (ळ) "ळ" का दन्त "ल" की आदत छूट रही है। जिन शब्दों के आदि में या मध्य में मूर्धन्य "ळ" आता है। अधिकतर उस "ळ" को दन्त्य कर देने से अर्थ में विशेष अन्तर नहीं आता। उदाहरणार्थ :- पीला, काला, लेकिन बहुत से ळकारान्त शब्द ऐसे हैं जिनके दन्त लकारान्त कर देने से अर्थ भि भिन्न हो जाता है जैसा कि ऊपर दिखाया गया है ।

ii - बीकानेरी के प्रभाव से कहीं कहीं "स"- "श" बोला जाता है जबकि राजस्थानी में "श" को "स" परन्तु "ष" प्रायः "ख" हो जाता है। बांगड़ में श, ष स बोले जाते हैं।

बांगड़	राजस्थानी
बरसा	बरखा
वेश	वेस
शेष	सेस

संस्कृत का क्ष क्षीण तो बांगड़ में छीन हो जाता है परन्तु राजस्थानी में खीण हो जाता है।

iii- कहीं कहीं "व" "म" परिवर्तित हो जाता है :-

रावणा- रामणा (बांगड़) रामण (राजस्थानी)

श्रावणा- साम्मण (बांगड़) सामण (राजस्थानी)

परन्तु राजस्थानी में अनेक शब्दों के उदासीन आदिस्वर का लोप बांगड़ के समीप वर्ती स्थानों के कारण होता है उदाहरणार्थ अहीर- हीर उठा -ठा आदि।

- -

ii/- दोनों में "य" का "ज" और "या" दोनों ही तरह मिलते है।

जब यह " किसी शब्द के आरम्भ में हो तो "ज" लिखा जाता है परन्तु जब "य" शब्द के पहले ही अक्षर के बाद आता है। तब वह विकृत नहीं होता।

उदाहरणार्थ:-

आदि जकार	मध्यन्तर या अन्तय यकार
युग - जुग	काया
यात्रा - जात्रा	माया

बहुवचन बनाने के लिए दोनों के व्यंजनान्त शब्दों में (आगम और प्रत्यय) आं का प्रयोग होता है। उदाहरणार्थ रात- रातां आदि। राजस्थानी के आकारान्त, ईकारान्त और ऊकारान्त शब्दों के बहुवचन बांगरू से प्रायः नहीं मिलते। उदाहरणार्थ:-

बांगरू		राजस्थानी
एक वचन	बहुवचन	बहुवचन
घोड़ा	घोड़ूं	घोड़ां
बहू	बहुआं	बहुवां

बांगरू में "ऋ" के स्थान पर "रि" जो राजस्थानी में भी मिलता है दोनों बोलियों में " अकार बहुला प्रवृति पाई जाती है।

उदाहरणार्थ:-

शब्द	बांगरू और राजस्थानी
ऋतु	रितु
जाना	जाणा

i/- राजस्थानी में रेफ का स्थानान्तरित रूप भी प्रयोग में होता है जबकि बांगरू में इसका प्रयोग नहीं होता है वह रकार में बदलता है।

- -

उदाहरणार्थ :-

संस्कृत	बांगरू और राजस्थानी	राजस्थानी में स्थानान्तरित रूप
दुर्लभ	दुरलभ	-
धर्म	धरम	धम
कर्म	करम	कम

।   बांगरू और राजस्थानी के सर्वनामों में काफी समानता है ।

बांगरू	राजस्थानी
मैं, हम	मैं, हम,
मेरा, मने, मन्ने, म्हारा	मैं, मुज, मेरे, हमारा
तूं, तू, तम, थम	तू, थम, तुम
त्वे, तेरा, थारा	तैं, तू तुज, तेरे, थारे
वो, वोहू, वोहू, वा, वे	वो, वोह, वा, वे, वेह
उस, उण, विण	वो, वैं, उन

क्रिया विशेषण में काफी भिन्नता है । जैसे :-
ईब, इब, इब्बे, का राजस्थानी में अबे, अभी, होता है । जद, जिब, जब का राजस्थानी में जद, जदीं जिद होता है । याड़े,- उड़े, इत, उत्त का राजस्थानी में अठी, अठे, इठे, उठे होता है, जित, जड़े, कित, कड़े का राजस्थानी में जठी, जठे, कठी, कठे, होता है । परन्तु परस्पर सम्पर्क के कारण कहीं कहीं यह रूप समानता भी रखते हैं ।

1/ii - कहीं कहीं सुखोच्चारण के लिये शब्द के आरम्भ में कभी कभी कोई

xx

- -

स्वर जुड़ जाते हैं जो अग्र स्वरागम कहलाते हैं उदाहरणार्थ :-

बांगरू	राजस्थानी
स्वार, अस्वार	रबा, अरबा
रथ, अरथ	थारा, आथारा

दोनों में छुटपन लाने के लिये अथवा प्रेम प्रदर्शन के लिये अपभ्रंश की तरह संज्ञाओं के अन्त में ड़ा, ड़ी, ड़, जोड़ दिया जाता है। उदाहरणार्थ :- गोरी {सुन्दरी} का गोरड़ी {अत्याधिक खूबसूरत} ।

ii/ - <u>बांगरू और ब्रज</u> :- बांगरू की दक्षिणवर्ती सीमाएं ब्रज क्षेत्र के केवल थोड़े से भाग को स्पर्श करती है दोनों की ध्वनि क्रिया में समानता और असमानता दोनों ही उपलब्ध हैं ।

i- मूर्धन्य ध्वनियों में "ण" का अभाव है उसके स्थान पर ब्रज में "न" उच्चरित होता है । इसी प्रकार ड़, ढ़, के स्थान पर "र" का प्रयोग होता है उदाहरणार्थ :-

बांगरू	ब्रज
कंगण	कंगन
पाणी	पानी
झगड़ो	झगरो
बीड़ा	बीरा
दूबले	दूबरे

ii- बांगरू और ब्रज में ऊष्म ध्वनियां श, ष, स में केवल स मिलती है ।

- -

उदाहरणार्थ :- विशेष - विसेस आदि ।

(iii)- संज्ञा, विशेषण और क्रिया पद प्रायः ओकारान्त मिलती है ब्रज जबकि बांगरू में आकारान्त की बहुलता है । । उदाहरणार्थ :-

बांगरू	ब्रज
बसेरा	बसेरो
जीत्या	जीत्यो
छोरा	छोरो

(iv)- दोनों में शब्द के मध्य आने वाला "ह" प्रायः लोप हो जाता है ।

हिन्दी	बांगरू	ब्रज
ठहरता	ठेरता	ठेरतो
साहूकार	साकार	साऊकार
बारह	बारा	बारा

(v)- संज्ञा का बहुवचन बांगरू में "आं" लगाने से बनता है जबकि ब्रज में "न" से बनता है । उदाहरणार्थ :-

बांगरू		ब्रज	
एक वचन	बहुवचन	एक वचन	बहुवचन
घोड़ा	घोड़ां	घोड़ो	घोड़न

(vi)- सामान्य वर्तमान परिवर्तन बांगरू में "ता" लगाने से तथा ब्रज में "त" लगाने से बनता है । उदाहरणार्थ :- करता, जाता, खाता, पीता आदि (बांगरू) करत, जात, खात, पीत आदि (ब्रज) में ।

- -

।/।।- क्रियार्थक संज्ञा निर्माण के लिये नो, इनो, तथा विकारी रूप में ने, इबे मूल धातु मे जोड़ा जाता है- चालिबो, खाइबो आदि जबकि बांगरू में ये चालणा, खाणा है ।

।/।।।- कुछ असमानताएं देखिए :-

	बांगरू	ब्रज
भूतकाल	मन्ने कन्ने मारूया	मोकू कौन ने मारो
भविष्यत्	करांगा	करांगो
	तूं कडे गया था ?	तूं कहा गयो हो ?

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि बांगरू और ब्रज में समानता के साथ भिन्नता भी है ।

।/- बांगरू और केन्द्रीय हरियाणवी[1]:- बांगरू और केन्द्रीय हरियाणवी में मुख्यत: ध्वनात्मक अन्तर पाया जाता है । ध्वनियों में स्थूल रूप से तीन बाते है । जो कि निम्नलिखित है :-

।- हकार का उच्चारण विशेष झटके के साथ होता है जिससे वह केन्द्रीय हरियाणवी के हकार के समान न न पूरी तरह घोष है और न पूरी तरह अघोष । इतना ही नहीं प्रत्युत हकार ध्वनि युक्त व्यंजना का उच्चारण भी उसी प्रकार के झटके के साथ होता है ।

।। - बांगरू में ओ स्वर अधिक पाया जाता है । इसे विवृत पश्च स्वर कहा जाता है । यह भी "ऐ" की भांति मूल स्वर है सन्धि स्वर नहीं ।

।।।- बांगरू में "ल" तथा "श" ध्वनिग्राम पाए अवश्य जाते है परन्तु इनका प्रयोग इतना अधिक नहीं पायाजाता ।

- -

।- हरियाणवी भाषा का उद्गम एवं विकास लेखक - डा० नानक चन्द शर्मा 1968, पृष्ठ 33- 34 ।

11/- बांगरू में हरियाणावी की सी तालवी की प्रवृति का अभाव है ।

रूपात्मक दृष्टि से दोनों बोलियां में विशेष अन्त र नहीं है यहां केन्द्रीय हरियाणवी के रूप ही पाए जाते हैं । परन्तु कुछ एक प्रयोगों पर अधिक बल रहता है ।

दोनों के रूपामें सामान्य अन्तर इस प्रकार है :-

	केन्द्रीय हरियाणावी	बांगरू
अधिकरण कारक परसर्गों के अतिरिक्त	घरैं	घरों
अन्य पुरुष-		
एक वचन	वोहू, वो	ओहू, हो,
बहु वचन	वे, वेहू	ओं, हों,
गणाना वाचक विशेषण:-	नो, ग्यारा, बारा	नौं, ग्यारां, बारां,
	क्यावन, बावन, पचपन	क्यान्, बोन्, पचोन्
क्रियाओं के रूप :-	गाय, मिठाई	गै, मिठई

जबकि बांगरू और केन्द्रीय हरियणावी में सामान्य साअन्तर है तो यह बांगरू ही है । क्योंकि हरियाणा के प्रत्येक भाग में इसका समावेश हर जगह है । कहीं आंशि रूप में तो कहीं प्रचुरता में ।

* इस प्रकार हरियाणावीं की लगभग वही सीमाएं समझना चाहिए जो

- -

"सर्वे" में बांगरू की दिखाई गई है ।"[1] वास्तव में बांगरू मिश्रित खड़ी बोली को केन्द्रीय हरियाणावी नाम दिया गया है जिसमें स्थानीय शब्दों का पुट निहित है । स्थानीय भेद के कारण ही उच्चारण में अन्तर प्रतीत होता है क्योंकि प्रत्येक बारह कोस पर पानी और बोली में अन्तर आ जाता है । यह इसी का परिणाम है बांगरू का सभ्य और सांस्कृतिक विकसित रूप प्रान्तीयता के आधार पर ही हरियाणवी बन गया है । बांगरू या हरियाणी हरियाणा राज्य की बोली है यह हम इसी अध्याय के प्रथम शिर्षक के अन्तर्गत बांगरू के नाम करण में सिद्ध कर चुके हैं ।

यह ठीक है कि बोली और पानी प्रत्येक बारह कोस पर बदल जाते है तथापि यह अन्तर इतना गौण रहता है कि उसके आधार पर हम बोली को मूल अथवा आदर्श प्रादेशिक भाषा से अलग नहीं कर सकते । आदर्श हरियाणवी की मूल प्रवृतियां समूचे हरियाणा में नहीं मिलेगीं यथा हरियाणावी की तालवीकरण की मूल प्रवृति जुलाना और इसके आस पास के देहातों में नहीं मिलती । जबकी जुलाना हरियाणा के केन्द्र महम से केवल ९ कोस दूर है । उत्तर की ओर । ठीक इसी प्रकार बांगरू की भी यही प्रवृति है इस तथ्य पर हम यह कह सकते हैं कि कहीं किसी का और कहीं किसी का आंशिक एवम् बाहुल्य रूप रहता है परन्तु हरियाणा में बांगरू का अधिकांश प्रभाव है । इसी लिए यह निश्चित है कि परस्पर संयोग (मेल) होना अनिवार्य है ।

उपरोक्त उदाहरण यह स्पष्ट करता है कि इन बोलिया को परस्पर अलग नही कियाजा सकता है । केन्द्रीय हरियाणवी बांगरू का ही सुधरा हुआ रूप है । जैसा कि हम ऊपर कह आये हैं ।

1- हरियाणावी भाषा का उद्गम एवं विकास लेखक डा० नानक चन्द शर्मा 1968- पृष्ठ 11 ।

4- बांगरू और इसकी समीपवर्ती बोलियों के नमूने :-

हमने अभी बांगरू से भिन्न भिन्न भाषाओं की समता-विषमता का यत्न किया अब इन्हीं बोलियों के नमूने पेश किए जाते हैं। जिने उनका अन्तर भली भान्ति स्पष्ट हो जाए। भिन्न भिन्न समीपवर्ती बोलियों के नमूने देने का हमारा उद्देश्य भाषा अन्तर स्पष्ट करना ही है।

बांगरू

उमर बड़ेरी[1] सिर में धोले आगी कमजोरी में मेरी हाले से नाड़।
इसी तकलीफ नहीं जा ओटी, सहम की राड़[2] आँगावे मोटी।
और दूसरी हो छोटी घर में मतनां सूं घाले मेरे गल में झाड़॥
सदस समय इकसार रहे ना बन्द कदे तकरार रहे ना।
मेरा तेरा प्यार रहे ना आपस की लाली देगी वो पाड़[3]॥
होज्या तेरे करम की हाणी मतणा डूबे होके स्याणी[4]।
हाथ पकड़ के तेरा वा राणी देगी वो घर ते आडे लिकाड़॥

कौरवी :-

ससुर वहां से चल दिया, छकड़ों भर लिए दाम।
बऊ छुड़ाऊ चन्द्रावती जिसके लम्बे खेस।
जा रे ससुर घर आपणे, राखूं पंचों की लाज।
देवर वहां से चल पड़ा, छकड़ो भर लिए दाम॥
भाभी छुड़ाऊ चन्द्रावती, जिसके लम्बे लम्बे खेस।
जा देवर घर आपणे, राखूं दुपिया की लाज।

1- अधिक।

2- कलह।

3- प्यार खत्म करना।

4- समझदार।

पंजाबी

कन्त हरामी हंस पाया, नवीं बिहाउणं दा चा ।
बाबे सिपाहिया बे जालमां, रखां तेरी सेजा दी लाज
पाणी न पिवां मुगल दा भावें भुक्खी[2] मर जां ।
रखां ■ वीरे दी लाज, सेजां न जावां मुगल दी ।
मैं ज्युंदी जल जा, रक्खा सेजा दी लाज ।

-x-x-x-x-x-x-x-x-x-x-x-x-

तेरी बाहां बेलण बोलियां, तेरे मखमल वरगे हत्थ ।
तेरी चुन्नी कोल शराब दा, तेरे बोतलां वरगे पट्ट ।।
तेरी ठेड्डी शो कश्मीर दा, तेरी धार खण्डे दी नक्क ।
तेरी दन्दनी दाने अनार दे, तेरे बुल पिपलो दे पत्त ।
तेरी गर्दन कूंज पहाड़ दी, तेरी काले मिरग दी अक्ख ।।

राजस्थानी

मुगल देखते रह गयो हुई वन्दा की राख ।
ये धोखा मन मे रहा, क्यों मैं लायो जी साथ ।।
खारी ए तूमण की बेलड़ी[3] फल लाग्या ए ना फूल ।
तोड़ी ही चाखी नहीं, धोखा मनई रै मनड़ें रैमाय ।।

■ ## ब्रज

माखन मांग्यो कुवर कन्हाई कुदित मातु तुरतहिं ले आई ।
लगी खवावन हिय हरषानी[4] श्याम कह्यों लेहों निज पानी ।
दिया हाथ धरि भरि के दोन चले खात खेलन हरि लोना ।
सखन संङ्ग खेलत बनमाली यमुना जाति लख ग्वाली ।
आप चले ताके घरमाही पूछत बात कौन है काहीं ।

1- विवाह 2- भूखी

3- बेल 4- प्रसन्न

5- बांगरू बोली का लोक साहित्य में विनियोजन :-

परिस्थितियां सदैव एक समान नहीं रहती वे निरन्तर परिवर्तित होती जाती हैं समय के साथ साथ, चाहे वे सामाजिक, धार्मिक, ऐतिहासिक कैसी भी क्यों न हो। इनके साथ साथ मनुष्य की विचारधारा भी बदलती है और पुरानी मान्यतायें नये रूप में अपना अस्थितत्व जमा लेती है। ठीक वहीं दशा बोली या भाषा की भी होती है परिस्थितियों और समय के साथ साथ इनमें नवीनता आ जाती है परन्तु प्राचीन शब्दों का प्रयोग भी किसी न किसी रूप में उनमें समावेश किए हुए रहता है। हमारी राष्ट्रीय भाषा हिन्दी का भी समय के साथ साथ विस्तार होता गया। और आजकवेल उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, राजस्थान, हरियाणा, हिमाचल, और दिल्ली ही नहींबल्कि इसका विस्तार इस प्रकार है। - "पश्चिम में अम्बाला बीकानेर और जैसल में, दक्षिण में ताप्ती नदीं, बालाघाट दुर्ग, पूर्व में रायगढ़, धनवाद और भागलपुर, एवम् उत्तर में नेपाल की सीमा को छूते हुए गंगोत्री जमनोत्री, तक चले जाइये:- यह 1050 मील लम्बा 600 मील चौड़ा भूभाग हिन्दी प्रदेश है।"[1] इस हिन्दी प्रदेश को पांच भागों में विभाजित किया गया है। - 1-पश्चिमी हिन्दी,

---

1- ग्रामीण हिन्दी बोलियां लेखक डा0 हरदेव बाहरी 1966 पृष्ठ 27

2- पूर्वी हिन्दी 3- राजस्थानी 4- बिहारी 5- मध्य पहाड़ी।"[1]
या यू कहिए कि उपरिलिखित विशाल भूभाग में हिन्दी का बोल बाला है ।
जहां तक परिनिष्ठत हिन्दी की जन्मदात्री का प्रश्न है यह श्रेय पश्चिम हिन्दी
को जाता है - और इसमें भी सर्वाधीक दिल्ली के ईद गिर्द की बोली का
बांगरू और कौरवी ये दो प्रमुख बोलियां -जिनमें एक बांगरू जो यमुना के
पश्चिम की ओर व्यवहृत होती है जो दूसरी कौरवी जो यमुना के पूर्व की
ओर जाती है।"[1] हमारी राष्ट्र भाषा इन्ही बोलियों का विकसित,
परिष्कृत और साहित्यिक रूप है जिस पर यहां की सभ्यता और संस्कृति की
पूर्ण छाप रहती है ।

मुसलमानो का दक्षिण भारत पर अपना कब्जा करके वहां पर बसने
का सबसे अधिक प्रभाव यह पड़ा कि उनकी भाषा का भी वहां प्रसार और
प्रचार होने लगा । वास्तव में उनकी भाषा दिल्ली के आसपास की भाषा थी ।
उत्तरी भारत में हिन्दी का प्रसार नहीं हो सकता क्योंकि यहां उस समय
दरबारों में फारसी का प्रभुत्व इसमें रुकावट डाल रहा था । दिल्ली के
आस पास की भाषा कौरवी और बांगरू होने के कारण दक्षिणी हिन्दी पर
बांगरू की छाप पड़े बिना कैसे रह सकती थी ? कवियों द्वारा दिल्ली की
लोक भाषा में उस समय में कविता करना भी इसकी पुष्ठि करता है भाषा
वैज्ञानिक की दृष्टि से देखा जाये तो बांगरू की [illegible] दक्खनी हिन्दी पर

- -

1- हिन्दी: उद्भव, विकास और रूप लेखक- डा0 हरदेव बाहरी पृष्ठ 68

स्पष्ट झलकती है। उदाहरणार्थ बांगरू की प्रायः सभी स्वर और व्यंजन ध्वनियां दक्खिनी में है। बांगरू के समान उसमें भी कुछ शब्दों के दीर्घ स्वरों का ह्रस्वीकरण हो जाता है। यथा - अस्मान (आसमान), बहार (बाहर) सुन्ना (सोना)। अल्पप्राणीकरण की प्रवृत्ति भी बांगरू जैसी है, यथा - हात (हाथ, में दूद (दूध), बी (भी), सीदा आदि। "ह" के प्रभाव से अल्पप्राण व्यंजन का ("ह" का लोपकर) महाप्राण व्यंजन के रूप में उच्चारण करने की प्रवृत्ति पर भी बांगरू का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है, जैसे - भोत (बहुत) भार (बाहर), भ्या (ब्याह) बांगरू की विशिष्ट प्रवृत्ति द्वित्वीकरण दक्खिनी में भी मिलती है जैसे - हाती (हाथी) मिट्ठा (मीठा) ऊप्पर (ऊपर) कीच्चड़ (कीचड़) आदि दक्खिनी में "ड़" की अपेक्षा "ड़" का प्रयोग अधिक है। व्याकरण की दृष्टि से भी दक्खिनी बांगरू से बहुत अधिक प्रभावित दिखाई देती है कुछ उदाहरण -

(क) बहुवचन की रचना में आं प्रत्यय का योग -

बांगरू	दक्खिनी
औरतां	औरतां
वीरां	वीरां
हिन्दुआ	हिन्दुआं
जानवरां	जानवरां

(ख) कुछ समान कारक चिन्ह

ने	-	कर्ता तथा कर्म में
सेंती	-	करण में
तई, खातर		सम्प्रदान में

- -

मैं मुंह, पै   अधिकरण में

(ग)   कुछ समान सर्वनाम

तू, तैं, ओ, वो, यो आदि

(घ)   सामान्य वर्तमान में तिङन्त क्रिया का प्रयोग-

आवे, जावे, करे, खावे आदि ।

(ङ) भूतकालिक क्रिया रूप-

देख्या, बोलया, कर्या, लग्या, कह्या आदि ।

इसी प्रकार बांगीरू की और भी बहुत सी विशेषताएं दक्खिनी हिन्दी में मिलती है । ऐसा प्रतीत होता है कि साहित्य में खड़ी बोली का प्रवर्तन सबसे पहले दक्षिण में हुआ और बाद में यही परिष्कृत और परिमार्जित होकर परिनिष्ठीत हिन्दी बनी । अतएव यह स्वीकार करना होगा कि आधुनिक परिनिष्ठित हिन्दी के विकास में बांगरू का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।[1]

इसके पश्चात अरबी फारसी का प्रभाव कम होता गया और दिल्ली की लोकभाषा उर्दू होने के कारण उसका प्रभाव बढ़ने लगा धीरे धीरे वह भी समृद्ध भाषा होने लगी ऐसे में बांगरू का भी प्रभाव उर्दू पर बढ़ने लगा " वस्तुत: खड़ी बोलीया आधुनिक परिनिष्ठत हिन्दी की तरह ही उर्दू भी मूलत: दिल्ली के आस पास की खड़ी बोली पर आधारित हैं जिसमें कुछ रूप (मूल या विकसित रूप में) पूर्वी पंजाबी, बांगरू तथा ब्रज की भी है ।[2] " जो आज हिन्दी का रूप स्वीकृत है उसे काफी समय पश्चात स्वीकृति प्राप्त हुई । इससे काफी पूर्व तो बांगरू को हिन्दी के रूप में हि पहचाना गया ।

1- बांगरू बोली का भाषा शास्त्रीय अध्ययन लेखक शिवकुमार खंडेलवाल पृष्ठ 18-19, 1980

2- बांगरू बोली का भाषा शास्त्रीय अध्ययन लेखक शिव कुमार खण्डेलवाल पृष्ठ 19, 1980

इसे देहलवी, हिन्दवी और दक्षिण में दक्खनी कहा गया । इस अवधि तक तो अरबी फारसी तुर्की आदि शब्दों का इसमें काफी समावेश हो चुका था या यह भी कह सकते हैं कि बांगरू में इन भाषाओं के शब्दों का नियोजन हो चुका था । इसके साथ संस्कृत के तत्सम, अर्धतत्सम और तद्भव शब्दों शब्दों का समावेश भी हो चुका था । अंग्रेजी के शासन काल में काफी संख्या में अंग्रेजी शब्दों ने भी इसमें प्रवेश किया । निसन्देह वर्तमान परिनिष्ठित हिन्दी का विकास बांगरू के महत्वपूर्ण योगदान का ही परिणाम है आज जो राष्ट्रभाषा की उच्चसता पर हिन्दी का अधिपत्य है वह बांगरू और कौरवी की शब्द सम्पदा से ही है । बांगरू में भी अंग्रेजी, फारसी, अरबी, तुर्की, तत्सम, तद्भव, आदि शब्दों का नियोजन मिलता है जिसका उसके लोक साहित्य पर प्रभाव दृष्टिगोचर होता है ।

"शब्द समूह की दृष्टि से प्रत्येक भाषा एक प्रकार से खिचड़ी होती है । किसी भी भाषा के सम्बन्ध में यह नहीं कहा जा सकता है कि वह अपने विशुद्ध रूप में आज तक चली आती है । "[1] इसी लिये इसी भाषा के शब्द समूह का अध्ययन, उसके विभिन्न स्त्रोतो को विभिन्न श्रेणियों में बांटने से ही सरल रहता है ।

1- हिन्दी भाषा का इतिहास लेख डा० धीरेन्द्र वर्मा 1949, पृष्ठ 68

बांगरू लोकसाहित्य में नियोजित होने वाले बांगरू शब्दों को निम्नलिखित वर्गों में विभाजित किया जा सकता है :-

I- तत्सम और अर्द्धतत्सम शब्द

II- तद्भव शब्द

III- देशी

IV- विदेशी

I- तत्सम और अर्द्धतत्सम शब्द :-

i- तत्सम शब्द :- अन्न, वित्त, वर, कथा, ज्ञान, जल, ताप, पूजा, नदी, कुण्डल, गणेश, गुड़, गौरी, घाट, देव, दुःख, नगर, नर, नट, पंच, बीज, भूत, भरणी, बिना, सदा, आदि

ii- अर्द्ध तत्सम :- करम्, दूरसन्, किरसन्, परेम्, लछमण आदि ।

II- तद्भव शब्द :-

संस्कृत	बांगरू	संस्कृत	बांगरू
आकाश	अकास	जाति	जात्य
अन्न	अन	स्थान	थाण
अवसर	औसर	तृष्णा	तिस
काक	काग	देश	देस
कार्तिक	कातक	नाम	नां
कृपा	किरपा	स्नान	न्हाण
ग्रहण	गहण	परमेश्वर	परमेस्सर
गौ	गाय	वेद	बेद
ग्राम	गाम	वधू	बहू

- -

संस्कृत	बांगरू	संस्कृत	बांगरू
शंख	संख	समुद्र	समन्दर
श्रावण	सामण	स्वर्ग	सुरग
स्वप्न	सुपना	हस्त	हात्थ
अग्नि	आग्गम	अन्धा	आंधा
सांझ	सन्ध्या	भिक्षा	भीख
भाग्य	भाग	चूर्ण	चून

।।।-देशी:- यहां देशी शब्दों से हमारा तात्पर्य दो प्रकार के शब्दों से है एक तो भारतीय भाषाओं से और दूसरा बांगरू की अपनी क्षेत्रीयता से एक तो भारतीय भाषाओं के भिन्न भिन्न शब्दों का प्रयोग जिस जिस रूप में बांगरू में होता है। उनका वर्णन दूसरा इन भाषाओं के कुछ शब्द ऐसे हैं जो ज्यूं के त्यूं बांगरू में भी बोले जाते हैं। इनका अध्ययन हम इसी अध्याय में कर चुके हैं फिर भी कुछ उदाहरण इस प्रकार है:-

कुवाड़, बांदगा, चून, जनावर, आठे, थावर, लत्ता, (आदि (खड़ी बोली- कौरवी), अनक, आठे, बालकम, ऊत, पल्ला, ओटना, जमेरा, ज्याली आदि (ब्रज, बासीज, उच्छल, ऊत, कड़ बस्सी, आदि) राजस्थानी) कौडी, ओटा, ओहड़, रौला, नेड़े आदि (पंजाबी)

दूसरी बांगरू क्षेत्रीयता के शब्द जिसमें इनका अपना ही विशेष महत्त्व है उनकी सूची हमने इसी अध्याय के विशेष शीर्षक नं 6 में दे दी है।

- -

11/- विदेशी शब्द :-

अरबी, फारसी, तुर्की-तत्सम रूप में

फारसी:- पोशाक, कागद, जैदाद, दरखास्त, शेर, दवाई, बाजार, मुर्दा, राह आदि

अरबी:- एतबार, इश्तहार, औरत, जिक्र, जुल्म, अक्ल, अल्लाह, आदमी, ईमान, कसाई, कायदे, किस्मत, कुदरत, खबर, खत्म, गुलाम, दीवान, मुकदमा, आदि ।

तुर्की:- कुर्ता, दरोगा, बावर्ची, कैंची, कौम आदि ।

पुर्तगाली:- अलमारी, गुदाम, तम्बाकू, पिस्तौल, बोतल, कमीज, पीपा, आदि ।

अंग्रेजी:- टैक्स, किताबुक, बस, रेल, कम्पोटर, डाक्टर, रंगरूट, पिल्सर आदि ।

अरबी:-फारसी, तुर्की, के शब्द जो तद्भव रूप में प्रयुक्त होते हैं ।-

	अरबी/फारसी/तुर्की शब्द	बांगरू
	अक्ल	अकल
	बाला	बाला
	बाली	बाली
	ओसान	उसारा
	तुर्की काकी	काकी
	चाकू	चक्कू
	जहान	जिहान
	जबान	जुबान
नीयत	नीयत	नीत
	नसीहत	नैसत

- -

।-बांगरू लोकगीतों में :-

कच्चा धागा नकली मणिया झूठी राम सुमरणी,
किसी की निन्दा किसी की चुगली कैंची जैब कतरणी,
ओ अभिमानी तेरे जुलम तै कांपण लागी छाती,
जैसी करनी वैसी भरणी फेर भगवान के करै ।।
वायदा करके भूल गया तू अटल वचन पै रहा नहीं,
सदा कुसंग के साथ फिरा करै सत्संग के मांह गया नहीं,।
ए नर बेईमान तेरा भी कतई ठिया ठिकाणा नहीं,
जिस दिल के भीतर दया नहीं तो दान के करै ।।
फिरै मरता हठा भूखा मान बड़ाई और का
ए मूरख जन दया धरम बिन यो तन आणा दोरका,
ए सच्चे शाह नै भूल गया मन साथी अणा बोरका,
तू अपना खोवे और का नुकसान के करै ।।

- -

भरती हो ले रे प्यारे बाहर खड़े रंगरूट
या हसा रहते मध्यम बाणा मिलता धूधा पुराणा
वो मिलते हैं फुल बूट ---

कैंची {तुर्की} जुलम {अरबी} भरणी, नर {तत्सम} धरम {तद्भव} मूरख {तद्भव} फुल,बूट {अंग्रेजी} आदि शब्दों का नियोजन हुआ है ।

- -

11- लोकगाथाओं में :-

हाथ जोड़ कै बोल्ली, कुं की मारवण
सुण भाई मेरा साफ जवाब
बिखाद पड़ी थी लछमण राम मैं
जिन नै सहा थो बणवास
बिखाद पड़ी कौतांके पांडवा
गये दिसोटे पांडु पांच
बिखाद पड़ी थी राज हरी चन्द
बिक गया बेटा रोहतास
बिखाद पड़ी थी नल महाराज मैं
सारा सुणा द्यूं बिखाद का हाल
भाया के बोल्ले हुये
भुन्नू भी हो गयी राख
साधू दम्पति नै न्हाणा भिंजो दिया
खूंटी निंगल गयी नौलखा हार
बैठ रथ मैं दोन्नो चल पड़े
पहुंचे बिखम उजाड़
टक्कर ला ग्यीमच्छ की
भुन्ने तीतर उड़ गये
राजा रोवे जोर जिकार
राजा रानी चल पड़े
आ गये फुंलाद दरम्यान ।

यहाँ जवाब, दरम्यान,{फारसी} गजब{अरबी} लक्ष्मण {अर्धतत्सम}

अन्न {तत्सम} न्हाग, अरथ,{तद्भव} रूपों में शब्दों का प्रयोग हुआ है।

111- लोक कथा में :-

तब तीसरे दिन राजा भोज फिर उस सिंहासन पर बैठने लग्या। तब तीसरी पुतली बोली - हे राजा भोज, तूं इस सिंहासन पर मत बैठ इस सिंहासन पर सो बैठे जो राजा वीर विक्रमादित्य जीत सरीखा दाता होय तब राजा भोज ने पूछा - हेपुतली राजा, एक सुमै राजा वीर विक्रमाजीत ने जग्ग करी, सो उस जग में अच्छे अच्छे दूर दूर के पढ़े हुए वेद के बोलने वाले ब्राह्मण बुलाए। अवर उन ब्राह्मणों को बहुत सा दरब दिया। अवर ब्राह्मणा ते यह कही अब जिस दिन मेरी जग सम्पूर्ण हो जायगी त उस दिन मैं तुम्हारे ते और बहुत सा दरब दे के रुकसद[1] करूंगा।[2]

सिंहासन{तत्सम} समै, जग, अवर, दरब {तद्भव} रुकसद {अरबी} शब्दों का नियोजन हुआ है।

11/- ... बांगरू सांग में :-

सा कुंभर संसाहरो, करो कंठ में बासा
सरन पड़ा आगे खड़ा सुरज हो समरास ।।

रैखांकित शब्द बांगरू के तद्भव रूप में और सरन, पड़ा, आगे, खड़ा, शुद्ध साहित्य

1- विदा करना।

2- सिंहासन-बतीसी- हरियाणवी गद्य में रूपान्तर। 975

॥ हिन्दी के रूप में हुआ है ॥

तले म्हारे महल के देता कौन आवाज

खड़े गली के बीच में गढ़ चितौड़ के राज

खेले मेरी तले पियारी

इसमें बांगरू या इसके निकटवर्ती शब्दों का नियोजन हुआ है।

।/- प्रकीर्ण साहित्य में :- प्रकीर्ण साहित्य के कहावतें, चुटकले, मुहावरे पहेलियां, और सूक्तियां, आदि में बांगरू शब्दों का नियोजन मिलता है परन्तु सबसे अधिक लोकोक्तियों में :-

i-एक कन्या सहंसर वर, दान वित्त समान,

ii- आंदइयां की मारखी राम उड़ावै।

iii-गाम ते बस्या कोन्या मांडूडे पहलुयाम हांठयो।

iiii- पीसा ते हाथ्या का मैल हो से

।।/- खरी मजूरी चोखे दाम।

वर, वित्त {तत्सम} आंदइया, मारखी, गाम{तद्भव} मजूरी, पीसा{अरबी} का नियोजन हुआ है।

निष्कर्ष-रूप में बांगरू लोक साहित्य में उपर्युक्त चार प्रकार के वर्गों के शब्दों का प्रयोग मिलता है जिनमें तत्सम शब्दों का नियोजन कम मिलता है परन्तु "बांगरू बोली का उद्भव लौकिक संस्कृत से हुआ है जो प्राकृत और अपभ्रंश के मार्ग से विकसित हुई है।"[1] तद्भव एवम् देशिय शब्दावली {बांगरू} का भण्डार प्रचुर मात्रा में मिलता है। विदेशी भाषाओं में अरबी, फारसी, तुर्की पुर्तगाली, एवम् इनके विकसित शब्द भी उपलब्ध होते हैं। मुख्य रूप से विदेशी शब्दों को बांगरू में अपने रूप में ढाल लिया है।

- -

1- हरियाणवी लोकोक्तियां"शास्त्रीय विश्लेषण प्रो० जय नारायण वर्मा पृष्ठ 69

6- लोक साहित्य में प्रयुक्त बांगड़ बोली के कुछ कतिपय विशिष्ट शब्द :-

i- बर्तन तथा साज सामान :-

ऊखल	ओखली	देगची	पीतल या कांसे का छोटा बर्तन
कढ़ावणी	दूध गर्म करने की हांडी	बेला	कांसे का भारीसा गोलपा
कमोई	छोटी हांडी	कड़छी	चम्मच
कोलड़ी	पत्थर या लकड़ी का खोल	डोई	लकड़ी का बना बड़ा सा चम्मच
दाळौंधी	घड़ा रखने के लिए बनी तिपाई	कूण्डी	पत्थर का बना गोल और गहरा पात्र
दूंगा	छोटा घड़ा	सुरवणा	खरबरों का लोहे का चपटा पात्र
हारा	आग रखने का सामान	कढ़ावणी	दूध गर्म करने की मिट्टी का हांडी
चूकड़ा	मिट्टी का छोटा सा दीया	बरोल्या	सब्जी आदि बनाने का मिट्टी का पात्र

ii- कपड़े लत्ते ;-

कन्ध	पहलेलाल रंग का ओढ़ना	किमाब	रेशमी ओढ़ना
पोतड़ा	छोटे बच्चे के नीचे रखने वाला चद्दर का छोटा टुकड़ा	दोलड़ा	मोटा बड़ा कपड़ा
दुतई	दोहरी चादर	लत्ता	कपड़ा
गुदड़ा	चिथड़ों का बना नीचे बिछाने का वस्त्र	तील	नारियों के बढ़िया वस्त्रों का जोड़ा

- -

iii - <u>आभूषण :-</u>

रमझोल झ	पांव का बाजने वाला आभूषण
झांझण चूड़ी	बाजने वाली चूड़ियां
टाड़	बाजू का आभूषण
हंसली	गले का आभूषण
नाड़ा	चांदी का छल्लेदार जेवर
बांकड़ा	पांव का आभूषण
सिंगार पट्टी	सोने का सिर पर बान्धा जाने वाला आभूषण
बोरला	माथे के बीच में सजाया जाता है।
मुरली	सोने की नाक में पहनी जाती है।

ii/- <u>कृषि सम्बन्धी :-</u>

झल	पौधों का रोग	कसोल्ला	नलाई के काम आने वा औजार
ऊंटणा	बैलगाड़ी टेकने का डंडा	खेल	पशुओं के पानी पीने क हौज
ओरणा	खेत में बीज डालने का उपकरण	जोर	नांद
गाड़ा	गाड़ी	जैली	भूसा आदि उलटने क औजार
पाली	चरवाहा	धुलकणा	दूध निकालना
डांगर	पशु	न्हार	पशुओं का चारा
दूधार	दूध देने वाली गाय	न्हाणा	दूध निकालते समय गाय के पैरों में बांधने की रस्सी
बागड़	दूधारू	सांटा	चाबुक
याहली	हल्का पशुभाग	हाली	हलवाहक

- -

1/- रिश्ते नाते सम्बन्धी :-

दादस	पति की दादी	बेब्बे	बहिन
ब पीतस	पति की चाची	भ्रोईड़ो	बहनोई
मांऊस	पति की मामी	मोलसरा	पति का मामा
फूफस	पति की बुआ	सालेत	साले की पत्नी

1/1- अन्य :-

आडू	मूर्ख	चाणचक	अचानक
आल्हणा	घोंसला	कुर कपात	आमोरा
कूंगणा	कूड़ा कर्कट	छाण	झोपड़ी या छप्पर
उघाड़ा	नंगा	छोह	गुस्सा
केन्या	समीप	कुपोर	पूलियों का ढेर
करडू	साहस	जेवड़ी	रस्सी
कढू	पीठ	जोट	जोड़ी
कुलक	अण्डा	जनेत	बारात
कोलका	कोला आलिंगन पाश में आबद्ध	झबकल्ला	बालों वाला
खबेड़ू	मूर्ख	ढेढ	पेट
खड़ाडू	गद्दा	ढांगर	पशु
खोसनी	छीनना	ढाभ	कुत्ता
खोंस	जूता	ढुक्क	घूंसा
गभीणा	यात्रा	ढाला	तरह
गितवाड़ा	लकड़ी या पूली आदि रहने का स्थान	टींट या टींड	विशेष फल
गोस्सा	उपला	द्रुम	गहना

- -

गोहर	मार्ग	घणा	अधिक
खागड़.	सांड	ठाडू	जोर से
गोज्जी	जेब	डांडल्याला	बारात ठहराने का स्थान
घरकणी	क्रोध में देखना	ढ़ीख	पुराने काठ और लकड़ी
घाट	कम	ढेट	मूर्ख
घाला	दुर्भाग्य पूर्ण घटना	तावली	जल्दी
चौखा	ठीक	त्यौर	दृष्टि
छाज्जा	छींकना	परे	दूर
तिसाया	प्यासा	फूट जाना	निश्चय होना
थाम्ब	खम्भा	पैड़ी	सीढ़ी
थ्यावे	शान्ति	पौली	दहलीज
ठाडड़ा	ताकतवर	पाल	जाल वृक्ष पर लगने वाला फल
थावर	शनिवार	पूली	पपून्दी
दरड़	कुचलना	बिरघना	बहकना
धिंगताणा	जबरदस्ती	बिंघ	जाना
निगर	ठोस	बी	भी
नैबर	ढूंठ	भूंडा	असुन्दर
न्यूं	इस प्रकार	बाल	हवा
नाड़	गर्दन	मोखड़	मोटा
फेंटना	मिलना	भाभेंगा	भिगोना
मटोड़	मिट्टी का ढेर	माड़ा	थोड़ा या खराब
मुन्धी	उल्टी	हंडा	बूढ़ा
रंड़ापा	वैधव्य	सीर	सांझा
रा	रास्ता	सहज	शनैः
रुक्का	जोर की आवाज	वार	देर

- -

है पर आदिम अवस्था में व्यक्ति का कुछ भी मूल्य नहीं था – समस्त जाति ही एक इकाई थी । अतः लोक गीत की उत्पत्ति उस जाति के सामूहिक प्रयास का ही परिणाम है । स्टेंथल का मत भी लोकवार्ताविदों को तथ्यपूर्ण नहीं प्रतीत हुआ ।

इंग्लैण्ड के सुप्रसिद्ध गीत-संग्रह कर्ता बिशप पर्सी का मत है कि प्राचीन काल में चारण लोग ढोल या सारंगी बजाकर गीतों की रचना करते हुए गाते जाते थे । छोटे गीतों की सृष्टि उन्हीं द्वारा हुई है ।[1] पर्सी का मत कुछ लोक गीतों और लोक गाथाओं पर तो लागू होता है पर सब पर नहीं ।

लोक कविता की उत्पत्ति के सम्बन्ध में [illegible] के मत को व्यक्तिवाद के नाम से अभिहित किया गया है । उनके मतानुसार जिस प्रकार कला की कोई कृति कलाकार की अपेक्षा रखती है उसी प्रकार कविता भी किसी कवि की सृष्टि होती है । लोक कविता के सम्बन्ध में भी यही बात समझनी चाहिए । उसका सम्बन्ध किसी विशिष्ट कलाकार से ही होता है ।[2]

पाउण्ड के मत को अभिनवकालीन व्यक्तिवाद कहा गया है । उसका मत है कि जिस प्रकार किसी काव्य का लेखक होता है उसी प्रकार लोकगीतों की रचना भी किसी व्यक्ति द्वारा हुई है, परन्तु उसमें व्यक्तित्व का अभाव रहता है । उसकी रचना में [illegible] अवश्य मिलती है परन्तु उसका व्यक्तित्व उसमें बिल्कुल नहीं रहता । वह एक समष्टि है, व्यक्ति नहीं ।[3] मौखिक परम्परा के कारण उन गाथाओं में अन्य व्यक्तियों की रचनाएँ भी मिश्रित हो जाती हैं । उनमें नये अंश जुड़ जाते हैं और पुराने छूट जाते हैं ।[4]

1- बिशप पर्सी-- रेलिक्स आफ एंशियन्ट इंग्लिश पोयट्री, भूमिका, पृ० 24

2- एफ बी गुमेर - ओल्ड इंग्लिश बैलेड्स, भूमिका, पृ० 49

3- पाउण्ड- दी [illegible] पापुलर बैलेड्स, पृ० 24

4- ——वही—— पृ० 17

११. विवाह संस्कार के गीत :-

विवाह शब्द वि "वह" धातु के घञ् प्रत्यय लगाने से बना है। इसका अर्थ होता है पति आश्रम में प्रवेश करना अथवा गृहस्थ आश्रम में मिलकर विधिपूर्वक जीवन वहन करना। सामान्यतः विवाह शब्द का तात्पर्य स्त्री पुरुष के उस सम्बन्ध से है जो मैथुन के साथ ही समाप्त नहीं हो जाता अपितु उसके बाद भी उनसे उत्पन्न शिशु तथा उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति करने के योग्य नहीं हो जाता, विद्यमान रहता है।

विवाह संस्कार भारतीय संस्कृति में ही नहीं अपितु संसार की सभी संस्कृतियों में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। पितृ ऋण से मुक्त होने के लिए विवाह करना अनिवार्य है। धार्मिक कर्तव्यों को निभाने के लिए यह भी आवश्यक है। प्राचीन हिन्दू धर्मग्रन्थ में गृहस्थाश्रम अनिवार्य सा माना जाता रहा है और इस कारण विवाह भी अनिवार्य था। स्मृतियों में गृहस्थ आश्रम को श्रेष्ठतम आश्रम कहा जाता है।

हिन्दू विवाह एक प्रकार का धार्मिक संस्कार है और यह बिना धार्मिक कृत्यों के सम्पन्न नहीं किया जा सकता है। यह पुरोहित द्वारा अग्नि को साक्षी मान कर सम्पन्न कराया जाता है, बिना किसी संस्कार के किया विवाह अवैध माना जाता है।

विवाह का अवसर समाज में अत्यंत महत्वपूर्ण था। इसी कारण कई विधि विधान प्रथाएं तथा रीतियाँ प्रचलित हो गईं। विवाह समुदाय में हर्ष एवं आनन्द की घटना होती है। अतः लोग भोज, संगीत, एवं नृत्य आदि कर प्रसन्न होते हैं। प्रत्येक अवसर का गीत सम्बन्धित मार्मिक एवं अनूठा होता है।

फेरे :- स्वागत के बाद बारात जनवासे में जाती है और तत्पश्चात वधु को उसके मामा उसे पूर्व की तरफ मुंह कराके मण्डप में लाता है । और उसे हवन कुण्ड के पास बैठा देता है । भाभी के गोद में लिपटी कन्या फेरों के बाद एक नयी जिन्दगी में प्रवेश करेगी । अतः इस अवसर पर औरतें गा उठती हैं :-

एक गोड़ कमल धरकर आई, आगे मेरा सभी [illegible] छूट रहा ।
एक गोड़ [illegible] धरकर आई, आगे मेरा भाभी नाता छूट रहा
एक गोड़ [illegible] धरकर आई, आगे मेरा बाबल राजा छूट रहा

इस गीत को अन्य सम्बन्धियों के नाम जोड़कर आगे भी बढ़ाया जाता है । चूँकि वर एवम् वधु के वस्त्रों के छोर परस्पर बाँधता है इसे "गठजोड़" कहते हैं । तात्पर्य यह है कि अब दोनों पहले अलग अलग थे अब एक बन्धन में बन्ध गये हैं । अतः भावी जीवन में मिलकर कार्य करेंगे । यह "गठजोड़" वर के घर तक बन्धा रहता है । पुरोहित मन्त्रोच्चारण करके हवन करता है । वधु का दाहिना पैर पत्थर पर रखवाकर उसका पति प्रायः पत्थर की तरह दृढ़ रहने का मन्त्र कहलाया जाता है । वर और वधु अग्नि की प्रदक्षिणा करते हैं । वर अपने दाहिने हाथ की ओर आगे बढ़ता है और कन्या उसके पीछे चलती है । कई बार तो वह इतनी तेज चल पड़ती है कि सखियां उसे बीच में ही टोक देती हैं :-

धीरे [illegible] म्हारी लाडो,
[illegible] पति [illegible] पुरोहित ।

इस प्रकार फेरों के बाद उल्टे चक्कर वह काटता है फिर बीच खोले

---

1. मार्ग रोकना ।

<u>III- मृत्यु सम्बन्धी संस्कार</u> :-

मृत्यु पर कोई विजय नहीं पा सकता है। इसे अंतिम विलक्षण एवं भयावह समझा जा रहा है। मृत्यु के बाद मनुष्य का क्या होता है? यह प्रश्न आदिकाल से अनुत्तरित रहा है इस रहस्य को आजतक कोई नहीं जान सका है। प्रत्येक धर्म में इसके विषय में भिन्न 2 दृष्टिकोण हैं। मृत्यु गीत की परम्परा भारतीय समाज बहुत प्राचीन है। वेदों में इस प्रकार के अनेक सूक्त उपलब्ध हैं। मृत आत्मा को सम्बोधित करते हुए वैदिक ऋषि कहता है :-

प्रेहि प्रेहि पथिभिः पूर्व्येभिः
यत्रा नः पूर्वे पितरः परेयुः
उभा राजाना स्वधया मदन्ता
यमं पश्यासि वरुणं च देवम् ।[1]

हरियाणा के लोगों पर वैदिक परम्परा का एवं प्राचीन आर्यों की परम्पराओं का सीधा प्रभाव पड़ा है। मृत्यु संस्कार में भी यह स्पष्ट साफ रूप से नजर आता है।

<u>शव की व्यवस्था</u> :- जब कोई यह अनुभव करता है कि इसकी मृत्यु होने वाली है तो वह स्वयं या उसके सम्बन्धी उसकी मृत्यु निकट देखते हैं तो सभी निकट सम्बन्धी इकट्ठे हो जाते हैं। उसका सिर उत्तर की ओर पैर दक्षिण की तरफ कर दिया जाता है। मरणासन्न व्यक्ति को चारपाई से उतार कर स्वच्छ गोबर से लीपी हुई भूमि पर लिटा दिया जाता है। ऐसी मान्यता है कि उत्तर में विष्णु पुरुष रहता है। मरणासन्न व्यक्ति को सांसारिक मोहमाया से छुड़ाने को उसके कान के पास रामायण या गीता का पाठ किया जाता है। मरणासन्न व्यक्ति के मुख में गंगा जल एवं तुलसी दल भी डालते हैं। शव को स्नान कराके नये कपड़े से ढक देते हैं। रात्रि में मृत्यु हो जाने पर परिवार के सब सदस्य जागरण करते हैं और भजन आदि गाते हैं।

---

1. ऋग्वेद 10/14/7

तारक आदि स्थानों पर श्राद्ध तर्पण कराया जाता है । प्राचीनकाल में पृथूदक (पेहोवा) तीर्थ पर सरस्वती के तट में खड़े होकर महाराज पृथु ने अपने पिता महाराज वेन का श्राद्ध तर्पण करवाया था ताकि स्वर्गवासी को मुक्ति मिल सके ।

बरसौंदी :- मृतक की मृत्यु वाले दिन एक साल तक हर मास उसी तिथि में यज्ञ करवाकर ब्राह्मण जिमाया जाता है जो "महीना" कहलाता है फिर छः मास बाद "छःमाही" और साल बाद बरसौंदी की जाती है । जिसमें रिश्तेदार सभी कुनबवाले इकट्ठे होते हैं । ब्राह्मणों को जिमाकर यज्ञ भी करवाया जाता है । "काज" भी इसी अवसर पर होता है । अब कई कार्यक्रम जिनका कि लाडू या फिर विवाह आदि इत्यादि कि क्रिया भी आरम्भ की जाती है ।

बरसौंदी के बादों के दिनों में मृतक का मरने वाली तिथि को ही श्राद्ध जो "कनागत" कहलाता है और प्रत्येक वर्ष उसके मरने की तिथि को ब्राह्मण जिमाया जाता है दीपसंकल्प और दान दक्षिणा देना आदि रस्मों की पुनरावृत्ति होती है ।
रण्डवे का हाल बड़ा ही कष्टदायी होता है उसे अंधेरानी को उसकी पत्नि दिखाई देती है वह सुबक सुबक कर रोने लग जाता है परन्तु वास्तव में उसकी बात पूछने वाला कोई नहीं रहता :-

रण्डवा तो रोवै आधी रात, सपने में देखी कामणी[1]
कोई ना पिसै उसका पीसणा, कोई ना पूछे उसकी बात,
सिसक सिसक[2] रण्डवा रो रहा सारी है पूरी रात,
सपने मैं देखी कामणी ।
कोई ना रोटी बना देवे, कोई ना पूछे उसकी बात,
सपने मैं देखी कामणी ।

---

1. प्रेयसी ।
2. सुबक सुबक कर ।

३. देवी - देवता एवम् व्रत - त्योहारों के गीत :-

भारतीय संस्कृति लोक संस्कृति - जन संस्कृति गांवों में ही निवास करती है। कृषक की जिन्दगी में उसके जीवन साधन, ऋतु परिवर्तन के अनुसार घूमते हैं। प्रत्येक ऋतु परिवर्तन उसके लिए विशेष महत्व रखता है। इसी कारण लोक संस्कृति का भी इनसे अत्याधिक सम्बन्ध है और उसमें समाये पर्वों और उत्सवों का भी। लोक संस्कृति के अभिन्न अंग तीज - त्योहारों की थाती, देवी - देवता की स्तुति, व्रतों की उपासना नारी के आंचल में सुरक्षित दिखते हैं। उसके अभाव में इनकी सम्पन्नता नहीं हो सकती। इसी कारण लोक संस्कृति के विभिन्न मौकों पर गाये जाने वाले नारी कण्ठ की ललित मधुर ध्वनी युक्त गीतों और सहज स्वाभाविक लय में थिरकने वाले नूपुरों का अपना स्थान है।

इस प्रदेश की लोक जीवन नीति और त्योहारों का महत्व " आठी त्यूहार ? त्योंहार ! दर चलिए त्योहार " से स्पष्ट झलकता है। त्योहारों की दृष्टि से यह क्षेत्र अपना निजि स्वरूप रखते हुए भी उत्तरी भारत से बिल्कुल अलग नहीं है। होली, दिवाली, दशहरा, संक्रान्ति आदि त्योहार प्रायः दूसरे स्थानों की तरह यहां भी मनाये जाते हैं। फिर भी अनेक पर्वों में इसकी अपनी विशेषता है।" " इस क्षेत्र में त्योहार और उत्सव हमारे जीवन को अपनी अद्भुत शोभी से भरपूर करते हुए उसे सन्तुलित रखते हैं। सम्भवतः सन्तुलन के दृष्टि कोण से ही कुछ त्योहारों को छोटे - छोटे त्योहारों और कुछ अन्य को बड़े त्योहारों का नाम देकर उन्हें अलग - अलग मान्यता दी गई है।"[1]।

वर्ष के भिन्न - भिन्न मासों में आने वाले पर्व, व्रत त्योहारों

---

1. जन-साहित्य विशेषांक पृष्ठ 53

आषाढ मास में कोई उत्सव अथवा त्योहार नहीं मनाया जाता है। इसका कारण शायद यह है कि इस मास में वर्षा आरम्भ हो जाती है। और कृषि प्रधान प्रदेश के लोग अपने खेती बाड़ी के कार्यों में जुट जाते हैं। उत्सव के लिए अवसर कहाँ ? यह तो व्यस्तता का महीना है।

श्रावण (सावन) मास में पर्वों एवम् त्योहारों की झड़ी लग जाती है। यह फुहार और मौज बहार का महीना होता है। "आई तीज बोर गी बीज" से तात्पर्य त्योहारों के आगमन का सूचक माना जाता है। झूले पर स्त्रियों का विशेष आकर्षण होता है। इस मास में विशेष [illegible] रहती है। मन सा छाया रहता है। मेघ छाये जा चुके हैं। बादलों की गर्जन, घनघोर बादलों में दामिनी का चमकना फिर रह रह कर रिमझिम बरसात का वातावरण वास्तव में आनन्द ही आनन्द होता है। ऐसे प्राकृतिक वातावरण में त्योहार प्राणी मात्र में स्वाभाविक आनन्दमयी तरंगों का समावेश कर देता है। शृंगारिक भावनाओं से अभिभूत नवल स्त्रियाँ मस्ती भरी गीतों से झूल रही है। कहीं नवीन बालिकाएं भ्रातृ प्रेम में विभोर हो जाती हैं:-

मेरी पींग बढ़े री लाम्बड़ा मोर,
2
रे बीरां बारी बारी जाँ।

सावन के पहले [illegible] में "श्रिया पांचों" को भाई की दीर्घायु की कामना में उपवास किया जाता है। फिर पचोवली या बूंदी को शिवरात्रि का त्योहार मनाया जाता है - हे कैलाश के वासी तेरी जय हो.. और बम बम बम लहरी आदि भजनों से वातावरण गूंज उठता है। शिवरात्रि

---

1. भाई।

और "भूरण लागी है मां मैरी बाग मैं" की अंतीम स्वर लहरी वातावरण मैं रस घोल देती है :-

भूरण लागी है मां मैरी बाग मैं री ।
म्हारी कोए सा सुलेगी प्यार[1] ।
भूरण लागी है मां मैरी बाग मैं री ।।
कोए पंवरा की का मोर बोल गो री ।
मां री कोए सा सुलेगी प्यार ।
भूरण लागी है मां मैरी बाग मैं री ।।

" झूले के गीत अथवा हिण्डोला राग सावण की मधुरिमा को चार चांद लगा देते है। मल्हार राग की तरह पर आधारित ये गीत सावन के वातावरण की अनुभूति कितना प्रभाव बना देते है। ऐसे तो कोई भूरा भी ते को नाच सकता है[2] झूले के एक गीत इस प्रकार है :-

बहू :- आया री सासड़ राणी सावण, पाटड़ी[3] घड़ा दे चन्दन रुख की[4]।
सासड़ :- म्हारे तो बहू चन्दन न रुख जाय बुड़वायो[5] अपने बाप ते ।
बहू :- आया री सासड़ सावन झूल घड़ा दे पीले पाट की ।
सासड़ :- म्हारे तो बहू पीला न पाट जाय बटवायो अपने बाप ते ।
बहू :- आपणा ने दे दी पाटड़ी म्हारे ते अपने घर दिया रोवणा ।
कोड़ री सासड़ थारी पाट बहू [illegible] थारा रोवणा ।
आते री सासड़ माई जाया बीर हमने छुदा[6] दे भाई बाप ते ।
सासड़ :- इसके बहू मोला नाय लाडक धणी लाईयो अपने बाप ते ।

दूर का नूर झूले पे कितना निखर आया है उसकी

---

1. प्यार । 2
2. हरियाणा के लोक गीत सांस्कृतिक मूल्यांकन लेखक डा० भीम सिंह पृ० ।।
3. झूले की पट्टी (पीढ़ी)
4. कटवादे चन्दन के वृक्ष को ।
5. वृक्ष ।
6. भेज दे ।

गीतों को संज्ञा देना ही उपयुक्त जान पड़ता है। निम्नलिखित क्रीड़ागीत
शिशुओं के खेल एवं मनोरंजन का प्रमुख साधन है :-

आट्टे बाट्टे दही चटाके
गौरी गाँ के गोरे बाछे।
अड़े कोन्या बाबा अड़े कोन्या पापा
अरे.. यू पाग्या.. यू पाँग्या ॥

यह था छन्दात्मक गीत। ऐसे गीतों में तीन चार अधिक शब्दों का प्रयोग नहीं होता। यह शिशुओं के मानसिक विकास की स्थिति का सूचक है। इन गीतों में कल्पनाएं भी बड़ी विचित्र होती हैं। ये गीत अनुकरण करने की प्रवृत्ति के सूचक, रोचकता एवम् जीवन में अग्रसर होने के लिए सक्षम बनाते हैं। ये थे गीत दो छह वर्ष के आयु के शिशुओं के गीत।

छः वर्ष से 16 वर्ष तक की आयु के बाल्य और किशोरावस्था के गीतों के शब्द, वाक्य एवम् भाव बाल-मनोविज्ञान की दृष्टि से बड़े रोचक होते हैं। जहाँ कहीं भी दो चार बालक या बालिकाएँ एकत्रित हुए -वहीं उनके खेल आरम्भ हो जाते हैं।-

उमड़ घुमड़ के पहुँचा दरवाजा
कोए ल्यो सिपाही कोए ल्यो भाजा

शिशुओं के कण्ठामाधुर्य में एक निश्चित गति है जो स्वर प्रवाहित होते हैं वहाँ उच्चरित शब्द लयात्मक होकर गीत का स्वरूप धारण कर लेते हैं :-

तोड़ तोड़ तोड़ी आई
तोड़ दी तोड़ दी[1] ।
कोए ल्यो चम्पा
कोए ल्यो रस गुल्ला ।

1* पिचरिस कद्दो ।

शिशु जब कुछ बड़ा होजाता है और संसार की वस्तुओं को समझने एवम् पहचानने का सामान्य ज्ञान प्राप्त करने की स्थिति में होता है, तब बुद्धि को परखने के लिए कुछ गीत क्रीड़ाओं का आयोजन होता है। दैनिक जीवन में व्यवहृत कुछ वस्तुओं को लेकर बालक अपने ज्ञान को परख करते हैं :-

कोठे ऊपर के ?.....अनार।
अनार में के ? ..... दाणा।
दाणे में के ?....   रस।
आहरी[1] ..... रैंरी..... कह दिये।

बालक बालिकाओं के गीत उनकी आयु, ज्ञान और बौद्धिक स्तर को पूर्ण रूपेण प्रतिबिम्बित करते हैं ? एक विनोद पूर्ण खेल का नमूना देखिए[2]:-

बुढ़िया री   बुढ़िया के टोहवै से ...सुई टोहूं सूं।
सुई का के करैगी ?.... कोथला सीमूंगी।
कोथला में के घालैगी ?   राबड़ी घालूंगी।
राबड़ी का के करैगी?   भैंस प्याऊंगी।
भैंस का के करैगी ?.. दूध काढूंगी।
दूध पोवै री दूध पी ले री।

उठकर सब बच्चे तेज तर भागते हैं।

बालगीतों के मनोवैज्ञानिक आधार की दृष्टि पात करने से स्पष्ट होता है कि उनकी रचना पर घर एवम् ग्रामीण वातावरण का बहुत प्रभाव होता है।

---

1. दोस्ती।
2. हरियाणा प्रदेश का लोक साहित्य लेखक डा० शंकर लाल यादव पृ० 452

"चतुर्थ अध्याय"

बांगरू लोक साहित्य में कथात्मक एवम् सांग परक गीत

भाग (क): कथात्मक गीत

1. लोक गाथाओं की विशेषतायें :-

(1) अज्ञात रचनाकार (2) प्रामाणिक मूलपाठ की कमी

(3) संगीत और नृत्य का साहचर्य और सहयोग

(4) स्थानीयता की गंध (5) मौखिक परम्परा

(6) अलंकृत शैली का अभाव (7) उपदेशात्मक प्रवृत्ति का अभाव

(8) रचनाकार के व्यक्तित्व का अभाव (9) दीर्घ कथानक की विशालता

(10) टेक पदों की पुनरावृत्ति (11) इतिहास की संदिग्धता ।

2. लोक गाथा और गीत कथा

3. लोक गीत और लोकगाथाओं में भेद

4. बांगरू लोक गाथाओं (कथात्मक गीतों) का वर्गीकरण

(1) प्रेम कथात्मक गाथायें :- निहालदे का व्याख्यात्मक अध्ययन ।

(2) वीर कथात्मक गाथायें :- आल्हा, गोरा बादल का व्याख्यात्मक अध्ययन ।

(3) अद्भुत (आश्चर्यजनक) कथात्मक गाथायें - गूगावीर का व्याख्यात्मक अध्ययन ।

(4) लोक कथायें :- सत्यवादी हरिश्चन्द्र का व्याख्यात्मक अध्ययन ।

भाग (ख) सांगपरक गीत

1. लोकनाट्य परम्परा और लोकमंच
2. बांगरू सांगों का उद्भव एवम् विकास
3. बांगरू सांग की रचना एवम् उसका स्वरूप
4. बांगरू सांग और हिन्दी नाटक में अन्तर
5. बांगरू सांगों में प्रेम तत्व
6. बांगरू सांगों में गुरु भक्ति
7. बांगरू सांगीत में सूफी प्रभाव
8. बांगरू सांगों में जीवन दर्शन
9. बांगरू सांगों पर फिल्मी प्रभाव
10. कुछ प्रमुख बांगरू सांगों की रागनियां एवम् उनका विवेचन ।

0----0----0

3. <u>लोक गीत और लोक गाथाओं में भेद</u> :- लोक गाथा में दीर्घ कथा-वस्तु रहती है परन्तु लोक गीत में कथानक का अभाव ही रहता है। किसी भाव विशेष पर ही लोक गीत की रचना हो सकती है। कहीं कहीं कथानक रहता भी है तो गौण रूप से।

दूसरे लोक गाथा में चरित्रों की प्रधानता रहती है। किसी व्यक्ति विशेष के सम्पूर्ण जीवन का सांगोपांग वर्णन उनमें रहता है। परन्तु लोकगीतों में भावों की प्रधानता रहती है। नित्य प्रति की घटनाओं से सुख एवम् दुख, हर्ष एवम् आनन्द, प्रार्थनाएँ एवम् भावनाएं उनमें रहती हैं।

तीसरे लोक गाथा का आकार बड़ा होता है। वह महाकाव्य के समान विशाल एवम् गहन होता है। पर लोक गीतों का स्वरूप अपेक्षाकृत काफी कम होता है।

चौथे लोकगाथा में विषय की इतनी विविधता नहीं रहती जितनी लोक गीतों में रहती है। वहाँ केवल कथानक से सम्बन्धित विषयों का ही निरूपण होता है पर लोक गीतों का विषय क्षेत्र विस्तृत होता है। विभिन्न संस्कारों, त्योहारों, प्रथाओं, ऋतुओं एवं परम्पराओं आदि का उनमें वर्णन होता है। लोक गाथा में समस्त विषय मुख्य कथानक से सिमटे हुए रहते हैं। उनका स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं होता। पर लोक गीत में समस्त विषय स्वतन्त्र रूप में आ सकते हैं। लोक गाथाओं में संगीत तत्व का एक समान प्रवाह रहता है। एक ही लय में प्रेम, विरह तथा युद्ध आदि का वर्णन हो जाता है। परन्तु लोक गीतों में भावों के अनुकूल संगीत शैली बदल जाती है।

4. <u>बांगरू लोक गाथाओं (कथात्मक गीतों) का वर्गीकरण</u> :- लोक गाथाओं का निर्माण चारणों और भाटों द्वारा प्राचीनकाल से होना शुरू हुआ था।

आदि गाथाएँ आती हैं।

पंचम वर्ग "सखी सरवर" के प्रकार की गाथाओं का है।

षष्ठ वर्ग "स्थानीय प्रवीरों" हरफूल जाट जुलाणी वाला आदि गाथाएँ आदि/ई आती हैं।

विषय और विधान के आधार पर लोक गाथाओं के और भी कई भेद किये जा सकते हैं। "कथावस्तु के आधार पर इन गाथाओं के भेद पाया जाता है, यह भेद कई प्रकार का हो सकता है। परन्तु प्रेम, उत्साह एवम् अद्भुत तत्वों की प्रधानता से इन्हें तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है।"[1] परन्तु हमारी दृष्टि में कथात्मक गीतों या लोक-गाथाओं के तीन की बजाय चार भागों में वर्गीकृत किया जाना अधिक ही साहित्यिक दृष्टि से अधिक उपयोगी है :-

(1) प्रेम कथात्मक गाथाएँ (Love Ballads)
(2) वीर कथात्मक गाथाएँ (Hero Ic Bals)
(3) अद्भुत (आश्चर्य जन्य) कथात्मक गाथाएँ (Coronachamd)
(4) लोक कथाएँ (Folk Tales)

(1) <u>प्रेम कथात्मक गाथाएँ :-</u> सभी प्रकार की प्रेम तत्व की प्रधानता वाली गाथाएँ जिनमें प्रेम आधारित परिस्थितियों एवम् वातावरण से जन्म लेता है प्रेम कथात्मक गाथाएँ कहलाती हैं। सभी प्रकार की पौराणिक गाथाएँ - धार्मिक परम्पराओं वाली लम्बी कथाएं, संस्कृत साहित्य से सम्बद्ध आख्यान, किसी स्थानीय घटना के नायक और वीरता की गाथा तथा युद्ध आख्यान की सम्पूर्ण कथा के साथ साथ अन्य उपगाथाओं को भी अपनी परिधि में समेटे हुए हैं - इन आख्यानों (कविताओं) की श्रेणी में आते हैं[2]।

---

1. हरियाणा प्रदेश का लोक साहित्य लेखक डा॰ शंकर लाल यादव पृ॰ 268
2. हरियाणा लोक गाथाएँ लेखक श्री देवी शंकर प्रभाकर पृ॰ 10

भाट्टो और जोगियों द्वारा साखों, पवारों और गीतों में ढलकर परम्परागत (पीढ़ी दर पीढ़ी) रूप में जन गायकों को प्राप्त होती रही । आल्हा-ऊदल, भूरा बादल, जैमल फत्ता, गूगा, हरफूल जाट जुलाणी वाला आदि प्रसिद्ध गाथाएँ इसी के अन्तर्गत आती है । आल्हा के प्रत्येक दृश्य में वीरता का चित्रण है, भूरा बादल के साखे, जैमल फत्ता के पवारे और हरफूल जाट जुलाणी वाला जातीय वीराख्यान है । गूगा का पराक्रम यहाँ के जनमानस के हृदय में सम्मान पूर्ण अंकित है ।

<u>आल्हा :-</u> यहाँ के वीर रस साहित्य को दो शैलियों में बाँट सकते है - प्रथम आल्हा एवम् दूसरे साखे । बादलों की गर्जन तर्जन के मध्य चौपाल से सावन भादों की सुहावनी रातों में ढोलक की थाप के साथ साथ आल्हा खण्ड की वीरता से भरी हुई पंक्तियाँ सहज ही सुनाई दे सकती है । शान्ति वन्दना ही देखिए जो आल्हा खण्ड के गायन में आरम्भ होती है :-

जय जग जननी, सब दुःख हरणी, तारण तरणी पालन हार ।
शरण पडूया हूँ माता तेरी नैया मेरी लगादे पार ।
पूरब सुमरूँ कामाख्या नै उतर सुमरूँ श्री केदार ।
पच्छम सुमरूँ विंध्य वासिनी, दक्खन रामेश्वर सरकार ।
धौल गिर की सुमर भवानी और कैलाश शारदा माय ।
मैया सुमरूँ गढ़ मेरठ की कलकत्ते की काली माय ।

आल्हा उत्तर भारत के अधिकांश भाग में गाया जाता है परन्तु हरियाणावी आल्हा अपनी शैली स्वरों में केन्द्रित है । यह एक वृहत वीर गायन है । वर्षा ऋतु में महीनों रात ढलने पर भोर होने तक गायी

इसमें संगीत, नाट्य और नृत्य तीनों का सुन्दर समन्वय पाया जाता है । क्योंकि यह शैली संस्कृत नाटकों में भी थी। लोकमंच ने आदिम काल से मध्यकाल तक स्वांग परम्परा को बनाये रखा । मध्य युग की अव्यवस्थित परिस्थितियों ने परिस्थितियों ने लोकमंच में नवीनता फूंकी । संस्कृत नाटक ए॰ बी॰ कीथ ने यह बताया । भक्ति काल में सांग या स्वांग के बदले भक्त और मौलाना गनीमत की मसनवी "नौरंगे इश्क" में स्वांग भरने को भांड बाज कहा । ये भांड बाजों की मण्डलियाँ घूम घूम कर स्वांग प्रदर्शित करतीं । औरंगजेब से पहले भरन या नकल करने (स्वांग) का प्रचलन दिल्ली के आसपास खूब था । महाभारत में भी स्वांग का उल्लेख प्राप्त होता है[1] :-

कहुँ नृत्य कारी नचि गावें ।
कहुँ नौ टंकी स्वांग दिखावें ॥

शनैः शनैः ये जनता के आध्यात्मिक मनोरंजन का माध्यम बन गये और इसी उद्देश्य पूर्ति के लिए " सांगीत" लिखना और खेलना भी आरम्भ हो गया ।

2॰ सांगीत सांगों का उद्भव एवं विकास :-

सांगीत परम्परा के अन्तर्गत जिन वर्तमान में विद्यमान नाट्य विधाओं को स्वीकार किया गया है वे निम्न हैं[2] :-

1॰ मथुरा, वृन्दावन तथा आगरा में प्रचलित भगत परम्परा (जिसे कहीं कहीं ख्याल नाम से भी पुकारा जाता है)

2॰ हाथरस की स्वांग परम्परा ।

1॰ इस महाभारत की रचना मौलानागनीमत के समकालीन हिन्दी के प्रसिद्ध कवि सबल सिंह चौहान ने की थी ।

2॰ सांगीत एक लोक नाट्य परम्परा लेखक श्री रामनारायण अग्रवाल पृ॰ 16

III. कानपुर की नौटंकी परम्परा ।

IV. हरियाणा तथा मेरठ की सांग परम्परा ।

वास्तव में उक्त नाट्य विधाएँ मूलतः कोई पृथक पृथक परम्पराएँ नहीं है वरन् ये सब एक ही मूल लोक धर्मी नाट्य- परम्परा की कड़ी है जो मध्यकाल में स्वांग नाम से प्रचलित रही । इसी स्वांग का एक नाट्य रूप उत्तर-मध्यकाल में उत्तर तथा मध्यकाल में ख्याल के नाम से विकसित हुआ था और उसी ने पंजाब में ख्याल, राजस्थान में तुर्रा कलगी माल्वे में माँच तथा ब्रज क्षेत्र में भगत और स्वांग व हरियाणा तथा मेरठ में सांग नाम से प्रसिद्धि प्राप्त की थी । वास्तव में ये सभी नाट्यरूप मूलतः स्वांग या ख्याल परम्परा के ही स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप विकसित विभिन्न रूप है[1] ।

यह संगीत शब्द सांग के रूप में आज भी हरियाणा में सुरक्षित है । पहले यहाँ हाथरसी स्वांग की परम्परा बड़ी लोकप्रिय रही है । परन्तु वह परम्परा यहाँ पनप नहीं सकी । आज भी ब्रज की रूप शैली का यहाँ बड़ा सम्मान है परन्तु यह परम्परा भी यहाँ से भिन्न है यहाँ की सांग परम्परा का अपना अलग ही अस्तित्व है । मध्यकाल में हरियाणा के लोक कवि सादुल्ला ने लोकगाथाओं और लोकनाट्यों की रचना की जो उत्तरोत्तर बढ़ती गई[2] ।

यहाँ की सांग परम्परा सन् 1800 से पूर्व ही आरम्भ हो चुकी थी । सांग परम्परा अभिनय, मंच साज्जा एवं वेश भूषा का समीक्षात्मक परिचय का दृश्य रागनी के माध्यम से देखिए :-

हरियाणा की कहानी सुण ल्यो दो सौ साल की ।
कई किसम की हवा चाल्ली नई चाल की ।

---

1. संगीत एवं लोक नाट्य परम्परा लेखक रामनारायण अग्रवाल पृ० 16
2. मध्यकाल में 12-13 वीं शताब्दी में अब्दुल रहमान कवि ने अपभ्रंश में सन्देश रासक की रचना की थी ।

छीने लाल के गुरु साँग का एक अन्तरा इस प्रकार है :-

सात द्वीप नव खण्ड में नहीं पाई तेरी माया ।

कहता छीनो लाल मात गुरू का साँग बनाया ।

डा0 राम नरेश चौबे के अनुसार साँग की उत्पत्ति सबसे पहले सहारनपुर में हुई । परन्तु सहारनपुर भी हरियाणा का अंग रहा है[1]। इसी प्रकार कुरु में स्वाँग को आगरा और हाथरस वालों ने गायकी दृष्टि से परम्परा रखी । जिसका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है । हाथरस के कलाकारों ने इसे नये छन्द, नई तर्ज और नया रंग देकर अपने ही तरीके से विकसित किया । आगरे वाले यद्यपि प्राचीन और प्रामाणिक होने पर भी व्यावसायिक रूप धारण नहीं कर सके । इसी प्रकार कुरु के साँगों को काफी लोकप्रियता मिली । परन्तु कुरु के साँगों की हरियाणा को नौटंकी की अमर देन है । नौटंकी सुन्दरी के जीवन वृत्त पर आधारित एक स्वाँग अत्यन्त लोक प्रिय हुआ । परन्तु इसकी मौलिक प्रति न मिलने पर महत्वपूर्ण सामग्री उपलब्ध नहीं हो सकी ।

अली बख्श ने छीने लाल के साँगों की परम्परा को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण कार्य किया । इनका समय 19 वीं शती का उत्तरार्द्ध (1854 से 1900 ई0) माना जाता है । बानगी के रूप में इन्होंने ख्याल विधान अलाईद्द की रागनी का एक अंश प्रस्तुत किया है :-

मोती लूट गई री हम बेरनया

बेरनया री हम बेरनया.... मोती लूट ....

आज सुहाग हमारे री उनने खिलवन लागी मेरो अंखियाँ ।।

नैन दिखावन देरो पिया पिया बिन तड़फन लागी है छतियाँ ।।

मोती लूट गई री हम बेरनया ।

---

1. डा0 देवेन्द्र दीपक और देवी शंकर प्रभाकर के मतानुसार सहारनपुर हरियाणा का ही एक अंग रहा है ।

स्वामी हरिदास के शिष्य नेतराम 19वीं सदी के अन्तिम चरण में एक नाटकीय घटना से कथावाचक से सांगी बन गये[1]। इनका पहला सांग शीला सेठानी था जो काफी लोकप्रिय एवम् दिलचस्प रहा। ये सामाजिक कुरीतियों की धज्जियाँ उड़ाते थे। राम लाल इनकी मण्डली में शामिल थे।

19 वीं शताब्दी की अन्तिम दशाब्दी में सांग मंच पर दीपचन्द नामक एक प्रतिभा सम्पन्न सशक्त व्यक्तित्व का प्रादुर्भाव हुआ। उन्होंने सांग प्रदर्शन को नया रूप प्रदान किया। पं0 मांगेराम की रागनी से स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि " लगभग 225 वर्ष पूर्व जिस ज्योति को किशन लाल भाट ने प्रज्वलित किया। 170 वर्ष बाद उसी को पं0 दीप चन्द ने रूपक प्रदान किया[2]। आरम्भ नायक नाई का मंच पर अपना अभिनय करते सारंगी पर ढोलकी वाले उनके पीछे घूम घूम कर साज बजाते थे। यह था सांग का स्वरूप, मूढ़े का सामान। पं0 मांगेराम की रागनी में दीप चन्द की सांग परम्परा, अभिनय मंच, वाद्यों एवम् वेश भूषा का समीक्षात्मक परिचय इस प्रकार दिया गया है :-

एक सौ सत्तर साल बाद में दीप चन्द होग्या
साजिन्दे तो बठा दिए और घोड़े का नाच बन्द होग्या
नीचे काला दामन ऊपर लाल कन्द होग्या
जमीला को भूल गए तू ग्यारा छन्द होग्या
तीन काफिए गाए या क्यो रीति हाल की ॥

---

1. एक स्थान पर नेतराम जी कथा कह रहे थे। वहीं किसी मेरठ के ढेढ़ी निवासी पंडित किशन लाल ने अपने सांग का दंगल जमाया। लोग कथा से उठकर सांग को देखने लगे इस पर नेतराम बड़े खिन्न हुए और उन्होंने कथा गायन को नमस्कार करके एक सांग मण्डली बना ली।

2. हरियाणा लोक मंच कहानियाँ लेखक राजा राम शास्त्री पृ0 28

इसी रागनी का आगे विवेचन देखिए :-

कहदेगा दुलीचन्द चलक भरतु एक आदे नाई
छापरी तो उसने भी नहरी आगे छुटवाई ।
तीन कावित छोड़ के लहरी रागनी गाई
उन के पीछे लखमी चन्द ने डोली बसाई ।
बता ऊपर कलम तोड़ग्या तो आजकल की ।
मंगेराम पाणची वाला मन में करे विचार
छापरी के मारे मरगे मूर्ख मुगलार
सीस पे दुपट्टा जम्फर पाया में सलवार
इस ते आगे देख लियो श्रोता सो त्योहार
अब छोरा पाहरै छापरी लिखी बात कमाल की ।।

इनका पहला सांग सोरठ ही था । "उन्होंने अपने सांग में सोरठ नाम की सुन्दरी को नायिका बनाकर अपने सांग का नाम करण "सोरठ" किया था । इससे पहले पंडित नेतराम ने भी शीला सेठानी का "सोरठ" लिखा था । हमारी राय में एक ही कथा पर दो सोरठों की रचना होने के कारण सोरठ शब्द यहाँ की जनता में स्वांग के पर्यायवाची अर्थ में भी प्रचलित हो गया यही कारण है कि "सोरठ" शब्द बाद में रोहतक परम्परा के स्वांग का समानार्थक शब्द बन गया ।"[1] ऊंचा मंच बनाकर उनपर साजिंदों तथा अभिनेताओं के बैठने का स्थान निश्चित किया । लोगों ने खुश होकर सोरठ की रस माधुरी पर मुग्ध होकर इन्हें सिक्य तुलसी की चान्दी से तोल दिया । सांगि सांगों के वास्तविक जन्मदाता का नाम दीप चन्द ही है । इनके प्रसिद्ध सांग है - सोरठ, सरदी, राजाभोज, नल दमयन्ति, गोपीचन्द महाराज,

---

1. लोक नाट्य परम्परा लेखक रामनारायण अग्रवाल पृ0 122

चतरू और बाजे दोनों हरदेवा के ही शिष्य थे बाजे भगत की सांग शैली का एक दृश्य इस प्रकार है :-

बाजे ने एक अजब्बा पाल्या, जिस के डांक मराई तीन
ख्याल क्या के कुराज पढ़ाई लोगों के जिताई दीन ।

दीप चन्द के शिष्य भरतू एवम् हरदेवा के शिष्य चतरू के इलावा लख्मी चन्द के गुरु तथा मामराज के शिष्य मानसिंह जोगी उक्त दौर के जानेमाने सांगी थे । यद्यपि उनके एक ही सांग "मदनपाल पुष्पावती" के प्रकाशन का उल्लेख मिलता है फिर भी अपनी सफल शिष्य परम्परा के कारण जितना नाम सांग साहित्य में उन्होंने कमाया उतना और किसी ने नहीं ।

सांग साहित्य के कृति स्तम्भ का समय (1903 - 1945) तक रहा । उन्होंने सांग साहित्य को एक नई दिशा प्रदान की । शुरू शुरू में वे कुछ समय नेतराम के शिष्य सोहन के अखाड़े में रहे । बाजे भगत से बाजी मारने के चक्कर में इनके सांगों में श्रृंगार एवम् अश्लील की बहुलता थी । लोग यौवन और प्रेम के इस भंवरों के जाल में फंस कर रह जाते थे परन्तु गुरु मान सिंह के सम्पर्क में आने पर इन पर धार्मिक एवम् पौराणिकता की ऐसी अमिट छाप पड़ी की उनकी आन्तरिक भावना में जैसे अध्यात्म का समावेश हो गया हो । उनकी भाव भाषा, कला कौशलता चरमोत्कर्ष पर पहुँच गई वास्तविकता तो यह है कि पं० लख्मी चन्द मान्स के किस्से सांग और अभिनय कला में बेजोड़ थे । इनकी उत्कृष्टता का वर्णन देखिए:-

लख्मी चन्द ने मार गेरे जब ललकारा गावण लाग्या
बहुत सी दुनिया पड़ी रहगी नटे 2 सांग बनावण लाग्या
लख्मी चन्द का माईचन्द था नाट खेल सो हाल्या करता
बागां मैं नौटंकी बणके छैले नै साल्या करता
आगे आगे नौटंकी फेर पाछे बामण चाल्या करता
लख्मी चन्द माली की बण कै बान्धया करता साड़ी ।

---

3. <u>हरियाणवी सांग की रचना एवम् उसका स्वरूप :-</u> सांग पद्य प्रधान होते हैं जिन्हें गीति नाट्य भी कहते हैं। इन्हें नाट्कीय काव्य कहना और भी अधिक उचित है। पुराणों की तरह इनमें गद्य का प्रयोग बहुत कम होता है। जिस प्रकार उनमें "सूत उवाच" या शौनक उवाच मिलता है। उसी प्रकार यहाँ कथानकों के तारों को जोड़ने के लिए "वार्ता" का अंश मिलता है। सामान्यतः सभी सांगों में एक लम्बा कथानक रहता है जिसका नायक कोई दानवीर और धीर ललित व्यक्ति होता है। सांग में कभी कभी कई छोटी उपकथाएँ भी रख दी जाती हैं अथवा नायक की एक प्रणयिनी के पश्चात भी कहानी को आगे बढ़ाकर एक नई लड़ी जोड़ दी जाती है। इस नई लड़ी की कहानी पूरी तरह से पहली पर आधारित होती है।[1] वार्ता जो कि गद्य भाग है कहानी को आगे बढ़ाने, उसे रोचक बनाने और नायक के प्रच्छन्न गुणों का बखान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने में महत्वपूर्ण कार्य करती है। वास्तविकता तो यह है कि पद्य और गद्य सम्मोहक मिश्रण ही सांग रूपी चोला की आत्मा है - इसमें गीत, राग और रागनी हृदय की भावनाओं को प्रकट करती है। देखिए सांग का स्वरूप :-

धर्मपुर शहर में एक श्याम लाल ब्राह्मण के एक लड़का किशन लाल था। उसका विवाह कर दिया। काशी जी पढ़ने के लिए भेज दिया। वहाँ से वह खूब पढ़ लिखकर वापस घर आया उसकी औरत भी आ गई एक रोज लड़के को क्या कहती है :-

ख्याल किशन लाल का

दोहा:-

बात मेरी मने सुन लई तो नहीं कुछ जाय।
जितना मेरा शरीर है सब गुण विद्या की खान ।।

---

1. त्रिया चरित्र सांग से [illegible] लखमी चन्द पृ 1,2

"पंचम अध्याय"

प्रमुख सांगिक कथात्मक गीतों का तात्विक विवेचन

1- "निहालदे"

(क) "निहालदे" : तात्विक विवेचन

(ख) "साखे" और "पेड़ो" में अन्तर

(ग) "निहालदे" और "राजा ढोल" और ढोलामारू

2- "जैमल फत्ता"

(क) "जैमल फत्ता": तात्विक विवेचन

3- "गूगा" (गूगापीर, गूगावीर)

(क) "गूगा": तात्विक विवेचन

4- "हरफूल जाट जुलाणी का"

(क) "हरफूल जाट जुलाणी का": तात्विक विवेचन

0----0----0

"पंचम अध्याय"

प्रमुख बांगेड कथात्मक गीतों का तात्विक विवेचन

लोक गाथाएं लोक जीवन की अभिव्यक्ति के रूप में होती हैं। अतः इनमें स्थानीय जीवन की अभिव्यक्ति प्रचुर मात्रा में होती है। लोकगाथाएं अति प्राचीन होने के साथ साथ अति आधुनिक भी हो सकती हैं। इनमें लोक-कथा, लोक कहानी एवं लोक गीत तीनों का समन्वय होता है। कुछ लोक गाथाएं संवादात्मक होने के कारण लोक नाट्य के समीपतम होती है इस प्रकार यह लोक साहित्य के विभिन्न विधाओं के तत्वों से समन्वित है, यही कारण है कि जिस प्रकार शिष्ट साहित्य में महाकाव्य जीवन की व्यापक अभिव्यक्ति की दृष्टि से विशेष महत्व रखता है उसी प्रकार लोक की परम्परागत संस्कृति की दृष्टि से लोक- गाथाओं का महत्व बहुत अधिक है।

बांगेड लोक गाथाओं के रूपात्मक अध्ययन से प्रबन्ध काव्य की रचना और रूप निमार्ण की प्रक्रिया पर प्रकाश पड़ सकता है। यह व्यापक काल और देश के आयाम में परिवर्तित एवं परिवर्धित होती हुई अपने साथ विभिन्न स्थानों की संस्कृतियों को समेटती चलती है। अतः बांगेड संस्कृति को इस प्रान्त काल या जी जाती से उद्भूत दिखाने में भी इसकी सहायता ली जा सकती है। यह कुछ ऐतिहासिक घटनाओं से भी प्रेरित रहती है। कथा, कहानी के तत्वों से युक्त होने के कारण इनका रचनात्मक एवं सांस्कृति अध्ययन विभिन्न कथात्मक रूढ़ियों के प्रयोग की दृष्टि से भी हो सकता है। इस प्रकार बांगेड लोक गाथाएं लोक साहित्य के अध्येता के लिए विशिष्ट महत्व-पूर्ण अध्येय सामग्री के रूप में उप उपलब्ध होती है। बांगेड कथात्मक गाथाएं काफी संख्या में उपलब्ध हैं इसकी कारण यह है कि यहां

- -

सांग [स्वांग] या लोक नाट्य की परम्परा बड़ी समृद्ध है। यह लोक नाट्य से पृथक रहने पर लोकगाथा के रूप में ही गेय हैं।

बांगड़ कथात्मक गीतों से हम यहाँ की संस्कृति एवं जनता के कला प्रेम की झलक पा सकते हैं। वस्तुत: यह कथात्मक रूप ही जन जीवन को अधिक व्यापक स्तर पर व्यक्त कर पाती है अत: इनका अध्ययन भी गहराई से अपेक्षित है। परस्तुत अध्याय में बांगड़ कथात्मक गीतों के अध्ययन की गहराई में उतरने का तात्पर्य यह है कि इन लोक गाथाओं की रूपांतरों के साथ साथ व्याख्यात्मक रूप प्रस्तुत किया जा रहा है। और बांगड़ कथात्मक गीतों का तात्विक विवेचन भी प्रस्तुत है।

बांगड़ के प्रमुख एवं महत्वपूर्ण रागों का विवेचनात्मक वर्णन तात्विक विवेचन सहित दिया जा रहा है। प्रमुख बांगड़ लोक राग निम्नलिखित हैं :-

1- निहालदे
2- जैमलफत्ता
3- गूगा "गूगापीर", "गूगावीर", या "जाहरपीर"
4- "हरफूल जाट जुलानीका"

1- "निहालदे" :-

यह बांगड़ की सर्वाधिक प्रिय लोकगाथा है। प्राचीनकाल में कीचकगढ़ नामक नगर में राजा चकवेसेन राज्य करते थे। उनका पुत्र मैनपाल युवावस्था में ही स्वर्ग सिधार गया था। :-

गढ़ सादर को सुमर के रंगा करते ब्यान।
मैनपाल राजा भये कीचकगढ़ दरम्यान।

मुलतान, मैनपाल की एक मात्र संतान का पालन पोषण उसके दादा

- -

वैन ने किया । सुलतान की अत्याधिक चंचलता एवं चपलता के दुष्परिणामों से तंग आकर उसके दाद ने सुलतान को देश निकाल दे दिया । भूखा-प्यासा सुलतान इन्द्रगढ़ पहुंचा । सुलतान वहा के राजा कामध्वज के पास अपने सम-वयस्क पुत्र फूलसिंह के साथ रहने लगा एक दिन दोनों मिलकर शिकार करते करते हिरण के पीछे कैलागढ़ के उद्यान में जा पहुंचे-

छोड़ कूदया राज्जा सुलतान का
जा पहुंच्या जिनान्ने बाग
झूल्ले थी बेट्टी महा की
झूल रही था राजकवांर
बेट्टी बोल्ली महा मान की
कुण से छोड़े आले साफ जवाब
जिन्दगी वाहवे बाल्या जा
सिर पै खेल्लै पक्का काल
राज्जा नै छांट कोल्या सब्ज कमाण तै
सिर पै धर दी पवरंग दाल

यह दोनों का प्रथम मिलन था । एक दिन दूसरे पर मोहित हो गये । दोनों ने वचन निभाने का प्रण लिया । दोनों के प्रेम की खबर कामध्वज को लगी । तो उसने कैलागढ़ के राजा महा से निहालदे की शादी सुलतान से करने को कहा । निहालदे से शादी करने के लिए सुलतान ने राक्षस को मारने की शर्त पूर्ण करनी पड़ी :-......और फिर उनकी

- -

शादी हो गई । उनकी शादी पर राज्य भर में सर्वत्र खुशियां मनाई गई । दोनों शादी के बाद अपने प्यार में गलतान रहने लगे । एक दिन फूल सिंह ने निहालदे को देखा और उसके रूप सौन्दर्य पर मर मिटा । उसके हृदय में उत्पन्न पाप ने मित्रता को ताक पर रख दिया और फूल सिंह ने सुल्तान को धोखे से मारना चाहा मगर सफल हो नहीं पाया । .... इसके बाद सुल्तान ने कन्दगढ़ को छोड़ दिया और निहालदे को उसके पीहर केलागढ भेज दिया । सुल्तान की तकदीर नरवर गढ़ ले गई वहां उसने लोगों में आतंक फैलाने वाले शेर को अपनी जान की बाजी दे मार डाला । नरवर-गढ़ का राजा ढोला उसकी बहादुरी पर प्रसन्न हुआ और उसकी राणी मरवण सुल्तान को देखकर उसकी ओर मोहित हो गई । परन्तु सुल्तान ने उसका मोह भंग कर दिया । और उसका भाई बनकर रहने लगा । जान्नी चोर ने एक दिन मारु को हड़ लेने की सोची परन्तु सुल्तान ने उसे पकड़ लिया जिस पर ज्यानी ने सुल्तान से पगड़ी बदल यार बनना चाहा । सुल्तान जब ज्यानी से पगड़ी बदलने का लगा तो मरवण यूं कहने लगी :-

हाथ जोड़ के बोलती मारवण
सुण ले भाई साफ जवाब
क्या चोरों की दोस्ती
नहीं होती चोरां की जात
मत बदले जान्नी से पागड़ी
बरज रही तने मारु बाहण

परन्तु दोनों पगड़ी बदल यार हो गये । उधर राजा ढोल भी उनके भाई - बहन के पवित्र रिश्ते पर शंका करने लगा । भूपसिंह और धूप सिंह

- -

दो बनजारे माह को हरण करने आये तब राजा ने उसकी सहायता के लिये असमर्थता प्रकट की तब माह रोती हुई भाई सुलतान के पास जाकै बोली :-

हाथ जोड़ कै बोल्ली मारवणा
सुण ले भाई साफ जवाब
कद[1] कद जां थी न्हाणा नै
ठा ले गी बिपता[2] की बार[3]
आ रहा बनजारा गैहां मैं
होर लेई तेरी माह बाहणा
लेकै सड़ मारे कानड़े
मार उड़ा दी धूल कनात

इतना सुनकर सुलतान के आग लग गई। सुलतान ने अपने पगड़ी बदल यार जानी चोर और गोधू जाट ताईं भी खबर भेज दी। सुलतान ने महादे का सुमरण करके वंदना की :-

शिवजी सुमरया सुलतान नै
महादेव का धरता ध्यान
तेरे भरोसे गुरुजी मैं फिरूं
बेल्ले की नइया कर दे पार
गोधू[4] मिला दे जाट का
और मिला दे जान्नी सरदार
धमक पड़ी गोधू के कान मैं
पास पड़े थे गोधू जाट
सुपना आया जान्नी चोर नै
पास पड़े जान्नी सरदार

1- कब 2- विपदा 3- बोका
4- गोधू जाट जानी चोर का साथी था, जिसने कितने ही अवसरों पर सुलतान का साथ दिया।

इस प्रकार तीनों यार इकट्ठे हो गये :-

आ पहुंचे दोन्नों यार थे
देख रहा राज्जा सुलतान
कोली भर ली गोद्दू जान्नी यार की
कट्ठे हो गये तीन्नों यार

और इस प्रकार सुलतान के साथ बनजारे पराजित हो गये। सुलतान की देश निकाले की अवधि भी समाप्त होने को थी। कंवर निहालदे अपने प्रियतम की प्रतीक्षा में अत्यन्त विकलता से कर रही थी। परन्तु नर सुलतान का कहीं आभास न मिल रहा था। एक दिन उसको एक दासी से ज्ञात हुआ कि कुछ बनजारे नर सुलतान की वीरता की प्रशंसा करते जा रहे हैं। निहालदे ने उन बनजारों से पुछवाया कि नर सुलतान कहां है? बनजारे नर सुलतान से मार खाकर तो आये थे ही वे चिढ़े हुए थे उन्होंने कहा कि सुलतान तो भरणा के प्रेम में मस्तान नरवरगढ़ में रह रहा है। अब कभी नहीं आने का। इस समाचार को सुनकर कंवर निहालदे बहुत दुखी हुई। निहालदे ने मरवण को कटाक्षों से परिपूर्ण पत्र लिखा:-

मेरा पति तने मोह लिया जाके सारी भोली
तने मैं भली समझूं थी, तूं निकली गजब की गोली
भाई बहिन का नाता करके प्यार कर री से
आशिक दिले जान से होके उसपे मर री से
जवानी मैं तु पागल होरी अकल तेरी हर राखी
भाणा[2] बणा के तु काम काढ री हार से ना डर री से
तूं बदी[3] से ना डर री से नागण तू पति मेरे ने मोह ली

- -

1- क्या मैं करना 2- बहिन 3- बुराई

चारण भाट द्वारा मरवण को निहालदे के पत्र मिले । मरवण विचित्र स्थिति में थी । परवाना लेकर बाचण लागी :-

कागज लीहुन्हा कुंड की मारवण
बांचण लागी हरफ कुंवार
पहलम बंचती कागज में बंदगी
नेकी बंचती नेक जवहार
नरवरगढ़ ऊपर लिख्या
दौल्ले ने डसियों काला नाग
रांझा हुइयो सोवण कुंड की मारवण
तेरा लड़का मरियो रल कंवार
बाच्चे तैं बापा आणा ले
हार-हार जगत में पड़े बाग
एक एक राज्जा के दस दस राणियां
सब बातां का अवरज नांय
हुव्वा पड़ी मल के टोल के
छाती पे राखी लैन जमा
बाज पहुवा लक्के दोव से
दिन तीज्जां का बड़ा त्युहार
जल के मर ज्यां मोल्हा बाग में
जै सत राखोगा करतार
फेर परवान्ना बांच के
विदा करी मेरा भरता र

सुल्तान शाह के महल्लां पहुंचा । और मुड्ढ़े पे बैठ गया । शाह परेशान

-5- -- - - - - - - - - - - - - - - - ---- - - - - - - - - - - —

1- शिला

परेशान था। उसने सुलतान के सामने सुपने के रात बात न्यूं चालू करी:-

रात मैं सोई रंगले महल मैं
सोन्ने का पिंलग बिछाय
सपने मैं दीखी कंवर निहालदे
उदां भाट की दीखी साथ
मारुया कटारा छेंच कै
ऐणी[1] बिचक गयी परलै के पार[2]
मेरे दे गोड्डे[3] छाती चढ़ गई
पकड़ लिए थे दोन्नों हाथ
मारुया कटारा छेंच कै
ऐणी बिचक गयी परलै पार
जगहूत जगहूत तड़का हुआ
मेरी कटी बिपत[4] की पापण रात
थारे कोण कंवर निहालदे
उदां भाट की किसका नाम
इस सपने का भेद बता दे
बूझ रही तेरा भाई बाहण

इस पर भी सुलतान खामोश रहा। भाट ने दूसरा उपाय सोचा दूसरा परवाना पढ़ा परन्तु सुलतान खामोश रहा कुछ नहीं बोला। भाट ने अन्य चिट्ठी निकाल कर उसकी व्याख्या की। सुलतान फेर भी बताणे से इन्कार करता रहा। हार के भाट ने कैलागढ़ और चन्द्रगढ़ के भाट बुलाये

1- अणी नोक 2- उस पार 3- घुटना

4- विपदा

भाटा ने देख के सुल्तान की आख्यां में पाणी आग्या । उसने हाथ्यां के कड़े काढ के भाटा ने दे दिये :-

हाथ जोड़ के बोल्या पोल्ला बेन का
सुण ले भैय्या साफ जवाब
जिस दिन आया नरवरगढ़ में
कोन्या[1] बताए माइ बाप
कान्या बताई कंवर निहालदे
महा राज्जा की राजकुमार
करे बतीसों आभरण
इन्द्र बरसे ते मेहरबहार
फिकार किसे मैं नाहें[2] पड़ी
बतना हस्ती सिरजनहार[3]
बिछा पड़ी मेरे गात में
छूट गये हाथ अर बाथ
नहीं चाले मेरे बस नहीं
उड़ के इन्द्रगढ़ किसविधा जां
सात समन्दर बिच के बसै
बली को नां संदेशा जाय
कुएं डला दे बेट्टी कुछ को
भला करेंगे श्री भगवान

परन्तु अब तो भरथरा ने तुरन्त ही नर सुल्तान को शीघ्र अति शीघ्र निहालदे के पास पहुंचने के लिए कहा और अपना घोड़ा उसे दे दिया ।

- -

1- नहीं 2- नहीं 3- रक्षक

नर सुलतान नीले घोड़े पर सवार होकर चला पड़ा । इधर श्रावण तृतीया की घड़ी बीती जा रही थी । ठीक समय पर कंवर निहाल दे अग्नि की चिता पर बैठी । निहालदे ने स्वंय को सोलहों श्रृंगारों से सुसज्जित किया । रूप सवांरा और चिता में बैठने से पहले अपनी एक सहेली से कहने लगी :-

पहले ठंडे पाँ धुआ
उदाँ ते करती साफ जवाब
बेबे । जे पीया आवे गर्मी मैं चाल के
स्यानु[1] ते करिये सजन के बाल
जे प्यासा आवे नीर का
सोन्ने का लोटटा भर दिये पिलाय
जे भूखा आवे टिक्क का
आगे ने दिये पूड़ सवाई[2] न
जे भूखा आवे ब्याह का
बैनागढ़ ने दिये हदाय[3]
छोट्टी लाडडी[4] बाबा मान के
उसने देह गे ब्याह
सासी सपटी देदूंगी सीठ्ठे[5]
माल्ता बाबल फेरे सिर पे हाथ
लादे नाग्पा[6] चिता के
किसकी देखो बाट

अपना विलौटा पूर्ण करके सुलतान निहालदे के जब पास जब पहुंचता है । इससे पूर्व निहालदे ने अपने हाथों से अग्नि चिता को अग्नि दी । चिता

1- बोलना 2- गेहूं के आटे और गुड़ के पकवान जो तेल या घी में तले जाते हैं ।
3- भेज देना 4- लाड़ी 5- उलाहने 6- आग लगाना ।

छलक उठी । सभी चौंकने हो गये — कौन आ रहा है ? पल भर में ही नर सुल्तान का घोड़ा चिता के पास आ खड़ा हुआ और नर सुल्तान ने चिता में कूद कर कंवर निहालदे को बचा लिया । और हाथ जोड़ के बोल्या :-

जे तूं बाड़े की छींट बैंटियां
मैं लागूं धर्म का बीर
जे बाड़े की लागी बोहड़िया[1]
पक्का लागूं देवर जेठ
जे तूं से बेट्टा मद्य की
तेरा आ ग्या आला कंत[2]
छूट हाथल्या सब कमाण तै
सिर पै धरी थी पचरंग ढाल
बचन भरे थे ब्याह के
ब्याह के छोड्डी कंवर निहाल
जल मं राणी बाहे मत न जलें
म्हार कोन्यां काम

इस प्रकार अपना दिसौटा पूर्ण करके सुल्तान निहालदे के साथ अपने बाप के राज्य में सुख पूर्वक रहने लगा ।

"निहालदे" लोक गाथा के स्थानों की प्रामाणिकता: के विषय में गन्नौर के पास ग्याना, कौवबन्द, करनाल को बैलागढ़ , इन्दरी (करनाल) को इन्दरगढ़ और इन्दरी का पुराना बाग निहालदे का नौलखा बाग बताते है और नरवरगढ़ दूर कहीं दक्षिण में बताया गया है जहां पहुंचने के लिये मरुस्थल के गहरे कुओं और नदियों को पार करना पड़ता है ।

1- बहू 2- पति

(क) "निहालदे": तात्विक विवेचन:-

"निहालदे" लोक गाथा का तात्विक विवेचन निम्नलिखित है।

1- कथानक:- "निहालदे" का कथानक दो कथाओं का जोड़ है। एक कथा वीर नर सुलतान की है और दूसरी ढोला कापड़िया माफ के धर्मभाई की है। अतः कथा का उपकारी एवम् प्रेमी भी दानव का कार्य दानव को मारना, चोर और बनजारे को पराजित करना, निहालदे से विवाह एवम् माफ का भात भरना आदि प्रधान कार्य है। इस प्रकार के कथा रूप संसार के अधिकांश भाषाओं के लोक एवम् परिनिष्ठित साहित्य में मिलते हैं। इसमें कोई वीर अपनी बाल्यावस्था में ही अपने माता पिता से अलग हो जाता है और कभी अन्यत्र बड़ा हो जाता है तथा दानवों को पराजित करके स्वयं में समर्थ होता है। बागड़ का लोकगाथा "निहालदे" इसी का रूप है। इसलिए निहालदे का वीर कामदी वीर होता है न कि नामदी वीर। "इसमें कथा शिल्प को इस खूबसूरत ढंग से सजोया है कि प्रणय भावना चरम सीमा तक पहुंचती है तो भाइचारा का पवित्र भातृ प्रेम का उल्लेख हृदय को सहज ही स्पर्श कर लेता है। वह अज्ञात कथा शिल्पी जिसने इस श्रेष्ठ कलात्मक आख्यान की परिधि में सुकुमारतम अनुभूतियों को समो दिया है - वंदनीय है।"[1]

2- पात्र चरित्र चित्रण:- "निहालदे" में विभिन्न भावों की अभिव्यक्ति कलात्मकता को स्पष्ट करती हुई प्रतीत होती है। जब सुलतान निहालदे को सब समय देकर जाने लगता है तब उसका प्रस्ताव एक कर्तव्य परायण आदर्श पत्नी का दिखाई देता है। "निहालदे" विरह वेदना से जहां पीड़ित दिखाई देती है उसके साथ साथ उसके परवाने उसके विरह और "सोतिया डाह" का वर्णन असीम सफलता को प्राप्त होता है। वह नरवरगढ़ जाकर भी दर्शन कर सके यह दृश्य हृदय को झंकोड़ डालता है। उसमें त्याग भावना भी चरम सीमा

1- हरियाणा लोकगाथायें लेखक - देवी शंकर प्रभाकर पृष्ठ 38

पर है । नर सुलतान प्रेमी एवम् पति तथा धर्मभाई के रूप में अपने चरित्र की छाप छोड़ता है । इसके पात्र मानवीय गुण दोषों का पूर्ण रूप से निरूपण करते हैं । ये अलौकिकता की बजाय मानव मात्र की विशेषताएं एवम् कमजोरियों को दर्शाते हैं । पात्रों में मानवता है - देवत्व नहीं । नायक उत्साही एवम् साहसी पुरुष है । - अलौकिक विभूति नहीं ।

III- <u>मुहावरे एवम् अति शयोक्तियां</u> :- इसमें " मोरध्यूं वासूं गेरणा," "कालानाग" "पूनम का चांद", "जली जबान" आदि अनेक मुहावरों का यथा परिस्थिति बड़ा सुन्दर प्रयोग हुआ है । इसमें शकुनों-अपशकुनों एवम् अति शयोक्तियों का पुट सांस्कृतिक परम्पराओं और घटना की विचित्रता को सवांरता है ।

II/- <u>कथानक रूढ़ियां</u> :- इस लोक गाथा में कथानक रूढ़ियां भी बहुत सी प्रयुक्त हुई हैं । इसमें निम्न कथानक रूढ़ियां हैं ।

"ढलती उम्र में पुत्र उत्पन्न होना, बचपन में उद्दण्डता और देश निकाला, किसी योगी या सन्यासी से भेंट, सात घर से भिक्षा मांगने की शर्त । किसी राजा द्वारा धर्म-पुत्र बनाना, राजा के पुत्र द्वारा ईर्ष्या, किसी अन्य राज्य में सुन्दरी का साक्षात् और प्रेम, किसी अवधि पर अपनी प्रिया के पास लौटने का वचन, प्रत्येक दिन एक व्यक्ति खाने वाला दानव और वीर द्वारा उसकी मृत्यु, धर्म-भाई, पगड़ी बदलना, दी गई अवधि क समाप्ति और उसकी पूर्ति ; चिता में जलने का उपक्रम, भात भरना आदि आदि ।

इस कथानक रूढ़ियों को देखने से स्पष्ट होता है कि इस लोक गाथा में बहुत से तत्व अति प्राचीन हैं और कुछ नवीन भी । प्रत्येक दर्शन से प्रेम की कथानक रूढ़ि समान्यतः अधिकांश कहानियामें मिलती है ।

- -

1/- भाषाशैली :- "निहालदे" की कथा प्रेम और रोमांस की कथा है। इसका गायक श्रृंगार रस का परिपाक कराने के स्थान पर उसे उच्छृंखल बना देने का प्रयास इसलिए करता है ताकि लोक इस प्रकार के खुले श्रृंगार में विशेष रस ले सकें।

"निहालदे" जोगियों -रा बजाकर (सारंगी) अपने अपने तौर-तरीकों से गाई गई है। कथा पूर्व वे भगवान शंकर की आराधना करते हैं। ये लोग इन वीर गाथाओं को "साखा शैली" पर गाते हैं। और निहालदे जन-गाथा को "पेड़ों" के आधार पर। इसकी भाषा सरस, सरल, एवम् सुन्दर है।

(ग) "साखे" और "पेड़ों में" अन्तर :- शैली और शिल्प की दृष्टि से साखे और पेड़ों में काफी अन्तर है। देखिए इनमें अन्तर। भूरा बादल की गाथा का एक साखा :-भूरू की माता बोलती सुण भूरा मेरा

यह सोलह सौ पद्मिनी तेरे छड़ी बखेरे
ये देवर देवर कह रही तनें मुखड़ा फेरा
तोड़ बगादे कांगणा पकड़ीं सवेरा

निहालदे का एक पेड़ा :-

हाथ जोड़ के बोल्ली कुंद की भारजा
सुन ले भाई साफ जवाब
के बीरां की दोस्ती
नहीं होती बीरां की बात
मत बदले जान्नी ते पागड़ी
बरजें रही तन्नें साफ बाहुग

"साखे" तुकान्त होते हैं और "पेड़े" अतुकान्त -दोनों के छन्द में भी

- -

1- इन्कार करना।

चार से आठ मात्राओं तक का अन्तर होता है । पेड़े का छन्द साके के छन्द से लगभग ज्यादा होता है । साका वीर रस प्रधान और पेड़ा करुणा, हास्य, व्यंग्य और वीर रसों की रचना करता है- कथासूत्र को आगे बढ़ाता है ।

(ख) <u>"निहालदे" और "राजा ढोल" अथवा ढोला मारू:-</u> वैसे तो "निहालदे" और "राजा ढोल" दो भिन्न कथाएँ है परन्तु इन दोनों में कादृता के कारण दोनों में गहरा सम्बन्ध है । क्योंकि राजस्थानी "ढोला मारू" यहाँ बागड़ का राजा ढोल है । एक का कथानक कथा का पूर्वार्द्ध में सुलतान और निहालदे के चारों तरफ रहता है और दूसरे का कथानक उत्तरार्द्ध में ढोला मारू की नायिका मारवणी के समीप होता है । "वास्तविकता तो यह है कि निहालदे गाथा का अनुपम सौन्दर्य यहीं पहुंच कर निखरता है । यदि कथा के इस प्रसंग को अलग कर दिया जाये तो कुछ भी नहीं रह जाता ।"[1] यह लोक गाथा जोगियों द्वारा कम गाई जाती है परन्तु लोक रंगमंच पर अभिनीत की जाती रही है । ढोलामारू में मारवणी उसके प्रियतम बाल्य काल से विवाह तक की कहानी है । मारवणी अपने पिता के इस पूंगलगढ़ से विरह के आग में सुलगती हुई राजा ढोल के पास अनेका संदेश भेजती है परन्तु रानी कछवाही उनके मार्ग में चट्टान की तरह अड़चनें डालती है । मारवणी के एक संदेश का नमूना :-

आंसू गेरे मोर ज्यों हरमस्तक पर हाथ
आवण-आवण कह गयो, ला दियो बारह मास
छान पुराणी हो गई- बुरकण लाग्यो बांस[2]
क्या तेरे कागज अल गए- क्यों स्याही का ओंछ[3]
राणी को भरोसा तेरे नाम का, तेरे नाम की ओट

राजा ढोल की कथा का पूर्वार्द्ध ढोल के बाल्यकाल एवं विवाह तक

- -

1- हरियाणा लोक गाथाएँ - लेखक - देवीशंकर प्रभाकर पृष्ठ 40

2- आवाज करना ।

3- कमी ।

मलता है । परन्तु उत्तरार्द्ध निहालदे के साथ मिलता है।

राजा ढोल का कमजोर और भीरु होना उसके चरित्र को गिराता है । न कि उसके चरित्र को सम्मान की दृष्टि प्रदान करता है इसमें ढोल तिरलोक और सुल्तान बहादुरी एवं पराक्रम का सम्बन्ध है । कुछ भाग का नरवर गढ़ का रक्षक होना, मारवण में प्रति भ्रातृ प्रेम को कायम रखने का धैर्य निहालदे को उनके सम्बन्ध पर सन्देह होना और फिर इन्द्रगढ़ से सुल्तान द्वारा मारू की पुत्री का भाव भरना मारवण का धर्म के भाई बनाना यह सब कुछ दोनों में साझा है ।

जन गायकों द्वारा राजा ढोल को राजा नल का पुत्र बताना केवल सन्देह पैदा करने के सिवाय कुछ भी नहीं है । केवल भ्रम मात्र है । इसमें जहाँ वास्तविकता को आधार माना जाये तो यह निरर्थक ही लगती है । यह उनका अपनी दिलचस्पी और सहुलियत का मामला है । यह केवल अपनी गाथाओं को प्रभावशाली बनाना चाहते है चाहे उसमें वे कितनी ही व्यक्तिगत रुचि के लिए गतियों का समावेश कर जाये ।

इस विषय में टेम्पल जन गायकों को इस भ्रम से सर्वथा दूर रखने का प्रयत्न करते है और उनके इस भ्रम को सर्वथा गलत प्रमाणित करते है :-

"The legend has not as far as I know, any foundation in bhe classics lika Raja Nala., Though Dhol is always described as the son of Nals.

...........Bard as a human being Can't resist his temptaion. He even connects noble part of audience with saja one or anoteher" [1]

नल दमयन्ति की पौराणिक गाथा का सम्बन्ध इसके साथ जोड़ना युक्ति संगत नही लगता ।

---

1. The legend of the punjab By C.R. Temple VolIII. Page 42.

2- <u>"जैमल फत्ता:-</u>

जोधपुर नरेश महाराजा बैरम देव राज्य करते थे। उनके चार कंवर थे। जिनका नाम था- धीर, जयमल, जगमल, तथा चन्दर सिंह। महाराज बैरम देव मृत्यु शैया पर पड़े अपने जीवन की अन्तिम घड़ियां गिन रहे हैं। मृत्यु शैया पर पड़े महाराज ने कचहरी की ओर पूछा संसार में सर्वप्रिय वस्तु कौन सी है? विद्वान और मन्त्रियों ने " भाई" बताया :-

बैरम देव ने खत लिखया माल देव पे जाणा
आया काल सुणा लाग्यां घर जयमल जाणा[1]
इस परवाणे ने बांच के रे भाई जाये न ढील[2] लाणा।

उनकी रानी रोती है और कहती है कि मुझे किसके सहारे छोड़ रहे हो क्योंकि हमारे पुत्र तो अभी काफी छोटे हैं। इस पर महाराज अपने देश निर्वासित भाई को वापिस बुलाने की कहते हैं और महाराज प्राण त्याग देते हैं। रानी घबरा जाती है :-

राणी कहे सहेलियां राजा के ताईं
राजा तुम चाल्ये दरगाह ने बांह किसने पकड़ाई
धीर, जगमल, जयमल, चन्दरसिंह से याणे भाई
बैरम देव राजा कहे राणी के ताईं
राणी मालपुरे में मालदेव मेरा अंसी भाई[3]
लिख परवाणा भेज दे ले राव बुलाई
लड़के याणे[4] तैं स्याणे करी को दिन के मांही[5]

परन्तु दुराचारी और बेरहम मालदेव अपने भाई के चारों पुत्रों को

- -

1- अन्तिम समय नजर आना।

2- देर।

3- सगा भाई।

4- नाबालिग।

5- कुछ समय में ही।

को बन्दी बना लेता है। जिस पर उसी का पुत्र निर्मल सिंह दरबार में आकर अपने पिता से अपने ताऊ के पुत्रों और भाईयों पर यह बात न करने की प्रार्थना करता है :-

निर्मल देव अर्ज करे ऐसी नकीजै
बाबुल मऊवां सरवर मत करे गो बरबस दीजै
दूत गऊ का खाइये और दूध पीजै
जिनके बच्चे बले मूल मंगी बीजै
गोती दशमि जिब करे हरदी न कीजै
गोती नजर भरां दुवादश लो मरक पतीजै
राज जिन्हा के हा बावल पिता बले
अपनी किस्मत के बल भीजै

मालदेव ने निर्मल देव की प्रार्थना पर कोई ध्यान नहीं दिया और उसने अपने सगे भाई राणा देव की सहायता से अपने ताऊ के पुत्रों को अपने पिता से शान्ति पूर्वक छुड़वा लिया और अपने मृत ताऊ बैरम देव का अन्तिम संस्कार किया :-

निर्मल देव अर्ज करे दिल करके भारी
सुणिये भाई राणा दे यक अरज हमारी
इतनी सुणा के राणा दे भरा आंसू डारी
हाथी छोड़े झूमते सुर्दा अम्बारी
घड़िया छोड़ी पालकी ले चढ़ा कटारी
सताब बन्द छो के दुन्दे में जा क जड़ी कटारा
काढ़ी हिक बिलोल के दे के झटकारी
भाजा राजा मालदेव ले ज्यान प्यारी
भाईयां की बन्द छुटावे
ताऊ के लाश की डावण की कर दी तैयारी

1- पेट।

राज माता अनेंघाररा पुत्रों को अपने पिता के घर लेजाकर उनका वहां पालन पोषण करती है, उनके जवान होने पर जब जयमल अपने भाइयों को लेकर भाभी[मामा के बेटे की रानी] के साथ फाग खेलने लगे तो उसने कहा " हमारे टुकड़े खाकर हमीं से फाग खेलने लगे" । जैमल यह व्यंग वाणी सहन नहीं कर सका और अपना राज्य वापिस लेने पहुंचा :-

पड़े राणी महल में फूलन का बान्द
बांदड़ियां रतनालियां[1] जाणों जले चिराग
होंठ स्यातल पातले रही बीड़े चाब
दांत बत्तीसी खिल रहे ज्यों बीज अनार
जयमल भर पिचकारी मारता राणी के गात
दूजी मारे चन्दर सिंह गैल बीर दास
सत्तर पिचकारी लागती राणी के गात
गुस्से भरी राणी कहे बट निरभागी[2]
जयमल तूं आया था दिन काटने तनैं सूझा फाग
तेरा टुकड़ा खावे भरा पेट आज करे मजाक
जा बसा ले जोधपुर जित बसे काग
बोली मारी राणी नैं कंवर लग गई दुसार[3]
बोल्या जयमल राजपूत सुण राणी बात
राणी नानी[4] दादी[5] दो बड़े पंच से जग में बास
तेरा धड़ से शीश उतार दूं मामा की लाज
जा बसालूं जोधपुर दूं तनैं त्याग
तेरे बरगी कूंकड़ी म्हारे बेवें लाग

जयमल की रानी मालदेव द्वारा अपमानित हुई उसने हरिसिंह दिवान

- -

1- रतन जैसी आंखें ।

2- भाग्यहीन ।

3- हृदय को लग जाना।

4- नानी ।

5- दादी ।

को सहायतार्थ पुकारा । हरिसिंह दिवान जैमल ने रानी की सहायतार्थ भेजा हुआ था । जो "मोतीबाग" में ठहरा हुआ था । :-

शशि बदनी राणी कूकती दीवान पियारा
हरिसिंह म्हारी आण के के कारज सारा
मालदेव बढ़ गया महल में कोण्ट बरजण हारा[1]
उमर थाल्लिस का ज्यों शेर भभकार्या
कमरां ते लिया सड़ाक दे खाण्डा दुधारा
पांच सौ थाले बाढ़िया चले एक सारा
जाते अमर मालदेव का मावया मारा
मालदेव के सिर पे होवे लो ज्यों जले अंगारा
मारे थे आटे राजपूत नर क्वर अठारह
जख्मी हो गये बाढ़ियां दो सौ और बाहर
पचरंग पाग और सेहरा हरिसिंह ने ताड़्या ।
उधर मालदेव भागा और भागते हुए का अभयसिंह ने अंगरखा पकड़ लिया।
ग्राजल[2]पकड़ा अभयसिंह पील कढ़ज लिकाड़ी
अमर ने हाथ उठावंतां मारया ने कटारी
मालदेव के सिर पे होवे लो ज्यों[3] जले अंगारी
शशि बदनी राणी कूकती मुख तें दे गारी
हरिसिंह मांसे ने मत मारियों थारे बीच मुरारी
भाजा राजा मालदेव ले जान प्यारी ।

कदम कदम पर जयमल को अपने बाबा मालदेव द्वारा रचे गये षडयन्त्रों का मुकाबला करना पड़ा परन्तु अपनी वीरता से सफल हो गया । फतेह सिंह की बुआ का बेटा जयमल था । जैमल फत्ता दोनों वीर सेनानी है जिन्होंने असीमित दुश्मनों के दांत खट्टे किये । इसी लिए इसका नाम जैमल फत्ता पड़ा ।

- -

1- रोकने वाला ।

2- अंगरखा ।

3- जिस प्रकार ।

{4} "जैमल फत्ता : तात्विक विवेचन :- बागड़ की इस लोक गाथा का तात्विक विवेचन इस प्रकार है ।

I- कथानक :- ऐतिहासिक कथावस्तु पर आधारित "जैमलफत्ता" दो वीर भाईयों की वीरता के कथानक में पिरोई गई वीर गाथा है । इसमें घटना तथा क्रिया बिम्बों का साक्षात्कार इस प्रकार कराया गया है कि कथानक प्रवाह मई होता जाता है । कथा के पूर्वार्ध में बाबा मालदेव द्वारा रचे गये षडयन्त्रों का शिकार होना, मालदेव के पुत्र निर्मल देव की सहायता से छुटकारा पाना, पिता का दाहसंस्कार करना, है । और फिर मध्य भाग में माता द्वारा बारा भाईयों का ननिहाल में पालन पोषण कथा के उतरार्द्ध में भाभी द्वारा फटकार और बाबा के षडयन्त्रों का मुकाबला तथा वीरता से अपना राज्य प्राप्त करना है ।

II- पात्र चरित्र चित्रण :- पात्रों में मालदेव धूर्त मक्कार एवम् निर्दयी इन्सान था या यूं कहिए कि इन्सान की खाल में शैतान छिपा था जिसके सामने रिश्तेनाते, पाप पुण्य तथा इन्सानियत का कोई भी महत्त्व नहीं था । उसके हृदय में मर्यादा भी मूल्यहीन एवम् अस्तीत्व हीन सी दृष्टिगोचर होती है ।

मालदेव षडयन्त्रकारी और दुष्ट प्रकृति का व्यक्ति था जिसने अपने भाई के लड़कों को बरबाद करने में कोई कसर नहीं छोड़ी ।

मालदेव का पुत्र निर्मल सिंह अनुशासन वाला तथा एक आदर्शवादी युवक था । उसका भाई राणा देव भी सभी कार्योंमें अपने भाई का हृदय से साथ देता हुआ प्रतीत नजर आता है ।

जैमल और फत्ता अपने अधिकारों को प्राप्त करने, अन्याय के खिलाफ लड़ने वाले वीर थे । और सदैव न्याय का पक्ष लेकर उसको निभाते

- -

निभाते हैं । यह बहादुरी एवम् कर्तव्यपरायणता के प्रतीक है । उनकी माँ त्याग की पूर्णरूपेण मूर्ति है । शिव बदनी जैमल की पत्नी सच्चे अर्थों में वीरांगना है ।

111- मुहावरों का प्रयोग :- छोट सवा लख पालने, बीड़ा चाबणा, दाँत बतीसी खिल रहे बस जमों बीज अनार, फूल करंठ,का कागजमना आदि मुहावरों का प्रयोग यथास्थिति सुन्दर एवम् स्वाभाविक बन पड़ा है ।

11/- कथानक रूढ़ियाँ :- इसमें कथानकरूढ़ियों का भी प्रयोग भी हुआ है । परन्तु अन्य कथात्मक गीतों की तुलना में इनका प्रयोग कम है ।

कथा रूप की दृष्टि से विचार करने पर यह प्रतीत होता है कि इसमें सारा झगड़ा राज्य पाट के लिए है । इसलिए हम कह सकते है कि यह कथा गाथा जर, जोरू एवम् जमीन युद्ध का संग्रह सा प्रतीत होती है ।

1/- भाषा शैली :- जहाँतक भाषा का प्रश्न है इस लघु वीर कथात्मक गाथा में बांगरू बोली और बांगरू मुहावरों का सरस प्रयोग मधुरता का समावेश करता है

वीर और श्रृंगार रस की दृष्टि से लोक गाथा अद्वितीय है । संयोग श्रृंगार का मधुर और स्वाभाविक अभिव्यक्ति भी दिखाई पड़ती है । क्योंकि उसमें जयमल का पति के रूप की व्याख्या की गई है ।

आल्हा ऊदल की तरह यह जैमल फत्ता दो भाइयों की वीर एवम् ऐतिहासिक लोक गाथा है ।

हरियाणा में इसका गायन भी काफी लोकप्रिय है । यह पंवाड़ा की श्रेणी में आता है ।

- -

3- गुगा [गुगापीर, गुगावीर]:- कूबर बः

गुगापीर यहाँ के संस्कृति और सामाजिक जीवन में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है हर मास की कृष्णा-पक्ष की नवमी को गुगापीर के भक्त दूध का दही नहीं जमाते और बनाकर खाते हैं। गुगा बीकानेर के राज्य में ददरेड़ा नामक स्थान पर जेवर सिंह नामक चौहान राजपूत और माता का नाम बाछल का पुत्र था बाछल सात जन्मों की बांझ थी गोरखनाथ की कृपा से गुगा का जन्म और उसकी काछल [गुगा की मौसी] को "अर्जुन-सर्जन" नामक दो जुड़वां लड़के पैदा हुये। गुगा का सिरियल से विवाह।

सम्पत्ति के लिये झगड़ा, अर्जुन सर्जन का दिल्ली के बादशाह के सामने चुगली खाना। बादशाह का गुगा पर चढ़ाई करना। युद्ध में गुगा की विजय और अर्जुन सर्जन का मारा जाना। बाछल द्वारा गुगा को - तुमने मेरी बहिन के पुत्रों को मार कर अच्छा नहीं किया तुम मुझे मुँह मत दिखाना। माता की इस बात पर गुगा का धरती मां से प्रार्थना करके समाधिस्थ होना कहा जाता है कि साक्षी लेने के लिए ही हाजी रतन नाम के मौलवी ने कलमा पढ़ा और अपने नीले घोड़े समेत धरती में समा गया। गुगे के साथी नरसिंह पाण्डे, भज्जू चमार, रत्न सिंह भंगी, नीला घोड़ा और स्वयं गुगा "पंचपीर" कहलाते हैं। किवदंती है कि गोरखनाथ द्वारा दिये गुगल से ही इन पांचों का जन्म हुआ।

"जाहरपीर" गुगा का एक विशिष्ट नाम है। जन्माष्टमी के अगले दिन ही भादों की नवमीं को इसकी पीरगाथा डेरूओं के साथ ठेकों पर गाई जाती है। भक्तलोग मस्ती में नाच उठते हैं। इसका पूजा स्थल

- -

गूगा मेड़ी कहलाती है। राजस्थान में भी गूगा मेड़ी प्रसिद्ध है। गूगे की आत्म कथा निम्नरूप में गाई जाती है :-

मेरे गढ़ ददरेड़ो बड़ो शहर हिन्दुवाना
अमर का पोता जेवर सिंह चौहाना।
मरद निछतर छत्तर धारी राणा।
बादशाही सूबा हाथ हांस में थाना।

मदद इलाही कला सवाई नौखंड में लागी छाई
जाहर पीर मरद अवतारी
जंग जीत पीरी पाई।

कजली बन सूं गोरख आया चौदह सौ चेलां संग लाया
आ बागां में डेरा लाया बारह बरस का सूका बाग हरया
फूलों का डोना माली भर के ल्याया क्या बाछल आप दिखाया
चौदह चेला ने आप अलख जगाया राणी भिच्छा लाई गुरु की रिच्छा
सेवा में बाछल आई
जाहर पीर मरद अवतारी --------जंग जीत पीरी पाई।

बाछलमाता जामत की बांझ कहावे
पूत की खातिर सेवा हित कहलावें।
मेला गोद भरेगो ज्यूं सतगुरु समझावें
सेवा सफल गुरु की करणी खुशी रही बाछल माई।
जाहर पीर मरद अवतारी -------- जंग जीत पीरी पाई।

बारह बरस तक सेवा साधी गहरी।
गोरख नाथ का परचा हरदम हाल हजूरी
काछल[2] का जोड़ा[3] जिनें थी मजबूरी
बाछल का गूगा सिद्ध बरस ते पीरी
जोड़ा ने बाद विवाद मंडायो धुन्ध मचायो।
दिल्ली में चुगली खाई
जाहर पीर मरद अवतारी --------जंग जीत पीरी पाई।

1- गूगा की माँ 2- बाछल की बहिन 3- काछल के अर्जुन सर्जुन दो जुड़वाँ पुत्र।

गाथा आगे इस प्रकार है । :-

चढ़ा बादशाह ले ली फौज अगाड़ी
ददरेड़ो छाया नित गूगा सिंह की रोही ।
चढ़ा बाला "भाणजा" ले ली हाथ सरोही ।
चढ़े "सिसाबा" लाकर दाना इन्दल कर दिया राही राही ।
जाहर पीर मरद अवतारी -----जंग जीत पीरी पाई ।
चढ़ा भज्जु भाई जिसने लोथवा कर दिया ढारा ।
चढ़ा वीर ब्राह्मण नरसिंह मतवारा ।
वा फत्ते सिंह ने रण में खड्ग सम्भाला ।
वा गूगा जी के गले में भूति माला ।
वा गुरु गोविन्द रण जूझा जिनकी अभी रहे चतुराई ।
जाहर पीर मरद अवतारी ------जंग जीत पीरी पाई ।
गूगा जी की मदद पीरपी राणी
समशेर उठाई नागी बामी भुजा भवानी ।
धड़ शीश उड़ायों जिने वार करी हकानी ।
चौहान गोत्र की कर गयो अमर निशानी ।
गूगा ने सेर बेर जब लिया लोथिजनों की लड़ाई ।
जाहर पीर मरद अवतारी ------जंग जीत पीरी पाई ।
बादशाह के जी मे बहगई भारी ।
लीलों ने दोनों टाप धरी अम्बारी ।
गूगा ने आधा लटका नीचे पटका कायर कहं तेरे तख्त की
तरे को कहा शाह बादशाह भाई ।
जाहर पीर मरद अवतारी -------जंग जीत पीरी पाई ।

1- लीला : गूगा का घोड़ा

आगे का अंश इस प्रकार प्रस्तुत है :-

अंग जीत के सिर ओढ़ा का ल्याया ।
इनकी बिसवा दे दे ले मेरी बाछल माता ।
गूगा तने बुरी करी दे मेरी सगी माहण का जाया ।
ददरेड़ा ते सुण के करणा पुरे मे आया ।
अर्जुन्ला[1] पाटी जद नीला कुंड समाया[2]।
भुंडा बीच मेढ़ी[3] छाई ।
जाहर पीर मरद अवतारी ←——अंग जीत पारी पाई ।

और इस प्रकार गूगा पीर का बहुरंगी स्वरूप यहां जन जीवन की सांस्कृतिक, सामाजिक और धार्मिक परम्पराओं में पूरी तरह समाया हुआ है गूगापीर व्यक्तित्व ने धार्मिक सहिष्णुता का बेजोड़ उदाहरण प्रस्तुत किया है । दो सांस्कृति धाराओं के सुन्दर संगम के दर्शन यहां होते हैं ।
गूगा का नाम लेकर किया गया संकल्प पूरा न करे तो उसे सांप दिखाई देते है । गूगा के इन नागों का आंतक कितना है ? इसका एक रोचक प्रसंग है एक बार एक जाट ने किसी से पूछा :- क्यों भाई चौधरी गूगापीर बड़ा या भगवान बड़ा ।

उतर मिला :- भाई । बड़ा से उसने तो सब जाणे से पर सांप कह के सांपा ते दुश्मनी कौण मोल ले[4]।

इस प्रसंग से गूगा पीर की आस्था का पूर्ण रूप से पता चल जाता है । यहां गूगा पीर को प्रसाद के रूप में शक्कर चढ़ाई जाती है ।

- -

1- भूमि ।

2- समा जाना ।

3- वह स्थान जहां पर गूगे की पूजा की जाती है ।

4- हरियाणा लोकगाथायें लेखक - देवी शंकर प्रभाकर पृष्ठ 28

हरियाणा में फैली हुई अनेकों गूगा की मैड़ियां पर गूगा के मेले भादों मास की नवमीं को लगते हैं :-

बोल बाला थांका पीरो
लागजा ढोकिया जात छोरी तेरी ।

"केवल यही नहीं लोक साहित्य में गूगा पीर इस प्रदेश के एक प्रमुख पात्र हैं । विवाह, शिशु जन्म और दूसरे समारोह पर गूगा पीर के गीत पहले गाये जाते हैं । उन्हें जाहर पीर के गीत कहा जाता है"[1]।

वीरा जिसकी जग में रोशनी
सब जपों उसी का नाम
करलो सुबह शाम की बन्दगी
सब सम्पूर्ण हों जां काम,

माता पिता गुरु अपना
भजो इन्हीं का नाम
पीरां का साका गाइयो भाई
भरी सभां के मांह,
ध्यान परमेश्वर सेती ।

सम्भावना है कि यह सूफियों के प्रभाव के कारण लोकधर्म का अंग बन गई है । जाहर पीर का पूजन हिन्दू और मुसलमान दोनों करते हैं । यह हिन्दू मुस्लिम विश्वासों के अच्छे समन्वय की अनोखी उपज के रूप में दृष्टि-गोचर है । जाहर पीर लोकगाथा लम्बी है अतः इसके कुछ अंश ही ऊपर उद्धृत किये गये हैं । उसकी विशिष्टताओं के सम्बन्ध में कुछ धारणा बनाई जा सकती है । बांगर में जो लोकगाथा गाई जाती है । वह ऐसी प्रतीत होती है । मानो सही अर्थों में दिवा-स्वप्न हो ।

- -

1- हरियाणा लोकगाथाएं - लेखक देवा शंकर प्रभाकर पृष्ठ - 27

(ब) "गूगा" (तात्विक विवेचन":-

तत्वों की दृष्टि से गूगावीर का साहित्य अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है ।

1- **कथानक :-** गूगा वीर की कथा में इतिहास और परम्परा दोनों लौकिक एवम् अलौकिक तत्वों का समावेश है । यह दोनों तत्व ऐसे सम्युक्त हो गये हैं । कि इनको पृथक पृथक करना कठिन सा दृष्टिगोचर होता है । इसमें तीन कथाओं का (टेल टाईप) का उपयोग हुआ है । प्रथम में सिरियल से विवाह तक, दूसरे रूप में भाई का हत्या तथा तीसरे रूप में मां के फटकारने पर धरती में समा जाने का । अन्तिम कथानक इस्लाम के प्रभाव की देन है । सांस्कृतिक दृष्टि से यह महत्वपूर्ण तत्व है । ऐसा ज्ञात होता है कि वे " जाहर पीर" बनने के लिए मुसलमान हुए ।

2- **पात्र चरित्र चित्रण :-** "जाहर पीर" गूगा या गूगावीर जी एक कथात्मक गीत है । जिसमें वीर-रस प्रधान है । यह ऐसा ऐतिहासिक कथावृत है जो इस क्षेत्र में देवता के समान आज भी उसी श्रद्धा से पूजे जाते हैं इनके कथात्मक वर्णनों में गुरु गोरखनाथ और इनके चमत्कारों की परिपूर्णता है । क्योंकि ऐसी कई घटनायें दृष्टव्य हैं । गूगा की मां बाछल को जाहर पीर गूगा भी गोरख नाथ की सेवा का ही फलस्वरूप माना जाता है । अन्य पात्र गूगा की मौसी काछल और उसके पुत्र अर्जुन सर्जन है । अर्जुन सर्जन का चरित्र ज्यादा अच्छा नहीं है । मुसलमान बादशाह भी भ्रष्ट व्यक्ति है ।

3- **चमत्कारिता :-** जन्म से पूर्व ही गूगा अपनी मां, पिता और नाना को चमत्कारों से प्रभावित करता है । नागों की सहायता से सिरियल से

- -

खिलाकरना । अर्जन सर्जन के मारने पर बाछल द्वारा धिक्कारने पर गूगा का भूमि में समा जाना आदि चमत्कार सम्मिलित है ।

उनकी करामात से ही इन्ही के साथ सरवर सुलतान, लीला घोड़ा, राजू चमार, और नरसिंह पाण्डे भी उत्पन्न हुए थे । लीला घोड़ा इनकी सवारी था । इन्होंने स्वपन्न में सात समुन्द्र पर रहने वाली सिरियल को उस समय देखा जब वे समुन्द्र को पार कर चुके थे ।

।।/- कथानकरूढ़ियां :- इस संक्षिप्त लोकगाथा में कई कथानक रूढ़ियां प्रयुक्त हुई है । किसी फकीर महात्मा के आशीर्वाद से पुत्र प्राप्ति , करामात से व्यक्तियों या पशु पक्षियों को उत्पन्न करना, स्वपन में प्रिया दर्शन नायक की विजय, नागों का साथ नायक का धरती में समाना । नागों का चित्रण तो अथर वेद में भी प्राप्त होता है । अतः जाहर पीर की लोक गाथा में विजय तत्व को देखा जा सकता है ।

।/ सूफी प्रभाव :- इस लोक गाथा में कुछ एक मुहावरों का प्रयोग हुआ है । अधिकांशतः यह लोकगाथा विशेषकर उत्तरार्द्ध में सूफी प्रभ व से प्रभावित दिखाई देती है । जाहर पीर का अर्थ प्रत्यक्ष रहने वाला पीर माना जाता है । इसका तात्पर्य यही है कि गुरु गूगा मरने के बाद भी यह विश्वास बना रहा कि यह जाहिर या प्रत्यक्ष होता है ।

।/।- भाषा शैली :- इस लघुकथात्मक गाथा में सरल भाषा में अभिव्यक्ति की ग गई है मानस के कई भावों की अभिव्यक्ति मिलती है ।

- -

4- "हरफूल जाट जुलाणीका :-

बांगड़ लोक कथात्मक गीतों में वीर रस प्रधानता को प्राप्त होता है इस शैली के "आल्हा", "साके" और पंवारे आदि हैं। प्रस्तुत लोक कथात्मक गीत साकों का ही एक रूप है।

ये साका हरफूल जाट की जो दुनिया में हुआ बदनाम[1] ।।
अब किस्सा मैं कहूं खुलासा जिसका खास जुलाणी गाम ।।
सबसे पहले इसका जिकरा[2] हमने सुना कान से जाय ।।
हमने गाना सुना और से हरफूल सांग दिया छपवाय ।।

हरफूल जाट स्कूल से दसवां पास करके फौज मे भरती हो गया परन्तु फौज में भी वह अधिक समय तक नही टिक सका । तत्पश्चात् उसने अपनी शादी की बातचीत की परन्तु दुर्भाग्य वंश गैलड़ होने के कारण वहां भी अपमानित होना पड़ा । घर आकर भाईयों से हिस्सा मांगा तो उन्होंने भी सगा भाई न होने के कारण लम्बरदार से मिलकर हरफूल को उसका हिस्सा नही दिया । तब कुण्ठित होकर हरफूल जाट ने अपने भाई और गांव के नम्बरदार का कत्ल कर दिया :-

दोनों भाई मारे और बाबा दिया तीसरा मार ।।
मौका पा हरफूल ने चौथा मारा नम्बरदार ।।

हरफूल वहां से टाम्भी गांव पहुंचा वहां का राम ने धोखे से हरफूल को मार डालना चाहा परन्तु हरफूल ने भी राम को तान सिपाही और दरोगा का कत्ल कर डाला । जीन्द के महाराज ने खिमचन्द दरोगा को हरफूल को गिरफ्तार करने के लिये भेजा परन्तु हरफूल को मारने के

1- प्रसिद्ध ।
2- वर्णन ।

चक्कर में वह स्वयं मारा गया । मिट्ठू पठान का भी उसे पकड़े जाना और उसका बागी के बेटे के साथ हरफूल द्वारा मारा जाना । अब हरफूल का स्थान धार्मिक हो गया । हरफूल का गुहागरे का कस्बा तोड़ना और कसाइयों को मार कर गौ माता की रक्षा की :-

आवाज देई हरफूल ने कूकड़ सुनियो कान लगाय ।।
गौ गुहाड़े जो लाये मुझको तुरन्त देओ बतलाय ।।
गौ हमको हमारी दे दो पन्द्रह के तुम ले लो बीस ।।
नहीं गौ के बदले में अब यहां पर दूंगा काट तुम्हारा शीश ।।

परन्तु इसके प्रत्युत्तर में कसाइयों ने हरफूल सिंह को चिढ़ाने शब्दों का प्रयोग करके क्रोधित कर डाला :-

आग लगी हरफूल सिंह को हाथ में ली पिस्तौल उठाय ।।
फैर किया जब कूकड़ पे जम के घाट दिया पहुंचाय ।।
एक को मारा दो को मारा तीन चार को दिया लिटाय ।।
मची खलबली उस हत्थे में सारे कूकड़ गए घबराय ।।

कसाई हरफूल की ओर छुरा लेकर दौड़ने लगे परन्तु हरफूल ने उनको धरतु सुंघा दी :-

छुरा जो ले के चले उधर को उसे हरफूल छोड़ता नाय ।।
जो कोई भाग दरवाजे को वहां बैसु ने दिए सुलाय ।।
कट गया कुनबा जब हत्थे में सबके रस्से दिए खोल ।।
जुल्म बार हरफूल का बारा गोली का पिस्तौल ।।

- -

1- कूकड़खाना ।

हरफूल जाटने गाय बैल इत्यादि जो बूचड़खाने में बन्धे हुए थे उनको सबको गऊशाला में भिजवा दिया । और :-

मैं बैल सब करके इकट्ठे गौशाला में दिए भिजवाए ।।
कागज लिख हरफूल ने उस हल्के पे दिया लगाय ।।
और किसी को कुछ ना कहना मैं हरफूल जुलाणी का ।।
बैल चल दिया गांव सुखासो झट हरफूल सिंह बनी में जाय ।।
धर्म कमाया गो माता का सबकी दी है जान बचाय ।।

बास गांव में भरतु जाट को मारा । फिर बन्नाणी और बैसु रांगड़ से बदला लिया और दोनों का खात्मा किया - हरफूल सिंह जबान का पक्का व्यक्ति था उसने अपना प्रण पूरा किया । चन्द्र सिंह थानेदार को मारा । फिर वह नकली हरफूल से जा टकराया :-

नाम मेरा बदनाम कर दिया तुझको शरम आवती नाय ।।
आज हाथ मुद्दत में आया मैं अभी झटपट देऊं पहुंचाय ।।

इस पर नकली हरफूल जो वास्तव में चूड़ा जाति का था उसके बदन में आग लग गई और माता भवानी का नाम लेकर असली हरफूल पर पिस्तौल से वार कर बैठा परन्तु असली हरफूल उसके वार से बचना था :-

गोली पार गई छाती में चूहड़ा पड़ा जमी पे जाय ।।
जो नकली हरफूल बना था उसका झटका दिया मिटाय ।।

कहां तो नकली हरफूल असली हरफूल को मारना चाहता था परन्तु असली हरफूल की समझदारी और विवेक के कारण वह (नकली) हरफूल स्वयं उसका शिकार हो गया ।

- -

हरफूल ने मन्सुख थानेदार, फारुख खां आदि को मौत के घाट उतारा । एक दिन उनमें से एक ब्राह्मण और धानक इस प्रकार वार्तालाप करते जा रहे थे । :-

पर हमतो वीर उसे तब जाणा गऊ माता की जान बचाय ।।
तीन रोज बकर ईद है इसमें छूट मचलता नाय ।।
गऊआं होंगी कत्ल बहुत सी जिन पै छुरी चलाई जाय ।।
रोहतक के बूचड़ खाने में माता हाय-हाय डकराय ।।
जब जानूं हरफूल सिंह को उनकी जान बचावे जाये ।।
दोनों जावें ये बाते करते उनको जरा खबर भी नाय ।।

हरफूल सिंह के कानों में इस बात की भनक पड़ी । वह ब्राह्मण और धानक को उत्साहित कर अपने साथ ले गया :-

बूचड़ खाने पै जा पहुंचा शंका जिन्हे काल की नाय ।।
गरजा शेर जुलाणी वाला उन दोनों से कहा सुनाय ।
ब्राह्मण का रहे दरवाजे पै जो आतो को ले संभवाय ।।
धानक का चले मेरे साथ में हर तुम भीतर पहुंचा जाय ।।
तोड़ कवेला दिया शुरू हो खाली कमरा दिया करवाय ।।
यह कत्ला तोड़ा हरफूल नेगऊ व भैंसों को गया लिवाय ।।
दाखिल कर दी गौशाला में गिनती दरज दई करवाय ।
धानक बाम्हण मांगी विदा वा घर आपणे पहुंचे जाय ।।
धूम मचाई हरियाणे में हिन्दू बहुत खुश हो जाय ।।
जीन्द रियासत थर थर कांपे रांगड़ कांपे कांप रह जाय ।।

और इस प्रकार:- बूचड़ खाना रोहतक का ईद के ऊपर तोड़ा जाय ।।
रांगड़ चिढ़ गए और भटियारे बाकी रही बदन में नाय ।।

- -

खुदाबख्श रांगड़ नम्बरदार और उसके पांच भाईयों ने पंचायत की और उनको हरफूल सिंह के खिलाफ इस प्रकार भड़काया :-

नाक मुसलमानों की काटी उसने डाले जुल्म गुजार[1] ।।
चलो घेर कर आज बणी में उस पाजी को डालो मार ।।

परन्तु हरफूल सिंह चौकन्ना रहता था उसने खुदाबख्श और उसके पांचों भाईयों को मार दिया । रांगड़ बणी से अपनी जान बचाकर भागे । परन्तु एक लालची ब्राह्मण ने थाने में हरफूल सिंह के विषय में एवं स्थान के बारे में खबर दे दी । ब्राह्मणी को पहले रोटी देकर हरफूल सिंह के पास भेज दिया और उसके पीछे से उसकी थाने में सूचना देने चला गया । परन्तु ब्राह्मणी ने हरफूल सिंह को वास्तविकता से अवगत करा दिया । :-

रोटी खाकर फारिग हो गया इतने में पहुंची पुलिस भी आय ।।
ला पिस्तौल उठा केहरी[2] ने दीना मार ही मार मचाय ।।
थानेदार मार दिया पहले कई सिपाही दिए गिराय ।।
भगी पुलिस बची जो बाकी पीछे फिर के देखा नाय ।।

यहां हरफूल सिंह की दयालुता का साक्षात प्रमाण इस प्रकार मिलता है कि उसने उसी ब्राह्मण को जान से मारने के लिए छोड़ दिया जिसने उसके खिलाफ शिकायत की थी और उसे पकड़वा कर इनाम हासिल करना चाहता था । यह सब ब्राह्मणी की याचना पर हुआ :-

कहने से बाह्मणी के उसने ब्राह्मण को दिया क्षमा कराय ।।
ऐसा जोधा जाट हुआ था वो हरफूल जाट कहलाये ।।
नाम अमर दुनिया में कर गया पंचो सुनलो कान लगाय ।।
आगे केवल रहगई फांसी इतने कलम चले अब नाय ।।

इस गाथा के कतिपय अंशों को उद्धृत करके इसकी कुछ विशिष्टताओं का उल्लेख किया गया है ।

- -

1- जुल्म करना ।
2- शेर दिल ।

(ज) "हरफूल जाट जुलाणी का" :-तात्विक विवेचन :-

इस लोक गाथा का जो वास्तव में लघु गाथा है का तात्विक विवेचन निम्नलिखित तत्वों के आधार पर प्रेषित है ।

I- कथानक :- इस लघु गाथा का कथानक हरफूल जाट की जीवन घटनाओं के साथ जुड़ता हुआ चला जाता है । इसके जीवन वृत की घटनायें ही इस लोक गाथा का मूल मतव्य है । इस लोक गाथा के साथ साथ धर्म भाव भी जुड़ा हुआ है

II- पात्र चरित्र चित्रण :- यह नायक प्रधान लघु वीर गाथा है जिसमें नायक हरफूल सिंह जाट है जो जुलाणी गांव का रहने वाला है । हरफूल जाट द्वारा अपने दुश्मनों की प्रतिशोधात्मक भावना को कुचल देना, अन्याय के खिलाफ संघर्ष करना दिखाया गया है । इस पात्र की मुख्य धार्मिक भावना इस बात में निहीत दिखाई देती है । कि वह गायों (गऊमाता) का उद्धार करने का अपना परम कर्तव्य पूर्ण करता है प्रत्येक जोखिम उठाकर । इसमें हरफूल की राष्ट्रीय भावना भी राष्ट्र को समर्पित होती है । शेष सभी पात्रों का महत्व गौण सा दिखाई देता है । क्योंकि उस वक्त की समाजिक व्यवस्था के अनुसार लोग दासता की जंजीरों मे जकड़े हुए थे । स्वंय को आतंकित अनुभव करते थे ।

III- कथानक रूढ़ियां एवं मुहावरे :- गैलड़[1] होने के कारण भाईयों के अधिकार न देने पर उनको मारना, दुश्मनों और कसाईयों का सत्यानाश करना आदि कथानक रूढ़ियां इसमें दृष्टिगोचर होता है । ऐतिहासिकता का अभाव खटकता रहे । अंधाधुंध, आग लगाना, खलबली मचना, आदि मुहावरों का प्रयोग है

IV- भाषा शैली :- आल्हा संगीत पर लिखी गई इस लघु गाथा में सरसता सरलता एवं मधुरता तीनों का संगम है । कई स्थलों पर मनोरंजकता बड़ी ही उत्कृष्ट है ।

- -

1- माता के साथ आने के कारण इसे गैलड़ कहा गया ।

सप्तम अध्याय

बांगड़ लोक कथा साहित्य का अध्ययन

1- [1] बांगड़ लोक कथा का स्वरूप और महत्व

[ii] लोक कथा की परिभाषा

2- लोक कथाओं की परम्परा

3- बांगड़ लोक कथाओं का वर्गीकरण :-

[1] व्रत तथा त्योहारों सम्बन्धी लोक कथाएं

[2] देव विषयक कथाएं

[3] पौराणिक लोक कथाएं

[4] साहस तथा शौर्य की लोक कथाएं

[5] चतुराई पूर्ण लोक कथाएं

[6] उपदेशात्मक लोक कथाएं

[7] पशु पक्षि सम्बन्धी लोक कथाएं

[8] चुटकले

[9] मनोरंजन प्रधान लोक कथाएं :- हास्य परिहास, मूर्खों की, जाति स्वभाव चित्रण की, ठगों आदि की कथाएं ।

[10] अलौकिक तत्व से युक्त कथाएं :- परियों, दानवों, भूत-प्रेत चुड़ैलों, आदि, इतिहासाश्रित महापुरुषों अथवा साधु सन्तों की कथाएं आदि

[11] मिश्रीय कथाएं

4- बांगड़ लोक कथाएं की विशेषताएं

5- बांगड़ लोक कथाओं के मूल अभिप्राय

6- बांगड़ लोक कथा मानक रूप

7- बांगड़ लोक कथाओं के तत्व

8- बांगड़ लोक कथाओं के कथ्य शिल्प

9- बांगड़ लोक कथाओं में मुहावरों एवं लोकोक्तियों का प्रयोग

10- बांगड़ लोक कथाओं की सामान्य प्रवृत्तियां

11- लोक कथा तथा आधुनिक कथा में अन्तर

12- उपलब्ध बांगड़ लोक कथाएं उनका विवेचन

0- - - - 0- - - -0

तमिल लोक कथा साहित्य का अध्ययन

[1] लोक कथाओं का स्वरूप, महत्व :-

"लोक कथा" शब्द लोक प्रचलित उन कथाओं के लिए प्रयुक्त होता है जो मौखिक परम्परा द्वारा निरन्तर रूप से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को प्राप्त होती रहती है। इन कथाओं का जन्म भी मानव के साथ हुआ होगा और उसी प्रकार विकास की परम्परा से चलती हुई यह आज तक जीवित है[1]। पुरानी कथाएँ नया कलेवर धारण करके नये समाज की छाप लेकर नये रूप में प्रकट होती है। और यही नवीनता रूप, रंग और आकार की दृष्टि से अपना एक विशेष स्थान रखती है। इनका प्रधान उद्देश्य अपनी बात श्रोताओं के हृदय तक पहुँचाना है। अतएव लोक कथा जीवनाभिमुख होती है-वर्णित जीवन को श्रोताओं के सामने रखना लोक कथा कार का आदर्शोन्मुख स्वभाव होता है। कोई लोक कथा निरुद्देश्य नहीं होती। मूलतः लोक कथाओं का अभिप्राय ही समाज जीवन का एक नया स्वरूप द्वारा बनाना होता है। इसीलिए उसमें समाज मन तथा समाज जीवन की भावनाओं का, विचारों का, सहजात प्रवृत्तियों का उद्घाटन एवम् परिपोष स्वाभाविक है। संक्षेप में लोक मानस का तत्व जिसमें निहित हो वह लोक कथा कही जायेगी।

लोक- कथाएँ नाना रूपों में लोक जीवन को घेरे हुए हैं। आदि काल से वे हमारे साथ हैं। देश में सर्वत्र उनका निर्बाध विकास है। मानव के सुख दुख, प्रेम श्रृंगार, वीर भाव और वैर इन सबने मिलकर लोक-कथाओं को पुष्ट किया है। रहन सहन, रीति-रिवाज, धार्मिक विश्वास, पूजा-उपासना, इन सबसे कहानी का ठाठ बनता और बदलता रहता है। कहानी मनुष्य के लिए अपूर्व विश्रान्ति का साधन है। मन के आयास हटाने के लिए कहानी मानव समाज का प्राचीन साधन है। आज

1- फोक टेल्स आफ आल नेशन्स पृ 5

1. (i) <u>लोक कथा की परिभाषा</u> :- लोक कथा की स्पष्ट परिभाषा न देकर विद्वानों ने इसकी विशेषताओं का अधिक उल्लेख किया है। डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी का कथन है कि लोक कथाओं का अध्ययन कई दृष्टियों से बहुत महत्वपूर्ण है यद्यपि इस शब्द के प्रयोग के बारे में विद्वानों में मतभेद रहा है। तथापि लोक कथा शब्द मोटे तौर पर लोक प्रचलित उन कथानकों के लिए व्यवहृत होता रहा है जो मौखिक या लिखित परम्परा से क्रमशः एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को प्राप्त होते रहे हैं।"[1]

हिन्दी साहित्य कोश, भाग एक में लोक कहानियों के विषय में लिखा है कि लोक में प्रचलित और परम्परा से चली आने वाली मूलतः मौखिक रूप में प्रचलित कहानियाँ लोक कहानियाँ कहलाती हैं।

लोक कहानियों के सम्बन्ध में एक मत यह था कि वे मूलतः धर्म गाथाएँ ही हैं। समय के प्रभाव और मूल स्रोत से दूर होकर इन्होंने धर्म गाथाओं के नाम स्थान त्याग दिये हैं। यह मत आज मान्य नहीं है।... लोक कहानी शब्द का प्रयोग कभी कभी अंग्रेजी शब्द "फोकटेल" के प्रयायवाची के रूप में भी होता है। अंग्रेजी में यह शब्द बहुत व्यापक अर्थ रखता है और इसके अन्तर्गत लोक कथा, धर्म गाथा, पशु पक्षियों की कहानियाँ, नीति कथाएँ आदि लोक में प्रचलित वार्ताएँ सम्मिलित की जा सकती हैं।

स्टेन्डर्ड डिक्शनरी आफ फोकलोर में लोक कथा के सम्बन्ध में इस प्रकार लिखा गया है कि "लोक कथा की सुनिश्चित परिभाषा देने का कोई प्रयास नहीं किया गया है। सामान्यतः इस शब्द के अन्तर्गत समस्त परम्परागत आख्यानों और उनके विभेदों को स्वीकृत किया गया है।"[2]

---

1. लोक कथाएँ क्या कहलाती हैं? "आजकल" का लोक कथा अंक पृ० 12

2. The Standard Dictionary of Folklore, Mythology & Legend by Funk & Wagnalls.

2- लोक कथाओं की परम्परा :-

अनादिकाल से ही लोक कथा की जन्म भूमि मनुष्य का मुख है तो उसका प्रसार क्षेत्र मनुष्य का कान है। मुंह से निकले वचन जब कथन का रूप धारण कर लेते हैं और जिह्वा का रस श्रुति की परम्परा में ढलकर कान की गहराई के माध्यम से मन और हृदय तक पहुंच जाता है। तब कथा का आरम्भ होता है। वाणी निराकार है किन्तु कान उसे सुनकर साकारता प्रदान करते हैं। जहां वाणी तथा कान का सम्बन्ध दो मनुष्यों में हुआ वहीं कथा के बीजांकुर उत्पन्न हो जाते हैं।"[1] जितनी प्राचीन विश्व की सृष्टि है उतनी ही पुरानी लोककथाओं की परम्परा है। मानव का जन्म लोक कथा के जन्म के साथ ही हुआ है।"[2]

संसार के विभिन्न देशों में यह लोककथायें मिलती हैं। लोक साहित्य के अध्येताओं ने उनका संग्रह भी किया है तथा विभिन्न दृष्टियों से इनका अध्ययन भी हो चुका है। इन कथाओं के प्राचीनतम रूप संसार के प्राचीनतम साहित्यों अथवा आदिम जातियों के लोक साहित्य में प्राप्त है

भारत में लोक कथाओं की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है और भारतवर्ष है इनका सर्जना केन्द्र। संस्कृत वांङ्मय इसका प्रमुख स्रोत रहा है। इसी के सन्दर्भ में प्राप्त परम्परागत साहित्य के आधार पर हम स्रोतों का संक्षिप्त विवेचन कर रहे हैं। :-

वैदिक संहितायें :- सर्व प्रथम वैदिक संहिताओं में हमें कथाओं का उद्गम दिखाई पड़ता है। वैदिक साहित्य कथाओं से भरा पड़ा है, वेदों की

1- हरियाणा एक सांस्कृतिक अध्ययन लेखक लोक कथायें लेखक डा० भीमसिंह पृष्ठ 256

2- लोक कथा विज्ञान लेखक श्री चन्द्र जैन 1977 पृष्ठ 141

एक एक ऋचाओं में सम्पूर्ण कथायें उपलब्ध होती हैं । ऋग्वेद में ऐसे बहुत से सूक्त उपलब्ध होते हैं जिनमें दो या तीन पात्रों में कथनोपकथन पाया जाता है इन सूक्तों को सम्वाद सूक्त कहते हैं ।[1] ऋषि शुनः शेप का प्रसिद्ध आख्यान अपालात्रेयी के आदर्श नारी चरित्र[2] तथा च्यवन सुकन्या की कथा के सर्वप्रथम दर्शन इसी वेद में होते है ।[3]

<u>ब्राह्मण ग्रन्थ</u> :- इन ग्रन्थों में कतिपय ऐसे सम्वाद एवं चरित्र आये है, जिन्हें हम लोक कहानियों के आदिम उद्गम के रूप में स्वीकार कर सकते है । शतपथ ब्राह्मण में वर्णित पुरुरवा -उर्वशी कथा तथा दध्यङ् आथर्वण (दधीचि वृत्रासुर) कथा नितान्त प्रसिद्ध है ।[4] ताण्ड्य ब्राह्मण में भी च्यवन सुकन्या की कथा उपलब्ध होती है ।[5] ऐतरेय ब्राह्मण में शुनः शेप आख्यान वर्णित है ।[6] शाट्यायन ब्राह्मण में महर्षि कुत्स के वैदिक कालीन महत्व का प्रतिपादन कियागया है ।[7]

उपनिषद् :- उपनिषद्काल में आकर कथाओं का कतिपय नया स्वरूप विकसित हो गया था । गार्गी याज्ञवल्क्य मध्य होने वाला सम्वाद कथा कहने या सुनने का ही रूप है । इसी प्रकार सत्यकाम एवं जाबालि के सम्वाद से भी कथाओं का रूप निखर आया है । यम नचिकेता की सुप्रसिद्ध कथा "कठोपनिषद् का मुख्य वर्ण्य विषय है जिसमें नचिकेता में अपनी [illegible] प्रति विलक्षण प्रतिभा द्वारा यम के अमर बनने का साधन पूछा था । इसी प्रकार

- -

1- ऋग्वेद 1/24/30 2- ऋग्वेद 8/9/1

3- ऋग्वेद 10/39 4- शतपथ ब्राह्मण 12/5/1

5- ऐतरेय ब्राह्मण 7/3 6- ताण्ड्य ब्राह्मण 14/6/11

7- शाट्यायन ब्राह्मण 5/2

अग्नि और यक्ष की सरस कथा का "केनोपनिषद्" में वर्णन पाया जाता है ये सभी कथाएं उपनिषद् काल में आकर लौकिक धरातल पर आ गई हैं।"[1]

<u>पुराण:-</u> पुराणों में आकर कथाओं के का समुचित विकास होने लगा इनमें वैदिक सूत्रों पर आधारित विस्तृत आख्यानों की परम्परा मिलती है। यही कारण यही कारण है कि पौराणिक वाङ्‌मय लोक कथाओं से परिपूर्ण है अति प्राकृतिक तत्वों की विविधता, रोचक तत्वों का समावेश कथाओं के कथानकों का विकसित रूप तथा चमत्कारिक प्रसंगों की योजना ही इन कथाओं की मुख्य विशेषतायें हैं।

<u>रामायण और महाभारत :-</u> इन दोनों ग्रन्थों में ही अनेक आख्यान प्राप्त होते हैं परन्तु महाभारत में रामायण की तुलना में इनकी अधिकता विद्यमान है :-

> "चतुर्विंशति साहस्रीं चक्रे भारतसंहिताम् ।
> उपाख्यानैर्विना तावद्भारतं प्रोच्यते बुधैः ।।"[2]

<u>पंचतन्त्र और हितोपदेश:-</u> संस्कृत के दो ग्रन्थ पंचतन्त्र और हितोपदेश नीति कथा के उत्तम रत्न हैं। इनके अतिरिक्त बहुत सी नीतिकथा की पुस्तके उपलब्ध होती हैं। तृतीय शताब्दी ई० पू० के भरहुत स्तूप पर कई नीति कथाओं के नाम आये हैं।"[3]

पंचतन्त्र की तुलना में हितोपदेश की भाषा सरल और सुबोध होने के कारण यह अधिक लोकप्रियता है।

1- छान्दोग्य उपनिषद् 4/1/3

2- महाभारत आदि पर्व 1/102

3- मैकडोनल इंडियाज पास्ट पृष्ठ 117

पैशाची, प्राकृत में लिखी गुणाढ्य की "बड्ड कथा" [बृहत् कथा] शुद्ध लोक कहानियों का प्राचीनतम संग्रह है। लोक जीवन की इस अमूल्य निधि की रक्षा के लिये संस्कृत को भी राज सभा का आसन छोड़कर कुछ समय के लिये लोकयात्रा करनी पड़ी थी, जिसका विवरण हमें क्षेमेन्द्र कृत बृहत कथा मंजरी तथा सोमदेव रचित कथा सरितसागर" आदि संस्कृत रूपान्तरों में उपलब्ध हुआ है। वैताल पंचविंशति, सिंहासन द्वात्रिंशिका, शुक सप्तति तथा जातक और जैन कहानियों में लिपिबद्ध परम्परा आज भी हमें अत्यन्त सजीव रूप में प्राप्त है।

इन लोक कथाओं की परम्परा के सम्बन्ध में यही कहना पर्याप्त होगा - "कहानी समस्त वाङ्मय की आत्मा है। मौखिक या लिखित साहित्य का कोई रूप ले लें तो उसके मूल में कोई सूक्ष्म कथा अवश्य मिलेगी यह कहना अनुपयुक्त न होगा कि मानव की विश्व के व्यापारों के प्रति जो प्रथमाभिव्यक्ति वाचिक या कायिक हुई होगी" वह एक कहानी रही होगी। मैं और तुम इन इन दो शब्दों में भी एक कहानी है"।[1]

यही दीर्घकाल से चली आने वाली परम्परा हिन्दी साहित्य में आकर विकसित होती रही और इसने सर्वप्रथम लोक कथा के रूप में जन मानस में प्रवेश किया और कालान्तर में शिष्ठ साहित्य के स्वरूप को ग्रहण किया। हिन्दी भाषा कि भिन्न भिन्न भाषाओं में सौराष्ट्री, ब्रज, बुन्देलखण्ड आदि अनेक भाषाओं में लोक कथाओं का संचय हुआ। बांगड़ में भी श्री राजा राम शास्त्री ने " हरियाणा की लोक कथायें तथा हरियाणा की अन्य लोक कथाओं का संग्रह किया।

1- हरियाणा प्रदेश का लोक साहित्य लेखक डा० शंकर लाल यादव 1960 पृष्ठ 337

3- वांगिक लोक कथाओं का वर्गीकरण :-

विद्वानों ने लोक कथाओं का वर्गीकरण विभिन्न रूपों में किया है। डा० सत्येन्द्र ने लोक कथाओं का वर्गीकरण इस प्रकार किया है :-
§1§ गाथाएं §2§ पशु सम्बन्धी अथवा पंचतंत्रीय §3§ परी की कहानियां §4§ विक्रम की कहानियां §5§ बुझौवल §6§ निरअणा बुद्धि गर्भित कहानियां §7§ साधु पीरों की कहानियां ।"[1]

डा० कृष्ण देव उपाध्याय ने भोजपुरी लोक कथाओं का वर्गीकरण इस प्रकार किया है :-
§1§ उपदेशात्मक §2§ मनोरंजनात्मक §3§ व्रतात्मक §4§ प्रेमात्मक §5§ वर्णनात्मक §6§ सामाजिक ।"[2]

डा० कृष्ण लाल हंस ने लोक कथाओं को निम्नलिखित आठ भागों में विभक्त किया है:-
§1§ धर्म कथाएं §2§ पशु पक्षी के सम्बन्धी कहानियां §3§ परियों और अप्सराओं से सम्बन्धीत कहानियां §4§ जादू की कहानियां §5§ वीरता विषयक कहानियां §6§ साधु फकीरों की कहानियां §7§ ऐतिहासिक कहानियां §8§ विविध कहानियां ।"[3]

डा० सत्या गुप्त ने खड़ी बोली की लोक कथाओं को सात वर्गों में विभाजितकिया है :-
§1§ धार्मिक कथाएं §2§ ऐतिहासिक कथाएं §3§ अलौकिक कथाएं

1- ब्रज लोक साहित्य का अध्ययन लेखक डा० सत्येन्द्र पृष्ठ 82
2- भोजपुरी लोक साहित्य का अध्ययन लेखक डा० कृष्ण देव उपाध्याय पृ० 414
3- निमाड़ी और उसका साहित्य लेखक डा० कृष्ण लाल हंस पृ० 341

§4§ सामाजिक कथाएं §5§ नीति कथाएं §6§ हास्य कथाएं

§7§ पशु पक्षि सम्बन्धी कथाएं ।¹

अन्य विद्वानों ने लोक कथाओं को कथानक, पात्र विशिष्ट, उद्देश्य, विशिष्ट साधन आदि के आधार पर ही वर्गीकृत करने का प्रयास किया है।

परन्तु उर्पयुक्त वर्गीकरण को ध्यान में रखते हुये बांगड़ के क्षेत्र और मुख्यत को आधार मानकर हम उनका वर्गीकरण निम्नलिखित ढंग से करते है :-

§1§ व्रत तथा त्योहारों सम्बन्धी लोक कथाएं §2§ देव विषयक कथाएं

§3§ पौराणिक लोक कथाएं §4§ साहस तथा शौर्य की लोक कथाएं

§5§ बहादुराई पूर्ण लोक कथाएं

§6§ उपदेशात्मक लोक कथाएं §7§ पशु पक्षी सम्बन्धी कथाएं

§8§ कुतेवल §9§ मनोरंजन प्रधान लोक कथाएं :- हास्य परिहासपूर्ण मूर्खों की, जाति स्वभाव चित्रण की, तथा ठगों की कथाएं आदि ।

§10§ अलौकिक कथाएं :- परियों की कथाएं, दानवों की कथाएं, भूतप्रेत-चुड़ैलों की कथाएं, जादू की कथाएं, इतिहासाश्रित महापुरुषों अथवा साधु सन्तों की कथाएं ।

उपर्युक्त वर्गों में संबद्ध कथाओं का विश्लेषण प्रस्तुत किया जा रहा है :-

§1§ <u>व्रत तथा त्योहारों सम्बन्धी लोक कथाएं</u> :- व्रत कथाएं केवल स्त्रियों

1-खड़ी बोली का लोक साहित्य लेखिका डा० सत्य गुप्ता पृष्ठ 177

की ही सम्पत्ति है इन कथाओं में व्रत विशेष का महत्व प्रतिष्ठित करने के उद्देश्य से रचना की जाती है। प्रत्येक कहानी में व्रत विशेष का अनुष्ठान करने वाली किसी कल्पित स्त्री को पात्र मान लिया जाता है और उस कथा के अनुसार व्रत करने वाली को अनेक प्रकार के लाभ तथा व्रत की उपेक्षा करने वाली किसी स्त्री को विशेष प्रकार की हानियां होती है। किसी किसी कथा में पुरुष को भी मुख्य पात्र का स्थान मिलता है व्रत सम्बन्धी इन कथाओं में धर्म के आध्यात्मिक भाव का अभाव मिलता है और इनमें शुद्ध लौकिक दृष्टि से किसी कामना की पूर्ति के लिये अनुष्ठान किया जाता है।

इनमें अशुभ परिणाम का निवारण करने के लिये और शुभ परिणाम को प्राप्त करने के लिए देवी देवताओं को प्रसन्न करने का व्रत परिव्याप्त रहता है। सभी व्रत कथायें जीवन में आशा वादिता का संचार करने वाली होती हैं। और इनके अन्त आर्शिवादात्मक वाक्य में मंगल कामना निहीत रहती है।-

" अमुक" देवता जिस प्रकार" अमुक" से प्रसन्न हुए उसी प्रकार सबसे हों।

और बुरा किसी के साथ न होवे व्रत एवं त्योहारों की सूची इस प्रकार है :-

करवा चौथ, अहोई, सकट चौथ, नाग पंचमी, भैया पांचा, हरतालिका, प्रदोष व्रत, सोमवार व्रत, मंगलवार.व्रत, बुधवार, शुक्रवार व्रत, रविवारव्रत इत्यादि कथाएं।

2- <u>देव विषयक कथाएं</u> :- व्रत एवं त्योहारों के अतिरिक्त देव विषयक कहानियां भी यहां प्रचलित हैं जिनमें "हनुमान जन्म की कहानी" विनायक की कहानी जैमाता, लक्ष्मी, सन्तोषमाता आदि की कहानियां भी प्रचलित हैं।

----

(3) पौराणिक लोक कथाएं :- नैतिकता को चरितार्थ करने वाली पौराणिक आधार लिये सत्यवादी हरिश्चन्द्र, सत्यवान सावित्री, नल दमयन्ती, राजा भरथरी, राजा भोज इत्यादि पौराणिक विषयों के सम्बन्ध में इस प्रदेश के लोगों की ज्ञान पिपासा इन लोक कथाओं के माध्यम से ही शान्त होती है। इसका एक कारण यह भी रहा है कि यहां की जनता अधिकांशतः अनपढ़ होती थी और यह क्षेत्र पौराणिक स्थली होने के कारण लोगों का इनमें अत्याधिक रुचि लेना स्वाभाविक ही था। राजा भोज, राजा विक्रमादित्य आदि राजा महाराजाओं के किस्से कहानियां बागर में जनप्रिय रहे हैं। सत्यवादी हरिश्चन्द्र की कथा से जहां लोगों को हरिश्चन्द्र तथा रानी तारामती के जीवन का परिचय प्राप्त होता है वहीं साथ साथ सत्य की पालना करने वालों का साकार रूप भी दृष्टिगोचर होता है और उनके हृदय पर स्पष्ट छाप अंकित होती है। सिंहासन बत्तीसी, बैताल पच्चीसी आदि कहानियां भी पौराणिक आधार पर हैं।

(4) साहस तथा शौर्य की लोक कथाएं :- प्रायः किसी राजा या महाराजा आदि के परिवार के सबसे छोटे भाई या लड़के को महल छोड़के जाना पड़ता है और इन कथाओं में उनकी शूरवीरता का वर्णन होता है। God Helps those who help themselves. वाली कहावत इन कथाओं में पूर्ण रूपेण चरितार्थ होती है। अतः कहानी का नायक अपने साहस एवम् शौर्य पूर्ण कार्यों के प्रतिफल से सुखद अनुभूति प्राप्त करता है वहां श्रोताओं के मनोरंजन के साथ वीर रस का समावेश करने का अपना उद्देश्य पूर्ण करता है।

- -

(5) चतुराई पूर्ण लोक कथाएं :- कुछ कथाओं में कुछ जातियों की चालाकी का चित्रण कियागया है । नाई, चालाक, धूर्त और दुष्टों का शिरोमणी है । ठाकुर भी कम चालाक नहीं होता परन्तु नाई से उसे भी हार माननी पड़ती है । एक कहानी में नाई किसी ठाकुर के साथ उसकी ससुराल जाता है और अपनी चालाकी से स्वंय भोजन खा लेता है और ठाकुर भूखा मरता है । "मूलचन्द" कहानी में ठाकुर ने नाई की सहायता से बनिये की पत्नी को अपनी पत्नी बना लिया । चतुराई पूर्ण प्रचलित लोककथाओं में यहां के लोगों की सहज एवम् तीक्ष्ण बुद्धि का लोहा स्वीकार करना ही पड़ता है । अकबर बीरबल के जटिल और विनोदपूर्ण प्रश्न उत्तरों की कथाएं इसकी के अन्तर्गत आती हैं ।

(6) उपदेशात्मक लोक कथा :- इस वर्ग में आने वाली कथाओं का दोहरा उद्देश्य होता है । एक ओर तो यह श्रोताओं का मनोरंजन करती है । दूसरी ओर इस विनोद शीलता में लिपटी शिक्षा का उपदेश भी दृष्टान्त रूप में उभर आता है और अन्ततोगत्वा यह शिक्षा या उपदेश ही कथा का प्राण बन जाता है । और यही तत्व इन्हे मनोरंजनात्मक कथाओं की अपेक्षा शिक्षात्मक कथाओं के अधिक निकट ले जाता है । पंचतन्त्र का इन कथाओं पर स्पष्ट प्रभाव दृष्टिगोचर होता है । " डायन पत्नी" की कहानी में उपदेश को बड़े रोचक ढंग से दर्शाया है

(7) पशु पक्षी सम्बन्धी कथाएं :- पशु पक्षियों की कथाएं इस वर्ग के अन्तर्गत आती है । पशु एवं पक्षि मनुष्य भी अधिक ज्ञानवान हैं और

- -

कभी कभी वे अपनी बुद्धि द्वारा मनुष्य की रक्षा करते है और सावधान रहने की शिक्षा भी देते हैं । इन कथाओं के माध्यम से इस प्रदेश की भोली भाली जनता नीति शास्त्रों के मूल रहस्यों का ज्ञान करती है । "हंस और कौवा" "सिंह एवं गीदड़" आदि अनेक पशु पक्षियों सम्बन्धी कथाएं उपलब्ध होती है जिन पर पंचतन्त्र और हितोपदेश का प्रभाव लक्षित होता है । यह कथाएं राजनीति को समझाने का प्रयास भी करतेहैं। इन कथाओं में बाल मनोभाव को दृष्टि में रखना, उनके आस्वाद्य की परितृप्ति की प्रमुखता एवं उपदेशात्मकता की प्रवृत्ति को देखते हुए इन्हें पृथक वर्ग में रखना भी आवश्यक है ।

(ड) <u>बुझौवल</u> :- इस वर्ग की कथाओं में कुछ ऐसी बातों को दिया जाता है जिनकी व्यवहारिक जीवन में परीक्षा ली जाती है यों तो ये बातें चतुराई पूर्ण नीतिवाक्यों में रखी जाती है परन्तु कथानक का विकास इन्हीं के समाधान के रूप में होता है अत: ये बातें समस्या का रूप धारण कर लेती हैं । और इसी लिये इन्हें समस्यामूलक कथा की संज्ञा प्रदान भी की जा सकती है । इस वर्ग में प्रश्नमूलक कथाओं का वर्णन भी आता है उपर्युक्त दोनों प्रकार की कथाओं को "बुझौवल" नाम ही दिया गया है ।[1] हरियाणवी बुझौवल कहानियों के चार आदर्श रूप दिये गये है ।- कंजूस साहूकार की कहानी जीवन विज्ञान की कुछ अनुकूल स्थितियों की स्पष्टता देती है । 2- जिनमें शर्त लगाई जाती है 3- जिनमें घटनाएँ देखकर समाधान किया जाता है 4- निरीक्षण तत्वों से पूर्ण बुझौवल कहानी ।[2]

1- ब्रज लोक साहित्य का अध्ययन लेखक डा० सत्येन्द्र पृ० 477

2- हरियाणवी लोक कहानियां लेख, लेखक डा० शंकर लाल यादव हरियाणा संवाद विशेषांक 1980 पृ० 3।

अकबर बीरबल विनोद में अकबर की अनेक जटिल समस्याओं का विवेकपूर्ण उत्तर बीरबल की हाजिर जवाब बुद्धि का ही कमाल था । जैसे आकाश के तारों की गिनती, पृथ्वी का केन्द्र बताना, बैल का दूध आदि ।

{7} <u>मनोरंजन पूर्ण लोक कथाएं</u> :- इस वर्ग में उन्हीं कथाओं को स्थान मिलता है जिनका मूल स्वर अलौकिकता लिये हुए होता है । और साथ में मनोरंजन तत्व भी । यद्यपि व्रतों, त्योहारों आदि की लोक कथाओं में मनोरंजन की कमी नहीं होती फिर भी इन कथाओं के उद्देश्य पूर्ति मनोरंजन न होकर आध्यात्मिक होती है । इसके ठीक विपरीत कुछ ऐसी लोक कथाएं होती है जिनमें अलौकिकता, कौतूहल एवम् आश्चर्य जनक परिस्थितियों एवम् वातावरण का उल्लेख कियाजाता है और मनोरंजन प्रधान कथाएं होती है अस्वाभाविक वस्तु वर्णन के लिए भी काफी गुंजाइश रहती है । हास-परिहास, मूर्खों जाति स्वभाव-चित्रण, ठगों आदि की कथाएं इसी के अन्तर्गत आती हैं

<u>हास परिहास पूर्णकथायें</u> :- हास परिहास पूर्ण कथाएं सभी देशों और कालों के अंचलों में लोक प्रिय है । प्रोफेसर थाम्सन के मतानुसार मूर्खों के बेतुके और बेहूदे कार्यकलाप हर प्रकार के धोखा, चालाकी एवं अश्लीलता पूर्ण स्थितियों का इन लोकप्रिय हास्य कथाओं में चित्रण किया जाता है । इन कथाओं में एक ही नायक को कभी तो बहुत बड़े चालाक व्यक्ति के रूप में चित्रित किया जाता है । और कभी कभी उसकी बड़ी से बड़ी मूर्खता भी कथा का कार्य विषय बन जाती है । उस व्यक्ति के विषय

- -

में भद्दे से भद्दे और अश्लील प्रसंगों को भी जोड़ दिया जाता है । इनमें से कुछ कथाएं सार्वदेशिकता गुण से युक्त होती हैं और कुछ ऐसी भी कथाएं आज प्रचलित हैं जो तीन चार हजार वर्ष पुरानी हैं और जिन्होंने विश्व भर का भ्रमण कियाहै ।*[1] हास-परिहास पूर्ण अधिकांश कथाएं प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से चालाकी से सम्बद्ध कही जा सकती है ।*[2]

मूर्खों की कथाएं :- ब्रज में मूर्खोंका परिहास पूर्ण चित्रण भी लोक कथाओं में दृष्टिगोचर होता है । कई बार तो इन की मूर्खता के कारण किसीमनुष्य की मृत्यु तक भी हो जाती है ।

जाति स्वभाव चित्रण का कथाएं :- जाति स्वभाव चित्रण की कथाओं में एक बनिये की कथा इस प्रकार है- एक कथा में एकबनियें के घर में चोर घुस जाते हैं और उसके सिर पर लठ तान के खड़ा हो जाता है परन्तु बनिया आंखों के समक्ष सबकुछ देखकर भी कुछ करने में असमर्थ होता है । अपना बचाव करने के लिए वह नींद व स्वनन्न देखने का बहाना करता है और कृत्रिम स्वप्न्न में अपने पुत्रों एवं पड़ोसियों को पुकारने लगता है । इस प्रकार अपनी जान बचा लेता है ।

ठगों की कथाएं :- ठगों से सम्बन्धि कथाएं भी इस वर्ग के अन्तर्गत आती हैं इन कथाओं में ठगों के कौशलपूर्ण कलापों का चित्रण किया जाता है । ये ठग दूसरों को ठगते हैं ।

§10§ अलौकिक तत्व से युक्त कथाएं :- इन वर्ग में उन कथाओं को स्थान दिया गयाहै जिनके या तो पात्र अलौकिक हैं जैसे -परियां, दानव भूत-प्रेत, चुड़ैल या पात्रों को लौकिक होते हुए भी उनके कार्यों में पर्याप्त मात्रा में अलौकिकता भरी हुई होती है । - ये पात्र जो कुछ भी कार्य करते हैं उनमें लोकोत्तर चमत्कार रहता है और कभी कभी यह जादू टोटर

1- दी फोक टेल लेखक स्टिथ थाम्सन पृष्ठ 10

2- दीफोक टेल लेखक स्टिथ थाम्सन पृष्ठ 189

भीअपने कार्य की सिद्धी तथा दूसरे के विनाश का कारण बनते हैं ।[1]

परियों की कथाएं :- परियों की भी आत्माओं की तरह ऐसी सत्तायें है जो अपने भौतिक विशिष्टताओं से अभी तक अपने को रहित नहीं कर सकी हैं । ये सामान्य रूप से सौन्दर्य की प्रतीक एवं जोड़ने के लिये मानव जगत के सम्पर्क में आती रहती है । ये कभी कभी अनिष्ट भी करती है परन्तु बहुत ही कम।

दानवों की कथाएं :- दानवों से सम्बन्ध कथाओं में ये दिखाया गया है कि भीषण एवं भयंकर दानवों का भी मनुष्य अपनी बुद्धि द्वारा विनाश करता है । प्रायः दानव पुत्री मानव से प्रेम करने लगती है और वही दानव के विनाश का कारण बनती है । दानव के प्राण किसी गुप्त स्थान सुरक्षित होते हैं दाने की कहानी का अन्त देखिए:- एक बच्चा छोड़ड़ मूं. अर च्यूं करके नाड़्य तोड़्य दी तोता की । दाना मर गया । पक्षी के मरते ही दानव की मृत्यु हो जाती है और मनुष्य निरविघ्न होकर सकुशल घर वापिस लौटता है और दाने की लड़की से विवाह करके सुख पूर्वक रहने लगता है ।

भूतप्रेत चुड़ैलों की कथाएं :- भूतप्रेत चुड़ैलों की कथाओं का भी वर्णन यहां मिलता है ।

जादू की कथाएं :- "जादू की अंगूठी" नामककथा में प्रत्येक वस्तु को अंगूठी से स्पर्श करने पर वह सोने की बन जाना और आंखों पर रगड़ने से आंखोंकी रोशनी वापिस आ जाना आदि जादू इन कथाओं में दर्शनीय है ।

इतिहास रक्षित महापुरुषों अथवा साधु सन्तों की कथाएं :- ऐसी कथाएं भी यहां उपलब्ध हैं । जिनमें इनके चमत्कार के दर्शन हो सकते हैं ।

1- कनौजी लोक साहित्य लेखक डा० सन्त राम अनिल पृ० 197

4- बांगरू लोक कथाओं की विशेषताएं :-

डा० कृष्ण देव उपाध्याय ने लोक कथाओं की विशेषताओं को आठ विभागों में विभक्त किया है[1]:-

1- प्रेम का अभिन्न पुट
2- अश्लील श्रृंगार का अभाव
3- मानव जीवन की मूल प्रवृत्तियों से निरन्तर साहचर्य ।
4- समृद्धि और मंगल कामना की भावना ।
5- संयोग में अन्त ।
6- रहस्य, रोमांच एवं अलौकिकता की मात्रा की प्रधानता ।
7- उत्सुकता की प्रबल भावना ।
8- वर्णन की स्वाभाविकता ।

जिस प्रकार भारतीय संस्कृति की विविधता में भी एकता का तत्व है का बोध होता है । उसी तरह पंजाब, बंगाल, उड़ीसा आदि की लोक कथाओं में स्थानीय भिन्नता से दूर सामान्य तत्वों का विकास उपलब्ध होता है । इसी प्रकार बांगरू लोक कथाओं में भी उपर्युक्त वर्णित विशेषताएं किसी न किसी रूप में अवश्य ही मिलती हैं ।

हरियाणा लोक कथाओं में प्रेम का अभिन्न पुट तो पास-पड़ोस के क्षेत्रों की लोक कथाओं के समान ही है । परन्तु अश्लीलता का स्तर

- -

1- भोजपुरी लोक साहित्य का अध्ययन लेखक डा० कृष्ण देव उपाध्याय पृष्ठ 419

अन्य क्षेत्र की कथाओं से भिन्न मिलता है । श्लील और अश्लील का अन्तर भी स्पष्ट वादिता के कारण कम है कहीं कहीं किसी प्रसंग में अश्लीलता अधिक मिलती है । किसी तथ्य की पुष्टि हेतु दृष्टांत रूप में कही जाने वाली कथाओं की अश्लीलता क्षम्य मानी जाती है । मानव की मूल प्रवृत्तियों का चित्रण उदाहरणतः "एक लड़का की चालाकी" में धोबी के लोग, गोपाल का वस्त्र मोह, अवाराजी की सरलता और बुढ़िया के पुत्री प्रेम का निरूपण मिलता है । आंचलिक कथाएं सुनने तथा सुनाने के इस मूलभूत उद्देश्य की पूर्ति करती है कि लोग दूसरों की भूलों को न दोहरायें तथा उनके गुणों से अपने जीवन को ज्योतिर्मय बनायें । ईश्वरीय करुणा, आस्तिकता, कर्मफल तथा पुर्नजन्म आदि मान्यताओं पर अधिक बल मिलता है । यहां महादेव पार्वती की अनुकम्पा विशेष रूप में मिलती है ।

अधिकांश कहानियां सुखान्त हैं । एकाध कहानी दुःखान्त भी मिलती है । उदाहरणार्थ " जेरावी ते छिमोरे गोहे पड़ेगो," में राजा ने अपने दत्तक पुत्र की वध की योजना बनाई परन्तु राजा का खुद का लड़का मारा गया हमारी सहानुभूति राजा के पुत्र के साथ जाती है परन्तु दुःख भी होता है ।

चालाक लड़का की कहानी का अन्त न दुखान्त है और ना ही सुखान्त है अपितु युक्ति चमत्कार में होता है । विवेचन से पता चलता है कि आंचलिक लोक कथाओं में कोई न कोई तत्व का समावेश अवश्य ही रहता है ।

- -

5- आंगिक लोक कथाओं के मूलाभिप्राय :-

लोक कथाओं में अभिप्रायों का विशेष महत्व है। यह इनकी रोचकता बढ़ाते हैं। इनसे ही लोक कथाओं में रोचकता आती है एवम् उनकी सौन्दर्य की अभिवृद्धि होती है। वस्तुतः लोक कथा का अस्तित्व इन अभिप्रायों से ही सिद्ध होता है। अंग्रेजी में अभिप्राय को "मोटिफ" कहते हैं। आज इस शब्द मोटिफ के पर्याय रूप - में मूल अभिप्राय, प्रेरक अभिप्राय, अभिप्राय, कथारूढ़ि आदि अनेक शब्द प्रचलित हैं। डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने ही मोटिफ के लिए कथानक रूढ़ि का सर्वप्रथम प्रयोग किया था। तथा प्ररूढ़ि एवम् रूढ़ तन्तु शब्दों को अपनाने वाले कन्हैया लाल सहल है।"[1]

डा० वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार - अभिप्राय कहानियों के अत्याधिक महत्वपूर्ण ही अंग है उनका कथन है कि ईंट गारे की सहायता से जैसे भवन बनते हैं, वैसे ही भिन्न भिन्न अभिप्रायों की सहायता से कहानियों का रूप सम्पादित होता है।"[2] डा० श्यामाचरण दुबे का मत है कि अभिप्राय के आधार पर सम्पूर्ण विश्व के लोक तथा साहित्य का विश्लेषण हमें बतलाता है कि मानव के नये अभिप्राय निर्मित करने की शक्ति आश्चर्य जनक रूप से सीमित है। थोड़े से ही अभिप्राय नये नये रूपों में हमें मानव जाति की लोक कथाओं में मिलते हैं।"[3]

- -

1- लोक कथाओं के कुछ रूढ़ तन्तु (डा० सहल) आमुख ।

2- लोक कथा- अंक आजकल- मई 1954 पृष्ठ 23

3- मानव और संस्कृति डा श्यामाचरण दुबे पृष्ठ 182

श्री स्टिथ थामसन के विचार में "अभिप्राय कथा का लघुतम तत्व है जो कि परम्परा में स्थिर रूप लेरहने की शक्ति रखता है। इस प्रकार की शक्ति के रखने के लिए उसमें कुछ असाधारणता और अपूर्वता होनी चाहिए। अभिप्राय कथानक के निमार्ण तत्व है। आपने अभिप्रायों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया है -

प्रथम- कर्ता-कथाओं में देवता, असाधारण, पशु, आश्चर्यजनक प्राणी, जैसे चुड़ैल, राक्षस, अप्सरा और परंपरित मानव चरित्र जैसे प्रिय सबसे छोटा बच्चा या क्रूर सौतेली मां।

द्वितीय- कुछेक ऐसी वस्तुएं जो कथा व्यापार में काम आने वाली होती है। जादू वस्तुएं, असाधारण रिवाज, अनोखे विश्वास।

तृतीय- स्थान कुछ एक घटनाओं का है जिनमें बहुत से अभिप्राय आ जाते है।

उपर्युक्त वर्गीकरण से पता चलता है कि अभिप्राय कथानक के सभी अंगो को अपने में समेटे हुए है क्योंकि कथानक घटना, चरित्र और कार्य के मेल से बनता है। "अभिप्राय घटना के भी हो सकते है चरित्र के भी और कार्य के भी अभिप्राये कथानक का लोक कथात्मक रूप है। और इसलिए जिस प्रकार कथानक के बिना कथा का अस्तित्व नहीं उसी प्रकार प्रत्येक लोक कथा में किसी न किसी प्रकार का एक या अधिक अभिप्राय उपस्थित रहते हैं।"[1]

1- लोक साहित्य विज्ञान [डा० सत्येन्द्र] पृ० 274

बांगड़ लोक कथाओं में उपलब्ध अभिप्राय (मोटिफ्स) निम्नलिखित हैं :-

x– अमरफल का वर्णन और चिर यौवन की साधना ।

x– धन को पीपल या नीम की जड़ों के नीचे दबा देना ।

x– पशु पक्षियों का मनुष्यों के साथ रहना तथा बातचीत करना ।

x– दानवों का अपने महल में प्रवेश करते ही, "मं मां मानस की गंध आवे से" कहना, दानवों द्वारा अपनी योनि तथा परयोनि-परिवर्तन आदमी को मन्त्र मारकर मक्खी, तोता पत्थर आदि बना देना । उनका जीवन सात समुन्द्र पार के पिंजरे में तोते के भीतर होना आदि

x– जादू की रसीब, सोटे अथवा करनी का वरदान ।

x– रानियों का आसन-पाटी लेकर पड़ जाना ।

x– कमथली का वर्णन ।

x– पगड़ी बदल यार ।

x– वात्सल्य का स्तनों से दूध की धार बहना ।

x– पान का बीड़ा खाना ।

x– बाबा जी के आशीर्वाद मृत्युगता रमणी का जी उठना ।

x– दिशा विशेष में जाने की प्रति निषेध ।

ये अभिप्राय तो नमूने के तौर पर दिये गये हैं बांगड़ लोक कथाओं इनकी संख्या सैकड़ों में उपलब्ध होती है ।

- -

6- बांगरू लोक कथा मानक रूप :-

कथा मानक रूपों (Folk Tale Types) का अध्ययन भी कथाओं के सम्बन्ध में आवश्यक प्रतीत होता है इन मानक रूपों से हमें यह सुगमता से ज्ञात हो जाता है कि विभिन्न रूपों में प्रचलित एक कथा का मूल रूप क्या हो सकता है एवम् इसका जन्म स्थान कहां है। जिस प्रकार वाक्य विन्यास भाषा विषयक प्रतिभा का द्योतक कहा गया है उसी प्रकार कथानक रूप कथाकार की अनोखी सूझ के परिचायक है। प्रकार या मानक की परिभाषा देते हुए आर्ने की परम्परा के स्टिथ थामसन लिखते हैं- "प्रकार या मानक Type वह परम्परा प्राप्त कथा है जिसका स्वतन्त्र अस्तित्व है। वह एक पूर्ण कथा के रूप में कही जा सकती है और अन्य किसी कथा के साथ बताई जा सकती है। . .... प्रकार निर्धारित करने के हेतु आर्ने ने कथाओं को उनमें आने वाली घटनाओं में विभाजित किया है।"[1]

जिस प्रकार भवन के निर्माण में ईंट पत्थर चूना आदि अनिवार्य है उसी प्रकार बांगरू लोककथाओं के समीक्षात्मक अथवा विश्लेषणात्मक अध्ययन से अभिप्रायों एवं कथानक रूपों की भी विशेष आवश्यकता दृष्टि गोचर होती है।

1- लोक साहित्य विज्ञान लेखक - डा० सत्येन्द्र पृष्ठ 272

7- बांगरू लोक कथाओं के तत्व :-

सामान्यत: कथानक, पात्र, चरित्र चित्रण, कथोपकथन (संवाद) भाषा शैली, देशकाल, एवम् उद्देश्य आदि ऐ तत्वों होते है। जो कथा की रचना करते हैं। स्थानीय आधार पर इन तत्वों की संख्या कम भी हो जाती है बांगरू लोककथाओं का विवेचन इन तत्वों के आधार पर प्रस्तुत है।

1- कथानक :- बांगरू लोक कथाओं की कथानक मुख्य रूप में पौराणिक ऐतिहासिक, सामाजिक एवम् काल्पनिक (मिथकीय) रूपों में उपलब्ध होते हैं। इनका कथानक सरल एवम् सुगम होता है। और इनकी रचना में विलष्टता और जटिलता नहीं होती साथ ही साथ जीवन की उपेक्षा है भी नहीं मिलती

बांगरू लोक कथाओं के मुख्य कथ विवाह तथा प्रेम की समस्याओं से उत्पन्न होते हैं। विवाह को लोग वरदान समझ कर सौन्दर्य की खोज में भिन्न भिन्न लोकों का भ्रमण करते हैं। सशर्त विवाह प्रचलित है "बातर नार" में लड़के ने शर्त लगाई और "उरवसी अर राजकुमार" में गंधी की बेटी उर्वशी ने। तोता मैना परम्परा की समस्त कथाएं ऐ स्त्रियों के गुणों तथा दुर्गुणों के विश्वास पर आधारित है।

- -

II- <u>पात्र</u> :- आंध्र लोक कथाओं में पात्रों की संख्या भी अधिक रहती है। छोटी कहानी में भी तीन से कम पात्र नहीं मिलते और बड़ी कहानियों में इनकी संख्या पन्द्रह बीस तक पहुंच जाती है। राजा-रंक, धनी -व्यापारी, किसान-पुरोहित, देव-दानव, नर-नारी, मोहिनियारिणी-जादूगारिणी, योगी-भोगी, डोम- डोमनी, जल्लाद-, सैनिक, मन्त्री, गुरु - शिष्य आदि पात्र इन कहानियों में अपनी लीलायें दर्शाते हैं। बड़ी बड़ी लोककथाओं में नायक नायिकाओं के साथ खलनायक, पशु-पक्षि आदि भी पात्र के रूप में दृष्टिगोचर होते हैं। निष्कर्ष रूप में यह कह सकते हैं कि इन कथाओं में मानवी विश्व के प्राणी आ जाते हैं।

III- <u>पात्र चरित्र चित्रण</u>:- आंध्र लोक कथाओं में चरित्रों का चित्रण बड़े ही स्वाभाविक एवं सरल तरीके से हुआ है। चरित्र चित्रण की मानवीकरण शैली पात्रों को प्रतीक पात्र बनाने में सहायक सिद्ध होती है। सम्भव है कि ऐसी प्रतीक पात्र रचना के मूल में यह रहस्य हो मानो अपनी बात को स्वयं न कह कर किसी अन्य के मुंह से कहलवाना चाहता होगा। प्रसंग वश ही कहीं कहीं प्रधान पात्रों का चरित्रांकन थोड़ा बहुत अवश्य हो पाता है। जैसे "काशी ब्राह्मण" का तथा "उरवशी और राजकुमार" में दोनों के चरित्र की हल्की सी झलक मिलती है। कारण कि इन कथाओं का लक्ष्य नैतिकतागत शुभ का है चरित्र की रंग रेखा के उभार का नहीं है।

- -

11/- कथोपकथन:- बांगरू लोक कथा में पात्रों का वार्तालाप बड़े ही आकर्षक ढंग में प्राप्त होता है। संवाद लोक कथाओं में मिलते तो हैं परन्तु उनका अंश बहुत ही कम है। महादेव पार्वती की वार्ता भी कथाओं में सुनी जाती है। परन्तु उसमें एक रसता है विविधता नहीं। एकाध स्थान पर संवाद कथानक में बाधा उपस्थित करके नई परिस्थितियों को जन्म भी दे देते हैं जैसे "बातर नार" में जब पत्नी ने पति को जुआ मारने से रोका तो उसने कारबार करने की ठानी। "चिड़िया और मुर्गी" की कहानी में अत्यन्त सुन्दर चंचलता तथा रोचकता से परिपूर्ण संवाद मिलते हैं। "आड्डा बालका" में आदि से अन्त तक दो शेरों का और बाद में शेरा तथा सियार का संवाद चलता है। यह कहानी पूर्णतः बोलचाल के गद्य की संवाद शैली में कही गई है।

1/- भाषा एवं शैली :- बांगरू लोक कथाएं गद्य के साथ साथ गद्य तथा पद्य की संवाद शैलियों में भी प्राप्त होती है। इनकी शैली को तीन रूपों में विभाजित किया जा सकता है :-

i- गद्यात्मक ii- पद्यात्मक iii- चम्पू

बांगरू लोक कथाएं मूल रूप में गद्य शैली में प्राप्त होती हैं परन्तु गद्य एवं पद्य की शैली में सन्दर्भ कथा पद्यात्मक संवाद शैली के चमत्कार पर ही पुष्पित एवम् पल्लवित होती जान पड़ती है। उदाहरण के लिये यहां एक

- -

सन्दर्भ कथा दी जाती है :-

म्हारे काली कोली रात घटाटोप हुई है

म्हारे साखवं तारीख थारे कांप हुई है ?

चटक चांदनी की रात तारा कोई कोई है

थारे सोळवीं तारीख म्हारे कांप हुई है ।

इस सन्दर्भ में पहले अत्यन्त संक्षिप्त द्वारा पद्य शैली का प्रयोग कियागया और बाद में कथाकार उनके रहस्य को स्पष्ट करता है । जिन कथाओं में पद्य और गद्य का मिश्रण होता है वह चम्पू शैली की कथाएं कहलाती है ।

कुछ कथाओं के मध्य तथा अन्त में पद्य भी मिलते हैं । गद्य-पद्य मिश्रित शैली से कहानी में चमत्कार सा आ जाता है । " पद्मिनी" कहानी में नीति की व्यंजना करने वाला दोहा देखिए:-

गंजा कागा कोलरा औछी नरका होय ।

इन ज्यारां से बोलिये ज्यब बात में ली ताल होय ।

*बेकूफा अर बान्दर, तथा रानी मककावली की कहानियों में चम्पू शैली के दर्शन होते हैं ।

पद्यात्मक आंगिक लोक कथा इस प्रकार है जिसमें गीत कथा मिलती है

- -

निम्नलिखित पद्यात्मक शैली की आंचलिक लोक कथा में एक राजा के दो लड़कों में से एक विवाहित था और दूसरे कुमार ने अपने भाई का वध करके जंगल में फेंक डाल दिया और भाभी के पूछने पर देवर ने बताया कि वह तो कोई गीदड़ या कुत्ता मरा पड़ा है जबकि वास्तव में वह उसका भाई था । अन्त में भाई को आत्म ग्लानि हुई । गीती कथा इस प्रकार है :-

ऊंचे छज्जे पै खड़ी ए केस सुखाऊं
देवर आण्य के हार बहुया मेरे राम ।
और दिनां देवर दोनों आवते,
आज एकला क्यों आया मेरे राम
म्हारा बीरा[1] छलरहारी बहका खिलाड़ी,
बन में धूम मचाई मेरे राम ।
एक कागा बोले दो कागा बोले,
ताड़े में चील मंडराई मेरे राम
के गादड़ के कुत्ता ए मरया से,
तुम्हनें, बांस[2] आवैगी मेरे राम
पल्ला उघाड़ के देखण लाग्यी
यो मेरी नणद का बीरा मेरे राम
अच्छा हो देवर चंदन कटाइए,
चिता बनाइए मेरे राम ।[3]

- -

1- भाई 2- दुर्गन्ध

3- हरियाणा लोकगीत संग्रह लेखक नादान हरियाणवी पृष्ठ 129-131, 1962

कहानी का आदि तथा अन्त शैली की दृष्टि से महत्वपूर्ण होता है। "च्यार दास का कूप" कहानी डेम-डोमनी के संवाद से शुरू होती है, "बात मैं हुंकारा और फौज मैं नगारा" वाक्य से ही कहानी आरम्भ हो जाती है"राजा भोज मूलचन्द" इसी का उदाहरण है :-

बात की बात की करामात
कोड़ी का धक्का, मच्छर की लात।
राम बचावे तो बचे नहीं तो बेचने की नहीं बात
और एक बैल का सौ साढ़े सतरा हाथ।
अब सुणो हमारी बात
एक राजा था, उंका नाम भोज थो।

"बात मैं हुंकारा अर फौज मैं नगारा" राजा के सात छोरा था। छः ब्याहता था अर एक कुंवारा।[1]

कुछ आंचलिक लोक कथाओं के अन्त में पद्य कथन की रीति पाई जाती है :-

दम्मा दाणी खतम कहाणी
दम्म पुराणा हरियाणा बाणा,
दो बिलाइयां ने कुआ खोद्या
काग नाचता तड़ गया।
बिलाई हक्का दे सैं...
मूसा का तै टांग टूट गई
कहनियां नै गुड़ दे से।

1- डाक्टर शंकर लाल यादव, हरियाणा प्रदेश का लोक साहित्य पृष्ठ 369 शीर्षक लोक कथा से उद्धृत। 1960

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि आंगिक की लोककथाएं शैली के तीनों रूपों में उपलब्ध होती है। आंगिक लोक कथाओं की भाषा स्वाभाविक, सरल, सुबोध, एवं शैली सीधी सादी है मुहावरे एवम् कहावतों की स्पष्ट छाप इन कथाओं पर अंकित है। मुहावरे एवम् कथाओं का आंगिक लोक कथाओं में समावेश इसी अध्याय के नौ नम्बर शीर्षक में वर्णित है। सभी कथानक स्वाभाविक है, भाषा सीधी प्रभावी, भावानुरूप होने के कारण सजीव है। इसी कारण पाठकों को हृदय पटल पर कथाओं का प्रभावी रूप स्थायीत्व ग्रहण कर लेता है।

मुख्यत: आंगिक लोक कथाओं की भाषा आंगिक ही है परन्तु भाषा में स्थानीय ध्वनि भेद आंचलिक बोली की रंगत का सम्मिश्रण मिलता है :-

1/1- उद्देश्य :- इनमें सामूहिक मनोरंजन की भावना पाई जाती है। तथा हास्य व्यंग्य के साथ साथ "लोक व्यवहार" लोकाचार तथा लोकानुभूति को व्यक्त करना भी इन कथाओं का मुख्य उद्देश्य है। परन्तु समय साथ आज लोक मानस की बुद्धि विकसित होती ही जा रही है। इसलिए इन कथाओं के उद्देश्य में वृद्धि होती ही जा रही है। मनोरंजन के अतिरिक्त कतिपय उद्देश्य ये है :-

शिक्षा, राजनीति के सिद्धान्तों को सुगम बोधगम्य बनाना, धार्मिक तत्वों का स्पष्टीकरण, प्रतिपाद्य विषय को रोचक बनाना, श्रोताओं को प्रभावित करना आदि।

- -

8- वर्णित लोक कथाओं के वर्ण्य विषय:-

जिस तरह संसार की परिधि में उपलब्ध प्रत्येक चेतन तथा अचेतन लोक कथा का मुख्य तथा साधारण पात्र बन सकता है उसी प्रकार उसके जीवन की प्रत्येक अवस्था लोक कहानी का वर्ण्य विषय बन सकता है।"[1] मानव एवम् पशु पक्षि के अतिरिक्त देवी देवता, दैत्य दानव, पादप-पुष्प आकाश पाताल निवासी आदि, समस्त कामनाएं, भावनाएं, मानसिक प्रवृत्तियां आदि लोक कथाओं के वर्ण्य विषयों के अन्तर्गत मानी गई है।"[2] यद्यपि ये अपने अपने देश एवम् प्रदेश की विशेषताओं को व्यक्त करती है तथापि विभिन्न प्रदेशों में मूल वर्तिनी एकता को छोड़ कर आंचलिक विविधता एवम् भिन्नता की मात्रा लोक कथाओं को पहचानने की मुख्य कसौटी है। इस भिन्नता का सम्बन्ध सांस्कृति जीवन की इकाई से होता है जिसका अधिकांश श्रेय प्राकृतिक तथा सामाजिक परिवेश की अखंडता में निहीत है।"[3] "हरियाणा की लोक कथा तथा कहानी से अभिप्राये उत्तर भारत की एक सांस्कृतिकइकाई से है, जिसमें बहुत कुछ एकरूपता तथा काफी निरालापन भी मिलता है। कारण कि वर्तमान राज्य से संस्कृति का प्रसार अधिक क्षेत्र में है और जीवन पद्धति भी अलग स्थानीय आवास, मानवीय तकनीक तथा चिन्तन के विकास का परिणाम है।"[4]

- -

1- लोक कथा विज्ञान लेखक श्रीचन्द्र जैन, 1977 पृ०098

2- - - वही-6

3- हरियाणा एक सांस्कृति अध्ययन लेख लोक कथाएं लेखक डा० भीम सिंह पृष्ठ 270

4- - - वही- -

यहां की भौगोलिक परिस्थिति इस बात को स्पष्ट करती है कि यहां बड़े बड़े कानन थे जहां असंख्य पशु चरते थे गंगा यमुना और सरस्वती नदियां बहती है। और यहां की भूमि कृषि योग्य है। अतः यहां के लोग खेती, पशुपालन तथा व्यापार वाणिज्य धन्धे करते हैं। इस क्षेत्र में कृषि दर्शी की परिपूर्णता है। इसी कारण यहां गंगा स्नान से सम्बन्धित लोक कथाएं प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होती है।

अतिथि सेवा, परोपकार, बबर पंचायती पन, किसानों की दरिद्रता, सादगी तथा भोलापन और साहूकारों के ब्याज बट्टे और अनुचित लाभ का वर्णन और पशुधन, का वातावरण इन लोककहानियों की निजी विशेषताएं है शिव पूजन की प्रथा के अनुसार महादेवी- पार्वती का अनुकम्पा तथा विवाद की भरमार है। राजाओं का जीवन भी जनता के लिए मरीह- मन्त्र की तरह आकर्षक रहा है। पीरों तथा फकीरों की तपश्चर्या और चमत्कारों का प्रभाव कहानियों में झलक उठता है। गोदान तथा ब्राह्मण की पूजा आज भी जीवन का अंग है। मेरी धारणा यह है कि जीवन दर्शन का साक्षात करने वाले जितने चुटकुले तथा दृष्टांत हरियाणा के अपढ़ लोगों द्वारा बात बात में उद्धृत किए जाते हैं, उतने कदाचित किसी अन्य प्रान्त के लोगों के दैनिक व्यवहार में नहीं मिलते होंगे। विनोद व्यंग्य तथा हाजिर जवाबी का पुतला बीरबल जहां पैदा हुआ। जाति बिरादरी की भावना मिलती है। परन्तु साम्प्रदायिक कटुता की ध्वनि रंचमात्र भी सुनाई नहीं पड़ती।

1- हरियाणा एक सांस्कृतिक अध्ययन लेख लोक कथाएं लेखक डा० भीम सिंह पृष्ठ 270

9- बांगड़ लोक कथाओं में मुहावरे एवम् लोकोक्तियों का प्रयोग :-

यहां की लोक कथाओं में स्थानीय मुहावरों तथा लोकोक्तियों की मधुरता यहां के जीवनानुभूति तथा कार्याभ्यास में समाई हुई है । लोक जीवन की सत्यता इतनी स्वाभाविक एवम् संक्षिप्त रूप में व्यक्त करती है जिससे यहां के जीवन दर्शन का सहज अनुमान लगाया जा सकता है । उदाहरणार्थ

"वो लाडू ग्यो था मन वो तो <u>जाण बावलो</u> हुय गयो थो । उसका मन मंह त <u>लाडु सा फूटे</u> थे कुय ग्यो काम । अर धोड़ोवालो रह ग्यो <u>हाथ मसलतो</u> ।"[1]

रेखांकित मुहावरों का यहां प्रयोग स्वाभाविक रूप में हुआ है ।

10- बांगड़ लोक कथाओं की सामान्य प्रवृत्तियां :-

इस प्रदेश में प्राप्त होने वाली कथाओं में पर्याप्त विविधता है । इसमें धर्म की अभिव्यक्ति, शिक्षा तथा मनोरंजन के तत्व प्रचुर मात्रा में विद्यमान रहते हैं । इन कथाओं में जो सामान्य प्रवृत्तियां उभरती हैं उन्हें निम्नांकित प्रकार से दिया जाता है :-

1- लोक कथाओं में बिखरे हुए अभिप्रायों (मोटिफ) का वर्णन निरर्थक होता असंगत नहीं होता । वास्तव में उन्हीं अभिप्रायों में कथा की आत्मा निवास करती है ।

2- विविध जातियों का स्वाभाविक चित्रण 3- सत्य जीत एवम् झूठ की पराजय 4- अच्छे कर्मोंका श्रेष्ठ फल 5- अन्ध विश्वासों का बाहुल्य 6- मानवीय प्रवृत्तियों का सरल एवम् सहज चित्रण 7- मंगल कामना की भावना 8- भाग्य वाद का आसरा 9- जघन्य कृत्यों का बुरा परिणाम । 10- नैतिकता का समावेश, अलौकिकता एवम् कल्पना के प्रति आकांक्षा और अधिकांश पात्र एवम् स्थान सुपरिचित ।

1- हरियाणा की सांस्कृति अध्ययन में लोक कथाएं लेखक डा० भीम सिंह पृष्ठ 271 से उद्धृत ।

11- लोक कथा तथा आधुनिक कहानी में अन्तर :-

तात्त्विक दृष्टि से लोक कथा व आधुनिक कहानी में बहुत अन्तर है वर्तमान कहानी कार कहानी लिखते समय कहानी के भारतीय तथा अभारतीय सभी तत्वों पर ध्यान देकर आयास पूर्वक कुछ विशेष पक्षों पर विशेष बल देकर पाठक पर अभीष्ठ प्रभाव की सृष्टि करना चाहते है। परन्तु लोक कथाकार इन सिद्धान्तों से अपरिचित से रहते हैं।

लोक कथा का कथानक ऐतिहासिक, पौराणिक, काल्पनिक [धार्मिक]य सभी प्रकार का होता है। धार्मिक भावनाओं तथा सरल मानव के मूल्यों पर प्रकाश डालता है। परन्तु आज की कहानियों के समान सामाजिक वैषम्य और राजनीतिक हलचलों से लोककथायें दूर ही रहती हैं, यहां प्रेम और वीरता के भावों की प्रधानता के साथ साथ कथाओं का अन्त प्रायः सुखान्त होता है। जबकि आधुनिक कहानियों का अन्त उलझन पूर्ण होता है।

पात्रों की दृष्टि से लोक कथाओं के पात्र ऐतिहासिक या काल्पनिक राजा रानी ही हुआ करते है इसके साथ ही सेठ- साहूकार और भूतप्रेत को भी उचित महत्व दिया जाता है किन्तु सामान्य जन की वहां प्रायः उपेक्षा हुई है। आधुनिक कहानी का आदर्श ठीक विपरीत है। यहां साधारण मनुष्य सर्वोपरि है। संवाद की दृष्टि से लोक कथाओं में कोई विशेष सतर्कता नहीं बरती जाती जबकि आधुनिक कहानी में संवादों की सार्थकता पर विशेष ध्यान दिया जाता है। भाषा और शैली की दृष्टि से लोक कथा में सहज स्वाभाविकता का प्रवाह होता है वहां आधुनिक कहानी में नहीं। लोक कथाओं का प्रधान उद्देश्य मनोरंजन और गौण उद्देश्य शिक्षा देना परन्तु आधुनिक कथाओं का उद्देश्य सामाजिक चेतना जागृत करना है।

- -

12- उपलब्ध बांगरू लोक कथाएं एवम् उनका विवेचन :-

(1)

(हांजी- नाजी)

एक बुढ़िया थी । उसके एक बेटा था । वो घणा[1] ऊत[2] था । जिब वो जवान हो गया तो बुढ़िया नै उसका ब्याह कर दिया । एक दिन बुढ़िया के बेटे नै ससरै[3] जाण की सोची । जाण ते पहलां उसकी मां नै कहया "ओड़े[4] जा के हांजी-नाजी कहके बोलियो ।" अगले दिन वो तड़का उठ के ससरैड चाल पड़ा । वो दिन छिपणे ते पहला ही गाम में पहुंच गया । उसकी सासू उसते पूछण लागी "क राजी खुशी है ।" वो बोल्या "नाजी ।" सासू दुःखी हो के पूछण लागी - कोई मर गया ? वो बोल्या -हां जी । सासू नै फेर पूछया, "कोई रह भी रहया ?" वो बोल्या "नाजी" ।" इतना सुण के सारे रोवण लागे अर रोंदे रोंदे अपनी सिमधन के चले गए । सिमधन उन नै रोंदा देख के कहण लागी, "क्यूं रोओ सो," पर वे रोंदे रोंदे चुप ना होवै अर कहण लागे, "जमाई तो न्यूं कह था अक सारे मरगे ।" सिमधण अपने बेटे का बोलापण समझ गी । वा कहण लागी, "थारा जमाई तो न्यूए बोल्या करै उरै तो सब राजी खुशी है ।" सिमधन के जाण के बादबुढ़िया नै अपने बेटे स ते पूछया "तैने ओड़े जा के के कहया ?" बेटे नै सारी बात अपनी मां ते न्यू की न्यूं बता दी । मां सुण के [illegible] कहण लागी, "सत्या नासी तनै [illegible] तो सारे के सारे मार दिये थे ।" बेटे नै तुरन्त कहया, "मैंने नी मारे तेरी हांजी- नाजी न मारे ।

(मनोरंजन प्रधानः मूर्खता प्रदर्शन)

1- अधिक 2- बदमाश

3- ससुराल 4- वहां

(2)

आप् मर्‌या जग् परलो

एक राजा था। सिकार खेलण जा रह्या था। राह् में गादड़ दि(ख) गया। राज्जे ने गोली मारणी चाही। गादड़ बोल्या - महाराज मन्नै मत मारियो। मैं मर्‌ग्यां ते पहलाँ हो जागी। राज्जा कहण लाग्या - गादड़ तेरे मरण ते पहलाँ बधुक्कर हो जागी। वो बोल्या- महाराज आप मर्‌या जग् परलो। राज्जे ने हथियार फांक[1] दिए अर् तप् करण चाल्या गया।

(उपदेशात्मक)

(3)

बणिया के बड्डो चोर

एक् बणिया था। उसके बड्डो चोर। बणिया बोल्या बाबानी देखिये आज आपणै चोर बड़ैं। मैं बोलूँ ज़करै बोलियो। बाबानी बोल्ली आंच्छ्या बाणिया बोल्या बाबानी, अपणी वा सवा लाख की गूठी किद[2] धरी से। बाबानी बोल्ली रोले नां करे चोर सुण लैंगे। वे तो मन्नै चौकस धर राक्खी से। फेर बी बता ते किद् धरी से। कोठे मैं परांत से। वा मार राक्खी से उसके नीच्चै थाली उसके नीच्चै कटोरा, कटोरे के नीच्चै कुल्हो कुल्ही मैं वा गूठी धरी से। चोरा ने सोच्या। पहले सवा लाख की गूठी ठावों। चोर ने जा के वा कुल्ही उठाई उसमें हाथ दीया तो बीच्छू लड़ग्या बणिए ने उस कुल्ही मैं बीच्छू रोक के न धर राख्या था चोर बोल्या- मर ग्या रे मर ग्या। बणिया बोल्या- मेरी गूठी से आंगली[3] के छूक ला के पहर ले। चोर पल्ले तोड़ गया[4]।

(जाति विषयक विवरण)

1- फेंक दिये। 2- कहां

3- अंगुली 4- नौ दो ग्यारह हो गया।

(4)

आन्धा माणस

एक आन्धा माणस गाम मैं खड़ा खड़ा मूतण लाग रया था । उसके साहमी ए एक पत्थर की कोलड़ी पड़ी थी । कोलड़ी उसते आगै एक पड़ी से इसका बेरा आन्धा न कोन्ना पाट्या अर आन्धे के मूत की छींट कोलड़ी त टकरा के पाया पै पड़ै थी । इतना ए मा गाम के ठोलेदारां की गैला उसी गाम मैं एक थाणेदार बी आग्या । आन्धा नै देख के ठोलेदार कहण लागे अर आन्धा गाम मैं खड़ा खड़ा मूते से । तन्नै बेरा कोन्ना क थाणदार साहब आवै से । आन्धा पहल त औसाणा भूल्या अर फेर अपने पीले पीले दांद काढ्या बोल्या आ हते झट मा थाणेदार अपनी बूआ का खसम करावे से ।

(मनोरंजन प्रधान)

(5)

एक जाट अर गाद्दड़

जाट था । जाट नै कूकड़ी[1] बोई । कूकड़ी रोज की रोज गाद्दड़ तोड़ जांदा । तो जाट कथरा लाग्या अपना हार जा के, कूकड़ी बेरा नी कौण खा जा से । उसनै के[2] काम् कर्‌या जा के लुक के देख्या के गाद्दड़ कूकड़ी खाण आया । जाट नै उस् के डोसला[3] मार्‌या । गाद्दड़ गिर पड़्या । पहलेए गाद्दड़ के गेल्ली बच्चे थे, अर गाद्दड़ी थी, तो फेर उस्नै (जाट नै) जिस बखत मार्‌या तो गाद्दड़ बोल्या – "भाग जा, मेरी स्याम् सुन्दरी गेलं कलिआं[4] ला के,[5] राम लाडू की दूण्[6] टूटी पड़ी कूकड़ आ के ।

(पशु पक्षि सम्बन्धी)

- -

1- मक्ई का भुट्टा 2- क्या 3- मोटा डंडा

4- बच्चे 5- ला कर 6- कमर

"सप्तम अध्याय"

मुक्तक साहित्य :-

1- कहावतें (लोकोक्तियाँ)

(अ) बागड़ी लोकोक्तियों का वर्गीकरण :- (1) अन्ध विश्वास सम्बन्धी
(2) खान-पान तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी (3) जातीयता सम्बन्धी
(4) आर्थिक व्यवस्था सम्बन्धी (5) कृषि एवम् पशुपालन सम्बन्धी
(6) तीज, त्योहार एवम् धर्म सम्बन्धी (7) परम्परा वादिता सम्बन्धी
(8) नीति सम्बन्धी (9) जीवन दर्शन सम्बन्धी
(10) विविध लोकोक्तियाँ :- जातिगत, पशु सम्बन्धी, विवाह संस्कार, दाह संस्कार आदि।

(आ) उपलब्ध बागड़ी लोकोक्तियों की सूची एवम् उनका विवेचन।

2- चुटकले :- (अ) प्रमुख बागड़ी चुटकले

3- मुहावरे :- (अ) मुहावरों और कहावतों में अन्तर
(आ) जन जीवन का चित्रण
(इ) बागड़ी मुहावरों का वर्गीकरण:- (1) जाति विषयक
(2) नीति सम्बन्धी (3) संस्कार एवम् प्रथा सम्बन्धी
(4) सामान्य व्यवहार सम्बन्धी (5) कृषि सम्बन्धी
(6) शकुन विचार सम्बन्धी।
(ई) उपलब्ध बागड़ी मुहावरों की सूचि एवम् उनका विवेचन।

4- पहेलियाँ :- (अ) बागड़ी पहेलियों का वर्गीकरण (1) खेती सम्बन्धी
(2) भोजन सम्बन्धी (3) घरेलू वस्तु सम्बन्धी (4) प्राणि सम्बन्धी
(5) प्रकृति सम्बन्धी (6) अंग-प्रत्यंग सम्बन्धी
(7) पौराणिक कथा सम्बन्धी (8) अन्य- उक्ति एवम् वैचित्र्य प्रधान।
(आ) उपलब्ध बागड़ी पहेलियाँ एवम् उनका विवेचन।

5- सूक्तियाँ

(अ) उपलब्ध बागड़ी सूक्तियों की सूची एवम् उनका विवेचन।

0---0---0

भारतीय विद्वानों की परिभाषायें दृष्टि में रखते हुये लोकोक्ति के विषय में कह सकते हैं कि "लोकोक्तियाँ लोक मानस की ऐसी संक्षिप्त, विदग्ध तथा लोकप्रिय उक्तियाँ हैं जिनमें मानवी ज्ञान तथा अनुभव अपने सहज तथा घनीभूत रूप में विद्यमान रहता है। ये ही लोक जीवन की प्रामाणिकता या जिन्दादिली के ज्वलन्त उदाहरण हैं।

लोकोक्तियों के माध्यम से हम किसी भाषा के बोलने वालों की संस्कृति का सुगमता पूर्वक अध्ययन कर सकते हैं क्योंकि लोकोक्ति ऐसा दर्पण है जो किसी स्थान विशेष अथवा देश-विशेष की संस्कृति का पूर्ण प्रतिबिम्ब प्रस्तुत करता है।[1]

साहित्य में लोकोक्तियों का प्रचलन कब से चला आ रहा है निश्चयात्मक नहीं कहा जा सकता। "मानव जीवन की कोई ऐसी गतिविधि नहीं जिन्हें कहावतों के क्षेत्र से बाहर कहा जा सके। इसमें मानव जीवन के सुख-दुःख, हर्ष-विषाद, रुचि अरुचि, कैशोर-यौवन सभी की सूक्ष्म रूप में व्याख्या होती है। जातियों के आचार विचार, रीति रिवाज, मंगल विधान आदि, धार्मिक राजनीतिक, सांस्कृतिक जीवन सभी की अभिव्यंजना इन कहावतों में होती है। सांसारिक व्यवहार पटुता और सामान्य बुद्धि का जैसा निदर्शन जैसा कहावतों में मिलता है वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। इनमें जीवन के सत्य बड़ी खूबी से प्रकट होते हैं।[2]

लोकोक्तियाँ एक दूसरी भाषा में वाग्मिता में इतनी परिपक्वता से सम्मिलित हो जाती है मानों उनका अलग कोई अस्तित्व ना हो।

(अ) <u>बागड़ी लोकोक्तियों का वर्गीकरण</u>:- बागड़ में वैदिक संस्कृति का प्रभाव जन जीवन पर बहुत स्पष्ट रूप से रहा है। भारतीय प्राचीनतम साहित्य में (ऋग्वेद में) इसके बहुत से उदाहरण मिलते हैं। ऋग्वेद की कुछ उक्तियों का अर्थ साम्य बागड़ की लोकोक्तियों में देखा जा सकता है। :-

ऋग्वेद	बागड़ी लोकोक्ति	अर्थ
न वै स्त्रैणानि सख्यानि सन्ति 10/95/15	बीरां की बेपारी?	औरतों के साथ क्या मित्रता ?
बहु प्रजस्य पुत्रस्य स्वाथो न पि नदा विमत 1/117/19	घणों छोरां का भाणजा भूखा मर्या करे है।	अधिक लड़कों का भाणजा भूखा ही रहता है।

1- राजस्थानी कहावतें ले. डा. कन्हैया लाल सहल पृष्ठ।
2 कृष्णानन्द लोक वार्ता पत्रक संख्या 3, पृ01

(8) नीति सम्बन्धी :- शिष्टाचार सम्बन्धी तथा नीति, शिक्षा एवं भाषा की अनेक लोकोक्तियां उपलब्ध हैं जिनसे मनुष्य को कर्तव्य-अकर्तव्य का ज्ञान होता है :- गुड़ ना दे तै गुड़ जिसी बात कह दे ।[1] नीतिनुसार सज्जन की मित्रता श्रेयस्कर होती है:- "घर का दूध पडौसी नेड़ै" । साम, दाम, दण्ड और भेद चारों नीतियों से सम्बन्धित लोकोक्तियां द्रष्टव्य :-

हाथां सुलझै उतने दांत क्यूं तोड़ै (साम)

दाम करावै काम (दाम)

करतै गेलुआं करिये पाप पूत तै डरीये (दण्ड)

घर का भेद लंका प ढहावै (भेद)

शिक्षा और भाषा के भावों को देखिए :- "बिना बकड़े की, दाम आठ के, तथा के ये देखो कुदरत के खेल पढ़े फारसी बेचें तेल और काला अक्षर (अक्षर) भैंस बराबर । इसके साथ साथ यहां के लोगों की स्पष्टवादिता "साफ कहना (कहना) और सुखी रहना" "हिसाब तै बाप बेटे का हो से" व्यावहारिकता "चोर नै कैमारै चोर की मां नै मारै" राख्य तै चाख्य भली"। "शिष्टाचार तथा व्यवहार में यह बात अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि लड़ाई झगड़े के मूल तत्वों को समाप्त कर देना चाहिये ।[2]

(9) जीवन-दर्शन सम्बन्धी :- "सब आपणे भागां का खा सै", "जिसने चोंच दी जिसने वो चुग्गा भी देगा", करमां तै काले जन्मे मैं भी चुकाणा पड़े से भाई" क्रमशः भाग्यवाद, आशावाद एवं पुनर्जन्म में विश्वास यहां के जीवन दर्शन की भावनाओं को साकार करता है । यहां के जीवन दर्शन में वीतराग, आध्यात्मिक बल एवं सच्चाई की प्रधानता भी चित्रित है :- आप मरया जग परलै सहज आला सोवै उपर आला रोवै, आत्मा सो परमात्मा, सांच नै आंच किसी बीकानेया आदि ।

(10) विविधता:- उपरोक्त वर्गीकरण के अलावा यहां अनेक प्रकार की

1- हरियाणवी लोकोक्तियों का सांस्कृतिक अध्ययन : लेखक डा० जयनारायण वर्मा, पृ०46

2- " " " " वही " " " " पृ०48

17- किसे तो बुआ जाण नै होरी थी किसे फूफा लेण आग्या -दोनों की सहमति ।-
(मनोरंजन सम्बन्धी)

18- के खाणे गेहूं ना रखणा नू कानूं - जिद्दी (स्वाभिमान सम्बन्धी)

19- कागा कहै खुराकाकड़ी दे से - चापलूसी करना व्यर्थ है ।
(झूठी आदर्श वादिता)

20- कीड़ी नै कण, हाथी नै मण- सामर्थ्यानुसार सबको भोजन मिलता है।
(पशु सम्बन्धी)

21- खूंटे की ताण बाछड़ू कूदया करै - पशु बलवान होना ।
(शक्ति सम्बन्धी)

22- खाकण पीकण नै मामी और कूटण नै हरदास- खेवे करे कोई भरे कोई ।
(व्यवहार सम्बन्धी)

23- खेती खसमां सेती- खेती मालिक के सहारे होती है (कृषि सम्बन्धी)

24- खा के सोज्या अर मार के भाज ज्या।- मनमर्जी की करना ।
(व्यवहार सम्बन्धी)

25- खेत का डराया खा ना खाण दे ।- बन्दर घुड़की
(व्यवहार सम्बन्धी)

26- गाज्जा बेटटी लेले फेरे यो मरग्या तै और भतेरे- पुनर्विवाह
(विवाह संस्कार)

27- काला अक्षर भैंस बराबर - अनपढ़ व्यक्ति (शिक्षा सम्बन्धी)

28- कुल्हाड़ी का घा भर ज्या पर जबान का घा नहीं भर सकता-कहे हुये वचनों की कटुता अधिक होलती है। (व्यवहार सम्बन्धी)

29- करते गैलू करिए पाप पुन तै डरिये- दुष्ट के साथ दुष्टता करो।
(दण्ड नीति सम्बन्धी)

30- गुदड़िया मरकोल धूत बरे जलाई-शर्म करने वाला नुकसान मे रहता है।
आदर्श वादिता)

46- जाट कहता मरमा ज्या पर लड़का मामरमा के- व्यवहार कुशलहीनता परन्तु बुद्ध कुशल। (जाति परक)

47- झोटे-झोटे लड़ै बाड़ा का खो- दो बलवानों की लड़ाई में निर्बल का नुकसान। (क्रीड़ा सम्बन्धी)

48- अकल बिना, पंचत खेती- बिना अभ्यास से खेती मेहनत की होती है। (परिश्रम सम्बन्धी)

49- जाओ नाहो, रहो खाव - गौरव की रक्षा करना। (नीति सम्बन्ध)

50- शेर नै शेर मारै- विषस्य विषमौषधम्। (नीति सम्बन्धी)

51- दादी पोथी पोथी लिटोले दोता लिटोहै बचा दे + नीयत में अन्तर (परम्परा वादिता)

52- दादी मरी पोती आई ओहे तीन के तीन- गिणती पूरी रखना। (परम्परा वादिता)

53- दुनिया कहती आई, ऊंट की जूत दवाई होसै- कूट दण्ड से मानता है। (नीति सम्बन्धी)

54- जाट मरया जिब जाणिए जिब तेरहवीं होले- जब तेरहवां होले- तब ही मर हुआ समझो। (मृत्यु संस्कार)

55- सांड पूंछ फेरे- गांव में विवाह। (गन्धर्व विवाह)

56- जैरा जिसका गौरा- जिसकी लाठी उसकी भैंस (बल स्वास्थ्य सम्बन्धी)

57- डाबड़े का सिर पे है राड़- शक्ति शाली का सब कुछ है। (शारीरिक शक्ति)

58- जाड़ा माह का ना पोह का जाड़ा सीला बाल का -सर्दी तो किसी मास विशेष की नहीं बल्कि शीत लहरों से होती है। (ऋतु सम्बन्धी)

59- दुबली नै दो साढ़- दुर्बल को दो असाढ़। (ऋतु सम्बन्धी)

60- धर्म की जड़ सदा हरी- धर्माचरण व्यक्ति फलता फूलता है (आस्तिकता)

{ख} प्रमुख हास्यिक चुटकले

1- मूलचन्द का गाम जाना

एक थे मूलचन्द ने गाम जाणा था । उसने सोची आज ते रेल में जाणा चाहिए टेशण पै जाग्या गया, उडे जाके बाबू जी ने बोला बाबू जी मने एक से टिकट दे दे अर एक बीड़ियां बंडल बाबू जी बोला- यहां बीड़ी नहीं मिलती टिकट कहां का लेगा । मूलचन्द बोला म्हारा के मामा के गाम का दे दे । बाबू जी -मने के बेरा थारा के मामा का कौण सा गाम है । मूलचन्द बोला छोरे में मतना आवे वोहे गाम से यो जिस में ब्याह राख्या सू । बाबू जी बोला- मुझे क्या मालूम तुम कहां ब्याह रहे हो ? मूलचन्द बोला- मां तू ढूंढ राखता मां तने गाम का बेरा तू बाबू जी किस साले ने बना दिया ।

{वीभत्स रस}

2- दो पैसे की दही :-

कबहारिया में एक देहाती ने दो पैसे की दही लै ली । जब खाग्या तो उसमें एक माखी निकली । देहाती ने इसकी शिकायत की दुकानदार बोला- भाई दो पैसे की दही में से माखी ए निकलेगी इसमें हाथी क्यूं कर निकले ?

{व्यंग्य वीभत्स रस}

3- हरिया बिचारा :

हरिया बिचारा सीधा छोरा था । एक दिन उसका बाप मरग्या । हरियाः रोवण लाग्या । गाम के आड़ पड़ौस के लोग लुगाई आये अर हरिया ने समझावण लागगे । दो चार बुड्ढे ठेरे कहन लागगे, "बेटा फिकर मत करै हम भी तेरे बाप समान से चुप होजा । सात छः महीना पाछे हरियाः की मां भी मरगी तो पड़ौस की कुछ बुढ़िया आ कहन लागगी, "बेटा तू क्यूं रोरा से हम भी तेरी मां के बराबर सैं । कुछ दिन पाछे उस निरभाग की बहू भी चलती बणी । हरियाः कहके दे दे के जोर जोर से रोण लागगा, पर इबके उस बिचारे ने समझावण कोई नहीं आया ।

{भोलापन: हास्य रस}

- -

4- <u>बस का सफ़र :-</u>

एक आदमी बस में सफ़र करता था । जहां उस आदमी ने उतरना था, उड़ै बस कोन्या रुकी तो वा आदमी रौब से मैं आके बोल्या, अरै कंडक्टर सीटी दे देना । कंडक्टर भी कुछ मखौले बाज सा ही था बोल्या, "तेरे के बाप की सीटी से जो दे दूं, पीछे ला राखी सैं ।

[सरसता: हास्य रस]

5- <u>भैंसे का दूध:-</u>

एक गाम में एक बामण और बामणी थे । उनकै एक भैंस थी ठाड्डी सी बामण रात ने ही भैंस का न्यार कर क दे करै थी और तड़काए बखत से ही दूध काढ़ ले करै था । एक दिन सारौज ने एक मजाक कर दिया । बामणी तो भैंस के न्यार करै जैसे ही गई, सारौज ने भैंस खोल के अपना भैंसा बांध दिया उड़ै न्यार पै । जिब तड़की बामणी अंधेरे से में दूध काढ़न गई, तो भैंसा न्यार पै खाये खड़ा जुगाली करता था । बामणी ने बाल्टी अर तेलणी भैंसे तले । उसने थनों के हाथ लाया तो उड़ै थन होते तो पावते भी । भैंसे ने पां कलोंधे कोन्हा ठाया । बामणी सोचन लागगी किस डाले गये आज थन । बेरा ना कैसे थन एक जगह चिपगे । बामणी के छोरे का नाम था मुरली बामणी ने हांक मारी, "ओ मुरली के दादा ।" वा बोला, के से ।" बामणी बोली, मुरली के दादा के बताऊं आज तो भैंस के थनों का सिपड़ बनाग्या" । बामन खड़ा होके आया अर उसने आगे पीछे घूमके देखा तो, वा तो भैंसा खड़ा बंधा रहा था ।" अरे निर्भाग आज तो भैंसे देवता का ही दूध काढ़ लै ।

[व्यंग्य: वीभत्स रस]

- -

(6)

बेल बोटम

एक बर एक जाट का छोरा पैंट घालकर लत्ता लाया अर आकै अपने बाबू ते कहण लाग्या, "बाबू इसकै मैं बेलबोटम बणवाऊंगा।" बाबू बूझण लाग्या "यो बेल बोटम किसी एक हो से।" छोरा बोल्या, "बाबू या खुली हो से इसी पै चौड़े चौड़े पांयचे हो सैं उसकै सारे कै हवा लागती रह सै, अर उसमैं उठने बैठने का भी आराम रह सै।" उसका बाबू बोला, "उत के पट्ठे फिर क्यूं बेल बोटम बणावै से अपनी मां का पेटी कोट ही डाटे लिया करियें।"

(जातिपरक हास्यरस)

(7)

जाट के ठाठ

एक जाट चौधरी बस मैं चढ़ा बस मैं बड़ी भीड़ थी चौ० नै बैठण खातर जगह कोन्या मिली। एक दो स्टेंड पर सवारी उतरी तो चौ० नै सीट मिलगी बैठण खातर एक बाबू धोरै थोड़ी देर पाछै कंडक्टर आगा टिकट देण नै। कंडक्टर नै बूझी किस ते बैठे सो चौ० साहब चौ० नै कही "हाड़ै से ही बैठा सूं।" एक और बाबू जो चौ० के साथ ही कश्मीरी गेट चढ़ा था फौरन बोल्या, "पर चौ० साहब आप चढ़े तो कश्मीरी गेट से थे, और कह रहे हो कि दरिया गंज से बैठ्या सूं" जाट चौ० हंसता हुआ बोल्या चढ़ा तो मैं भी थारे ही गैल्या था पर कन्डक्टर ने बैठन की बूझी तो हाड़े से मूं उठा से खड़ा आरा था। बाबू जी चौ० की अकल देखके हंस पड़े और बोले देखा कन्डक्टर साहब ये है जाट के ठाठ।

(जातिपरक - हास्यरस)

1- भेजना ।

{8}

लाला जी का बरताव

एक बै एक लाला जी बखत ते जंगल से चला गया । लाला जी स्वभाव से डरपोक था । अंधेरे में पांव रिपट ग्या । ओ एक खड्डे में पड़ग्या सांझ की एक एक भेड़ भी पड़ी थी । बनिया को दे टक्कर न भेड़ बोली बां .....

लाला बोल्या हम तेरे बेटा बेटी तूं म्हारी मां ।

{जातिपरक -हास्यरस}

{9}

होटल का खाणा

एक बै कई देहाती शहर में चले गये भूख लागगी ते एक होटल में बड़ गये । पूछण लाग्ये अक भाई सब्जी रोटी कैसी दी ? होटल मालीक ने जवाब दिया 25 पीसे रोटी अर सब्जी मुफ्त देहाती बोले ते भाई सब्जी सब्जी दे दे । रोटी ते म्हनी ने रहै सां ? फेर सब्जी के बाद उन्हे कुछ मिठाई भी खा ली नौकर पूछन लाग्या जी होटल के टोटल का बिल लाऊं । देहाती एक दूसरे कान्नी देखण लाग्ये । पर बोले ले आ भई । ऊं ते हम ठीक रहै सैं । पर तेरे हाथ को न नाटांगा । प्लेट मे होटल वाला बिल लाया । ते बार टुकड़े करके उसने भी खाग्ये ।

{भोलापन} हास्यरस}

{10}

छोरे का पाजामा

एक बै धूसर छोरे कुछ आदमी आये इतने में उसका छोरा भी स्कूल क ते आ ग्या । धूसर कहन लाग्या अक बेटे ते पाजामा पहर रहया से भैंस ने बांध दे । थोड़ी देर पाछे धूसर फेर कहन लाग्या अक बेटे ते पाजामा पहर रहया से जा ते दाना ले आ । लड़का ले आया । थोड़ी देर पाछे धूसर फेर बोल्या अक बेटे ते पाजामा पहर रहया से एक हुक्का भर ले । लड़का बोल्या बापू पाजामा के हुआ यो तो कुरता भी न ले इसने अब तैं पहर लें ।

{सादा स्वभाव: हास्य रस}

1- बहुबी टूटी 2- पिसकना ।

[illegible] करना है। उदाहरणार्थ :- "लठ खाना" मुहावरा है क्योंकि इसमें "खाना" शब्द अपने साधारण अर्थ में न आकर लाक्षणिक अर्थ में आया है। लक्षणा या व्यंजना द्वारा सिद्ध प्रयोग का प्रतीक है।

मुहावरों की उपयोगिता भाषागत है। इसका प्रयोग भाषा को प्रभावशाली बनाने में पूर्ण सहायता करता है। प्रायः मुहावरों का प्रयोग सरलता, प्रभावोत्पादकता एवं विचारों की स्पष्टता के लिये होता है। मुहावरों का प्रयोग - संक्षिप्तता, शिष्ट हास्य, व्यंग्य, विचारों की स्पष्टता सरलता, चमत्कार, मनोरंजन, आत्मीयता, लाघव, आदि उद्देश्यों की पूर्ति करने में समर्थ होता है।

(क) मुहावरों और कहावतों में अन्तर :- मुहावरे वाक्यांश होते हैं। वाक्य नहीं, जब कि कहावतें पूर्ण वाक्य रूप होती हैं। मुहावरे एक कार्य व्यापार है जब कि लोकोक्ति एक प्रकार का व्यावहारिक एवं नैतिक कथन है। मुहावरा लाक्षणिक प्रयोग है और लोकोक्ति एक प्रस्तुत प्रयोग। अर्थ की दृष्टि से मुहावरा अपूर्ण होता है परन्तु लोकोक्ति पूर्ण। लोकोक्तियों में कम से कम दो शब्द अनिवार्य हैं जब कि मुहावरे में एक ही क्रिया से काम चल जाता है जैसे मरना। सभी लोकोक्तियों का समावेश लोकोक्ति अलंकार में होता है परन्तु मुहावरों पर यह नियम लागू नहीं होता है। इस प्रकार लोकोक्तियों में समान भावधारा एवं अनुभव के दर्शन होते हैं [illegible] परन्तु मुहावरों में नहीं।

(ख) आंचलिक मुहावरों में जनजीवन का चित्रण :- डा० उपाध्याय के अनुसार- मुहावरों में जनता के जीवन की झांकी देखने को मिलती है।

सामाजिक प्रथाओं, रूढ़ियों और परम्पराओं का इनमें उल्लेख पाया जाता है जन साधारण की आर्थिक दशा का चित्रण भी इनमें उपलब्ध होता है। भारतीय इतिहास की अनेक टूटी हुई तथा बिखरी हुई कड़ियां इनकी सहायता से जोड़ी जाती है। भारतीय लोक संस्कृति का सजीव स्वरूप इनमें दिखाई पड़ता है। विभिन्न जातियों के विशेषताओं पर इनके द्वारा प्रकाश पड़ता है।[1] बांगरू मुहावरों का ढूंढकर प्रयोग करना नितान्त स्वाभाविक सा लगता है। बांगर के वर्ग विषय को ध्यान में रख कर मुहावरों का वर्गीकरण करना अधिक समीचीन तथा वैज्ञानिक होगा।

(ख) <u>बांगरू मुहावरों का वर्गीकरण :-</u> बांगरू में प्राप्त मुहावरों का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जा सकता है :-

(1) जाति विषयक सम्बन्धी

(2) संस्कार एवं प्रथा सम्बन्धी

(3) नीति सम्बन्धी

(4) सामान्य व्यवहार ज्ञान सम्बन्धी

(5) कृषि सम्बन्धी

(6) शकुन विचार सम्बन्धी

मुहावरें विस्तृत तथ्य को थोड़े में कहने में समर्थ हैं। वे चुस्त, अंधारी तथा परिणाम ज्ञापक भी हैं।

(1) <u>जाति विषयक:-</u> इन मुहावरों में जाति प्रथा तथा समाज का दर्शन होता है। "जाट भेली दे दे गण्डा मां दे, जाट की गुद गुदी बणिए के का मरमा। कुम्हारा आली हुई लैणा।

1- लोक साहित्य की भूमिका : लेखक डा० कृष्ण देव उपाध्याय पृ० 283

4- पहेलियाँ :-

मानव की गुत्थी सुलझाने की प्रवृत्ति और उसके समाधान से प्राप्त आनन्द की अनुभूति अतिप्राचीन काल से ही उसमें रही है और उसी के फलस्वरूप अस्तित्व में आई है। यह बौद्धिकता से सम्बन्धित रहती है अतः इसका विकास गीतों के परवर्ती ही हो सकता है"।[1]

इनकी प्राचीनता के विषय में कुछ भी कहना मुश्किल सा प्रतीत होता है, डा० कृष्ण देव उपाध्याय ने निम्न मंत्र को पहेली की रूप में माना है।[2]

चत्वारी शृंगा त्रयो अस्य पादाः,
द्वे शीर्षे सप्त हस्ता सो अस्य,
त्रिधा बद्धो वृष भो, रोर वीति,
महादेव मर्त्यां आवी वेश।

यह उपर्युक्त कि कूवा निश्चय ही पहेली है। इस प्रकार पहेलियों का विकास प्रत्येक युग में होता गया। संस्कृत शब्द "प्रहेलिका" का ध्वनि परिवर्तन हिन्दी में पहेली बन गया। इस का अर्थ "विभ्रम आस्था या "उलझन" होता है,। हिन्दी की बोलियों में इसे बुन्देली और कालिक में "फाल" या फाली" आख्या कहते हैं। इस प्रदेश एवं इसके सीमावर्ती प्रान्त राजस्थान में पहेलियों का प्रचलन प्रचुर मात्रा में हो रहा है। अपने समय में अमीर खुसरों की पहेलियाँ लोक प्रियता के शिखर पर रही और हिन्दी में अपनी छाप छोड़ गईं। परन्तु पहेलियों के इतिहास की तिथि निर्धारित करने में हम असमर्थ रहे और परन्तु इनकी प्राचीनता से नकारा नहीं जा सकता। अमीर खुसरों की पहेलियाँ खड़ी बोली में हैं और खड़ी बोली को विकास के राह पर लाने में खुसरो का विशेष योगदान रहा है।

1- लोक साहित्य का अध्ययन :- लेखक डा० एस०डी० राम अनन्त पृ० 70
2- लोक साहित्य की भूमिका लेखक डा० कृष्ण देव उपाध्याय पृ० 207

साहित्यिक भाषा में "पूछो पूछो एक पहेली ......", का तरीका अपनाया जाता है परन्तु बागड़ में "फाली आडण्या में" के तो मेरी फाली का फल बता नहीं तो .... खाली स्थान का अर्थ कोई ना कोई मजाक प्रयोग करना होता है, :- उदाहरणार्थ :- माटी का मटोगर छडु मोलि का छडु जेवर ।

के तो मेरी फाली का फल बता,
ना' ते तेरी माँ का मामू देवर ।।

यहाँ पे का स्पष्ट नाम पहेली है । देखिये एक अन्य उदाहरण :-

गेले अगोड़ मारले जिन्दी, पाल पाको बलबेली ।
जिसका लोग तमाशा देखें, उसका नाम पहेली ।।

(लट्टू)

बागड़ी "फाली " पर गहन विचार करने और अपने चहुँ ओर के वातावरण की परख करें तो ऐसा आभास होता है मानो इनकी पकड़ से कोई विषय बच नहीं पाया है । सूई से रेलगाड़ी भी वंचित नहीं है, यहाँ तक ऋतु आदि को भी अपने शब्दों की परिधी में बाँध रखा है :- "बारह देवर तीन लिये ब्याह के लगाया जेठ"- (दोला) अर्थात वर्ष के बारह मासों में से जेठ के महीनों में जाने के बोल लगती है ।

3-) <u>बागड़ पहेलियों का श्रेणी वर्गीकरण</u> :- "फालियों " की इस विविधता के कारण इनको कुछ सुनिश्चित वर्गों में बांट देना सामान्यतः कठिन है परन्तु अध्ययन की की सुविधा के लिये इनका वर्गीकरण करना आवश्यक हो जाता है, बागड़ पहेलियों को निम्नलिखित श्रेणियों में विभाजित किया जाता है :-

(1) खेती सम्बन्धी (5) प्रकृति सम्बन्धी
(2) भोजन सम्बन्धी (6) अंग प्रत्यंग सम्बन्धी
(3) प्राणी सम्बन्धी (7) पौराणिक कथा सम्बन्धी
(4) घरेलू वस्तु सम्बन्धी (8) अन्य

(1) <u>खेती सम्बन्धी</u> :- इस वर्ग की पहेलियों में खेती से सम्बद्ध उसके उपकरणों एवं फसलों आदि से सम्बन्धित "पाली" पूछी जाती है ।

उदाहरणार्थ :- छोटा सा छोरा पेट फिलाई (गेहूं)

ii- छोटी सी छोरी के सिर में जूड़ा,
हाय बाबू गोदी ले ले, हाय बाबू गोदी ले ले । (गुड़ की भेली)

(2) <u>भोजन सम्बन्धी</u> :- सब प्रकार के अनाज,फल, शाक सब्जी और सब प्रकार के व्यंजनों को इसमें स्थान मिलता है । उदाहरणार्थ :-

i- हिरदार दाहरा, हुमैर दार कुटी ।
[illegible]-गई थी बाजार मे, धागेदार बूटी । (मिर्च)

ii- छोटा सा छोहरा रिसक बिना खाले नहीं । (उड़द)

iii- छोली छिलकी, मम्मर पूछ,
बता ले कहीं नहीं दादी से पूछ । (मूली)

3) <u>घरेलू वस्तु सम्बन्धी</u> :-

घरों में प्रयोग होने वाली समस्त वस्तुएं इस वर्ग के अन्तर्गत आ जाती हैं, उदाहरणार्थ:-

i- छोटी सी छोड़ी बड़ी लगाम ।
चाल मेरी छोड़ी अगले गाम ।। (सुई)

---

ii- मोटा सा आला, कौड़ियाँ का भरया । {पियासलाई}

iii- छोटी सी छोकरी लाल बाई नाम ।
पहली आकाश में, फेर आई गाम ।। {आग}

{4}- प्राणी जगत सम्बन्धी:- इस वर्ग में मनुष्य, पशु पक्षी, कीड़े मकौड़े- सभी का वर्णन रहता है । उदाहरणार्थ :-

i- छोटी सी मोमणी, राजा सागै जीमणी । {मक्खी}

ii- हम लम्ब सलाक तुम चौड़ बड़े ।
हम डोल करां तुम रो पड़े ।। {मच्छर}

{5}- प्रकृति सम्बन्धी :- प्रकृति से सम्बन्धित आकाश, तारे, सूर्य, चन्द्रमा वर्षा, बिजली, नदी, दिन रात महीना, वर्ष, कुआँ, फूल आदि का वर्णन इसी वर्ग से सम्बन्धित है । उदाहरणार्थ:-

i- यहाँ नहीं वहाँ नहीं लन्दन के बाजार नहीं ।
छीलो तो छिलका नहीं, खाओ तो गुठली नहीं ।। {ओले}

ii- मैं लेण गई थी सबे, वे देख लई मैंने ।
ते छोड़ दे मनै, मैं ते बाढ़ सबे ।। {पानी}

{6} अंग प्रत्यंग सम्बन्धी:- आँख, कान, हाथ, पैर आदि सभी शरीर के अंग प्रत्यंगों का उल्लेख इसी वर्ग के अन्तर्गत आता है । उदाहरणार्थ:-

i- छोटा सा आला, कौड़ियाँ का भरया । {मुँह}

{7}- पौराणिक कथा सम्बन्धी:- यहाँ भी एक पौराणिक पहेली जिसमें भरत दशरथ और हनुमान की पौराणिक गाथा कही गई है । जब तक यह पौराणिक कथा स्पष्ट नहीं हो जाती है तब तक यह पहेली नहीं सुलझती ।[1]

---

[1] हरियाणा प्रदेश का लोक साहित्य :- लेखक डा० शंकर लाल यादव पृ० 438

पौराणिक कथाओं पर कई पहेलियां प्राप्त हैं । उदाहरणार्थ-

आप कुंवारा बाप कुंवारा और कुंवारी महतारी ।

पुत्र पिता ने गोद खिलाया रहस्य देखो न देखावारी।

(4) अन्य- इस वर्ग में उन पहेलियों को रखा जाता है जिनका वर्गीकरण ऊपर के वर्गों में नहीं हुआ है । यहां पहेलियों का एक अन्य रूप "उल्टी पहेलियां" भी मिलता है । इन पहेलियों में एक प्रकार की समस्या रखी जाती है और उसका समाधान पहेली के रूप में करना होता है । उदाहरणार्थ- पहेली पूछने वाला समस्या उपस्थित करेगा " हाथी पर से बैल फेंक दे " । और आप इस चिन्ता में न पड़ें कि यह कार्य कितना दुसाध्य होगा । केवल इतना कह देने भर से काम चल जायेगा ।-

झाड़ में कढ़ुला बोल्या, कागे बोल्या डाली ।

हाथी पर से बैल फेंक दी, देखा मरद की छाती ।।

और जब थाली को बाट बनाने की समस्या हो तो आप इस प्रकार थाली को पांव लगा सकेंगे -

गेहूं पाके जौ पाके चनों ने थाली टांट ।

देखो रे नगरी के लोगो थाली हाले बांट ।।

समस्या तो यहां तक आ सकती है कि "कुएं से बहू निकाल दे" और आप को सारे कुएं में झांकने भर से डर लगता है । कुंए में जाए और डुबकी लगाये बिना बहू को निकालने की विधि यों है :- "सरड़ सरड़ सांप जा,
निकड़ बहू तेरा बाप आ।

पहेलियों के वस्तुतः उपर्युक्त विश्लेषण से यह साफ हो जाता है कि बांगड़ पहेलियों में बुद्धि कौशलता, वैचित्र्य, व्यंग्य, रोचकता, चमत्कार, उत्सुकता और भाव प्रवणता-सभी का समावेश हो जाता है और इनमें ज्ञान विषयक शुष्कता का कहीं नाम भी नहीं है । इसी से इन "पहेलियों" का महत्व साहित्य की दृष्टि से उच्चतर होता है ।

(ग) बांगरू में उपलब्ध कुछ फालियाँ (पहेलियाँ) एवं उनका विवेचन

(1)

काला कुत्ता ऊंट में सोय, ऊंट को मेवा खाय ।

लाट साहब का हुकम आया, भाज्या भाज्या जाय ।।

(रेलगाड़ी : परिवहन का साधन)

(2)

सांप बरगी पड़या गांठला दही बरगा भेस[3] ।

सयाणा हो तो बता नहीं छोड़ म्हारा देस ।।

(हंसली= एक गले का आभूषण : स्त्री-पुरुषों सम्बन्धी)

(3)

धरती का बीज बिन मारे रोवै ।

कसम तेरे बाप की, जो बिन बताए सोवै ।।

(प्याज: भोजन सम्बन्धी)

(4)

टकी[4] थी तो फूटी नहीं टूक होगे चार ।

अकल होगी छोकरी तावल करे विचार ।।

(आठ आने का सिक्का: राशि)

(5)

आगे बाले, पाछे बाले, बाले आंगन ।

सारा दिन चालता रहे, दुरी एक पग ।।

(किवाड़: घरेलू वस्तु सम्बन्धी)

(6)

धीदड़ी चादर चार किनारे ।

हलवी अड्डा दिल्ली दो बसाजोर ।।

(सूर्य- चन्द्र= नक्षत्र- प्रकृति सम्बन्धी)

---

(1) जैसा (2) गांठ वाला (3) वेश (4) गिरी)

(27)

झाण्डी पर त कबीला तार दे :

कबिाया झाण्डी कबिया पान ।

उतर कबीला काटू कान ।।

(उल्टी पहेली)

(28)

छोटी सी थाली मोतियां की जाली ।

(दान्त: प्राणि सम्बन्धी)

(29)

चार बालगा[1] रस के भरे ।

बिना बापरा[2] मूढ़े पड़ ।।

(स्तन: प्राणि सम्बन्धी)

(30)

छोटी सी लोट सारे गाम नै ले लोट ।

(नीन्द)

(31)

बाबा सोवै मान मांह ।

पाँ पसारे गाम माहे ।।

(दीपक)

(32)

बढ़ रे काठ तेरी पाणी में जड़ ।

तेरे सीकर में आग - तेरे जो रहे लागे ।।

(हुक्का)

---

(1) मटका (2) दुबका

(ब) उपलब्ध आंचलिक सूक्तियाँ एवम् उनका विवेचन

(1)

ओउम् नाम सब से बड़ा उससे बड़ा ना कोय ।
जो उसका सुमरण करे शुद्ध आत्मा होगय ।।

(निर्गुण ब्रह्म में आस्था)

(2)

चिन्ता लागी है बुरी, काम करे है दो ।
के तो जी ने मारदे के बेमारी मरूज हो ।।

(प्रीत की रीत)

(3)

भौंरा लोभी फूल कली- कली रस ले
कांटा लाग्या पहेम का तड़फ-तड़फ जी दे ।।

(भ्रमर गीत कोकारका)

(4)

चलो सखी उस देश में, जहे किरसन का राज ।
पाणी भरे दूल्हण करे एक पन्थ दो काज ।।

(प्रभु मिलन की आस)

(5)

प्यार बिन संसार में होती नहीं प्रीत ।
जिनकी सांची चितड़ी कोन्या होती उनकी जीत ।।

(भ्रमर गीत की व्याख्या)

(6)

चलो सखी उस देश में जहे बसे ब्रज राज ।
गोरस बेचत [illegible] हरी मिले एक पंथ दो काज ।।

(प्रभु दर्शन की प्यास)

- -

यह मन्दिर विशेष प्रकार की ईंटों से बनाया गया है । इसमें कहीं भी चूना नहीं लगाया है । ऐसा कहा जाता है कि महाराजा शालि-वाहन ने इसे बनवाया था । उनके समय का बना हुआ एक रथ का चूरा भी है ।

(11) सर्वदमन (सफीदों) :- जीन्द जिले के इस नगर में महाराजा जनमेजय ने यज्ञ करवाये थे । इस स्थान पर मृत्यु पाने वाले की अस्थियों को गंगा, हरिद्वार इत्यादि स्थानों पर प्रवाहित नहीं किया जाता है । पौराणिक मतानुसार यह मुक्ति क्षेत्र है ।[1]

(12) सोनीपत :- पाण्डवों को दिए जाने वाले पाँच गाँवों में से सोनीपत भी एक है । आजकल सोनीपत पृथक जिले के रूप में विख्यात है । इसके आस-पास के इलाकों में सूर्य, यक्ष, यक्षिणी आदि शिव तथा उनके वाहन नन्दी की मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं । यहाँ के प्राचीन खण्डहरात से ऐसा आभास होता है कि यह किसी ज़माने में एक वैभवशाली नगर था ।

(13) रोहतक :- शिवजी पुत्र कार्तिकेय ने इसे बसाया था । महाभारत में नकुल दिग्विजय में भी इसका उल्लेख मिलता है[2] :-

"कार्तिकेयस्य दयितं रोहीतकमुपाद्रवत" प्राचीनकाल में रोहेड़ा जंगल काटकर इसे बसाया गया । इसके उत्तर में खोखरा कोट नामक प्रसिद्ध खेड़ा है । यौधेय काल में भी यह प्रसिद्ध नगर था । इसी नगर के समीप महाभारत के युद्ध में दुर्योधन की सेना के पड़ाव भी थे । इसके पश्चिम में प्राचीन गौकर्ण है । गोकर्णेश्वर महादेव का मन्दिर भी है तथा पास में ही अस्थल का जैन बोहर नामक एक कुषाणकालीन स्थान है । इससे पास 2 किलो-मीटर की दूरी पर अस्थल बोहर नामक नाथ सम्प्रदाय वालों का (कनफटों)

---

1. वामन पुराण पृ0 7।
2. महाभारत सभापर्व अ0 32

(iii) कलेवार :- गृहिणी हाली - हाली की रोटी लेकर वहाँ पहुँचती है, हाली खेत के आस पास किसी पेड़ अथवा जोहड़ी में पशु आदि चराता है। वहाँ उसको खाना खिला कर गृहिणी खेत में स्वयं भी कार्य करने लगती है।

(iv) दोफहरा :- गृहिणी के इस समय "कलेवार" के कार्यों की पुनरावृत्ति होती है। इसे दोफहरी की रोटी (LUNCH) कहा जाता है।

(v) दिन ढले :- सूर्यास्त से पूर्व गृहिणी घर आकर रात्रि का भोजन का प्रबन्ध करती है। यह समय गाँवों में काफी गहमा-गहमी का होता है। बहुएँ लड़कियाँ कुए पर पानी भरने जाती है। यद्यपि अब से गाँवों में नल लग गये है परन्तु पीने का पानी कुए से लाया जाता है। इसे गोधूलि का समय भी कहते है। पुरुष घर लौटकर गाय, भैंस, बैल आदि के चारे का प्रबन्ध करता है। दूध दुहने का समय भी यही है।

(vi) दिन छिपे :- सूर्यास्त होने पर रोटी बनाई एवम् खाई जाती है। सर्दियों में प्रायः बाजरे की खिचड़ी बनाई जाती है। राबड़ी भी गर्मी में बनाई जाती है। रात्रि का बचा हुआ भोजन अगले दिन "कलेवार" (Breakfast) में काम आता है।

(vii) पहर रात- अब पुरुष किसी के दरवाजे में या चौपाल में बातें एवम् हुक्के के दौर चलते है। हँसी खुशी के दौर, कभी कभी भजन, आल्हादि का प्रोग्राम भी होता है। गृहिणी दिन के शेष घरेलू कार्यों को पूर्ण करती है।

(viii) आधी रात :- कई बार बातों ही बातों में आधी रात गुजर जाती है। फिर सो जाते है -अगले दिन की प्रक्रिया के लिए।

परन्तु समय परिवर्तन के साथ साथ रहन सहन के तौर तरीकों में काफी परिवर्तन आ गया है। शिक्षा के प्रसार के कारण ग्रामीणों की विचार में

---

[5] भोजन :- "देसां मैं देस हरियाणा, जित दूध दही का खाणा" इस प्रदेश के लिए यह उक्ति बिल्कुल सही है। यह उक्ति यहाँ के खान पान पर पूरा प्रकाश डालती है। जो यहाँ के सात्विक एवम् पौष्टिक भोजन की प्रवृत्ति को सिद्ध करता है। गर्मी में चावल दाल की खिचड़ी बनती है जिसे देसी घी के दूध और दही के साथ खाया जाता है। खिचड़ी के लिए यह प्रसिद्ध है :-

" खिचड़ी तेरे चार यार - दही, पापड़, घी, अचार। "

इसमें वर्जित पापड़ को छोड़कर यहाँ पूरी लागू होती है यानि चरितार्थ होती है। सर्दी में चावल की जगह बाजरे की खिचड़ी बनती है। जिसे "गोजी"[1] के साथ खाने में आनन्द आता है। राबड़ी [राबड़ी] यहाँ का विशेष पेय पदार्थ है इसे दूध या दही के साथ मिलाकर खाया जाता है। सर्दी में घी के मेवे, गोन्द आदि के शक्तिवर्धक लड्डू बनाये जाते हैं। यहाँ ऋतु अनुसार चने, सरसों का साग, छौलिये की कढ़ी, घीया तोरी आदि बेलों की सब्जी उपलब्ध होती है। अब भी यहाँ के लोग दूध पीना अधिक पसन्द करते हैं। वैसे चाय के प्रचलन के प्रभाव से यह देस भी नहीं बचा है। परन्तु चाय का प्रभाव अन्य प्रान्तों की अपेक्षा हरियाणा में बहुत कम है। और यहाँ के गाँवों में इसका प्रभाव बहुत ही कम है।

मेलों आदि में यहाँ के लोग लड्डू जलेबी आदि मिठाइयाँ खुश होकर खाते हैं। वैसे खान पान परिस्थितियों और समयानुसार बदलता रहता है।

[6] वेश भूषा [पहरावा] :- वेश भूषा के तीन कारण होते हैं - अलंकरण, शालीनता तथा शारीरिक रक्षा। इनमें मुख्य अलंकरण -मानव सदा से

---

1. दो भाग लस्सी और एक भाग दूध का मिश्रण।

अत्तर सेन्ट भी सौ-सौ ले लो कानों में लगाओ खूब ।
नहँ पालिश[1] और पौडर सुरखी, होठां रे लगाओ खूब ।।

(9) मनोरंजन :- चौपड़, ताश, शतरंज आदि खेलों में यहाँ के लोग रुचि रखते हैं । पहले जहाँ नाटक के अधिक शौकीन (आदीन) थे अब थोड़ा थोड़ा स्थानीय फिल्मों की ओर भी होने लगा है । तीज-त्यौहारों पर सामूहिक गीतों के साथ 2 नृत्य भी होता है । इसके अलावा रेडियो, ट्रांजिस्टर आदि भी मनोरंजन के साधन हैं । बीन - बांसुरी के स्वरों और ढफ की थाप तथा घुंघरुओं की झन्कार की धुन का आनन्द - बीन बांसुरी के साथ नृत्यों के माध्यम से उठाया जाता है । देखिए एक नमूना :-

सपेरा बीन बजा दे रे,
डुलण[2] दे काला नाग ।
सपेरा बीन बजा दे रे,
नाचूँगी तेरे साथ ।।

(10) सामाजिक मेल मिलाप :- अधिकतर आपसी मेल मिलाप जातिगत आधार पर है । यों अन्य जाति वालों से मेल मिलाप रहता है । किसी विशेष कार्य से ही दूसरे के घरों में जाते हैं । अन्यथा तो अपने अपने कार्यों में ही यहाँ के लोग व्यस्त रहते हैं ।

(11) अभिवादन एवं आशीर्वाद :- यहाँ बड़ों का अभिवादन और छोटों को आशीर्वाद दिया जाता है । बराबरी के दो व्यक्ति मिलते हैं तो ....राम 2 जयराम जी की, नमस्कार, नमस्ते, जय शंकर की आदि कहते हैं । अभिवादन

---

1. नाखूनों की पालिश ।
2. नृत्य करने दे ।

इनकी मान्यता दो रूपों में मानी जाती है। एक हित की कामना के लिए दूसरी अहित कामना के लिए।

उदाहरणार्थ-आँखें दुःखने पर "चोंव" उतारने के टोटके, बेरों के सात पत्ते और सात आटे की गोलियाँ चोटी से बान्ध कर आँखों के समक्ष सात बार उतारी जाती है फिर उन्हें छप्पर में टाँग दिया जाता है। इस टोटके से आँखों की लाली उतर जाती है। इस प्रकार से अनेक दुविधाओं के लिए अनेक टोटके यहाँ प्रचलित हैं।

(16) शुभाशुभ स्वप्न :- स्वप्न में घटी घटनाओं के घटित होने तथा उन्हें सद्-असद् रूप मानने के सम्बन्ध में पर्याप्त आस्था रखी जाती है। अर्द्धरात्रि के पश्चात् देखे गये स्वप्न सत्य समझे जाते हैं। फल, फूल, जल आदि, राजमहल में भोजन, राम, दही-चावल, मोती, दीपक, सर्प, मछली, हाथी, बैल, कुआँ, सुन्दरी का स्वप्न शुभ माना जाता है। भूआ, भिखमंगा, बानर, ओट्टर, सूकर, भैंस, कुत्ता, मैला, मृत गाँय, स्त्री, मकान का गिरना, छत से गिरना आदि स्वप्न अशुभ माने जाते हैं।

(17) शकुन विचार :- परम्परागत तत्वों में विश्वास तथा शकुन विचार, सामाजिकता की दृष्टि से महत्वपूर्ण तत्व कहा जा सकता है। इनका चित्रण लोक गीतों में मिलता है। शकुन, अपशकुन सम्बन्धी सामान्य धारणाएँ जो यहाँ श्रद्धा एवम् गूढ़ विश्वास, धार्मिक उपचार तथा प्रथाओं में सम्मिलित किये गये हैं। उदाहरण स्वरूप देखिए :-

एक शृंग दूजा साल, ओट्टे कहाँ मिले गुलाल।
तीन कोस तक जाए तेली, तो मौत निकाले घर केली।।

शकुन देखकर ही बहुत से लोग नया कार्य आरम्भ करते हैं। या यात्रा पर रवाना होते हैं। यदि यात्रा के दौरान मार्ग में एकाकी हिरण, दो सर्प मिले और भैंस पर चढ़ा हुआ चरवाहा (ग्वाला) मिले तो यात्रा के शकुन अच्छे नहीं हैं। यदि उस यात्रा के तीन कोस तक तेली मिल जाए तो समझो मृत्यु सिर पर खेल रही है। इसी प्रकार जालों की बेल, ईंधन, गोरा चमार अच्छा नहीं माना जाता।

माना गया है :- "कै मन्ने तेरे वास्ते लिख राखे है ?"

किसान की कटाई और बुआई "बुध बायगो सुक्कर लायगो" के अनुसार क्रियाशील होती है । कैसे से अमावस्या के रोज काम नहीं लेते । कुदाल वस्तु को इतवार को क्रय – विक्रय नहीं किया जाता ।
शकुन और अपशकुनों के कुछ अन्य उदाहरण निम्नलिखित हैं :-
शुभ शकुन :- पानी भरा घड़ा[1], मेहतर, गौ दर्शन, दही अथवा चाँदी का मिलना, दाँये फड़कना, हथेली खुजलाना, कौए का मुन्डेरे[2] पर बोलना, मछली दर्शन, दूब दर्शन, हरन दर्शन आदि ।
अपशकुन :- खाली घड़ा, काली बिल्ली, सूअरों का मिलना आदि ।

0 ====== 0

---

1. मटका ।
2. मकान का छज्जा ।

"नवम् अध्याय"

बांगड़ लोक साहित्य का काव्य शास्त्रीय अध्ययन

1- रस परिपाक :-

(1) वात्सल्य रस

(2) श्रृंगार रस :-

i- संयोग श्रृंगार - नख-शिख छटा, रूप सौन्दर्य, प्रेम-क्रीड़ा आदि ।

ii- वियोग श्रृंगार - पूर्वराग, मान, प्रवास, करुण-विप्रलम्भ आदि ।

(3) करुण रस

(4) वीर रस

(5) हास्य रस

(6) रौद्र रस

(7) भयानक रस

(8) वीभत्स रस

(9) अद्भुत रस

(10) शान्त रस

(11) भक्ति रस

2- बांगड़ लोकगीतों में अलंकार विधान ।

3- बांगड़ लोकगीतों में छन्द।

4- बांगड़ लोकगीतों में तुक एवं लय।

5- बांगड़ लोकगीतों में स्वाभाविकता और मार्मिकता।

6- बांगड़ लोकगीतों में दार्शनिक चिन्तन ।

7- बांगड़ लोकगीतों में अर्थ भंगुरता ।

8- बांगड़ लोकगीतों में नारी चित्रण ।

9- बांगड़ लोकगीतों में प्रकृति चित्रण ।

10- बांगड़ लोकगीतों में राष्ट्रीय भावना।

11- अप्रकाशित उपलब्ध बांगड़ लोकगीत एवम् उनका विवेचन।

0---0--0--0--0

-नवम् अध्याय-

बांगड़ लोक साहित्य का काव्यशास्त्रीय अध्ययन

गीत ही लोक साहित्य का मुख्य अंग है क्योंकि जीवन को सरसता प्रदान करने में लोकगीतों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। गीत ही विरह की आगको शीतलता प्रदान करते है। गीतों में -सरस राग रति रंग - की तन्मयता विद्यमान रहती है। इसका मूल है ... भाव। मानव हृदय भावों की जन्म भूमि है हमारे हृदय में छाया चित्रों के समान सहस्त्रों भावों समय समय पर उद्भूत होतेरहते हैं। हृदय से पैदा होने वाले ये भाव व्यवहार रूप में उत्पन्न होते हैं तात्विक दृष्टि से वे हृदय में निवास करते है और हृदय में सोये रहते हैं। उस समय भाव सुषुप्त भावों की संज्ञा से पुकारा जाता है। और जब ये कारण से जागृत होते है तब ये स्थायी भावों से जाने जाते है। विश्वनाथ की परिभाषा में - निर्विकारात्मक चिते भावः प्रथम प्रक्रिया अर्थात निर्विकार चित में उत्पन्न होने वाली प्रथम क्रिया को भाव कहते है। और ये स्थायी भाव रस रूप में परिणत होते है। इस सिद्धान्त का मूल सूत्र भरत का प्रसिद्ध सूत्र है - विभावानुभाव व्यभिचारी-संयोगाद् रस निष्पति अर्थात विभाव अनुभाव संचारी भावों के संयोग से रस निष्पति होती है अर्थात स्थायी भाव ही रस कहलाता है।

जहां तक बांगड़ लोक कवियों का प्रश्न है, वे प्रकृति के विशाल प्रांगण में नीले आकाश की विस्तृत पंक्ति छाया में, उनके जीवन के साथ साथ उनका काव्य पनपता रहा, जिसे उन्होंने आडम्बर रहित सीधे सादे शब्दों में अभिव्यक्त किया। हमारे लोक कवि ने न तो छन्द शास्त्र का ध्यान रखा और ना ही अलंकारों को

- -

बलाद भरने का प्रयत्न किया उसे यदि जरूरत रही तो सिर्फ भाव की, लयकी, स्वर लहरी और मादकता की, जो प्रचुर मात्रा में ग्रामीण गातों में दिखाई देती है लोक कवि के अपने स्वयं के अलंकार होते हैं अपनी शब्द योजना होती है और उसके साथ साथ अपने मुहावरे और अपनी गति और ताल है । उसके लोकगीतों में आदिमानव से लेकर आधुनिकतम सृष्टि की संस्कृति उसके उतार चढ़ाव, उत्कर्ष-अपकर्ष आदि का इतिहास बोलता हुआ सा प्रतीत होतीहै । उसके गीतों में जो जो भाव उद्भव होते हैं वे असाधारण और उनमें शीतलता हिम के हिम के समान होती है और उसमें भी ठीक वैसी ही चपलता हुआ करती है ।

लोकगीत सृजनकर्ता किसी विशेष विषय, रस, छन्द अलंकार आदि की जंजीरों में बन्धा कर रचना अपनी नहीं करता । भावातिरेक में उसके हृदय से जो भाव फूट पड़ते है वही झरनों की कल-कल के साथ स्वर मिलाकर वातावरण में बिखर जाते हैं । उनमें स्वतः रस-निष्पत्ति हो जाती है, अलंकारों की छटा परिलक्षित होती है, भावों का स्रोत उमड़ पड़ता है ।

लोक साहित्य को पूर्णरूपेण लाभान्वित करता है "किसी देश के शिष्ट साहित्य से पूर्णतया परिचित होने के लिए उसके लोकसाहित्य का अध्ययन अति आवश्यक है । शिष्ट साहित्य का लोक साहित्य से घनिष्ट सम्बन्ध है वास्तविक बात तो यह है कि शिष्ट साहित्य ही लोक साहित्य का ही विकसित, संस्कृत तथा परिमार्जित रूप है"[1]।

हिन्दी साहित्य के इतिहास के अनुशीलन से लोक साहित्य का महत्व स्पष्ट तया प्रतीत होता है । हिन्दी के आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक

1- हिन्दी साहित्य का वृहद इतिहास - लेखक राहुल सांकृत्यायन सम्पादकीय भाग 16, पृष्ठ 3

का काव्य लोक साहित्य का अमिट छाप को लिए हुए हैं। "हिन्दी" भाषा जन्म से लोक भाषा रही है और संस्कृति के साहित्यिक उत्तराधिकारी से भी अधिक उसे लोक मेधा का अधिकार मिला है। हिन्दी में अपने साहित्य के लिए जो प्रेरणाएं प्राप्त की हैं वे अधिकांशतः लोक-सम्पर्क से ही की हैं"।[1] इस विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि " हिन्दी साहित्य के सम्यक् अनुशीलन के लिए लोक साहित्य की पृष्ठभूमि से परिचत होना आवश्यक है। यही लोक साहित्य संकलन का साहित्यिक दृष्टिकोण से लाभ है और अभिजात साहित्य के लिए उसकी उपादेयता"।[2]

इससे स्पष्ट है कि लोकगीतों में सरसता और माधुर्य का अजस्र स्रोत विद्यमान है। पर उन सभी को लिपिबद्ध लोकगीतों की सीमित संख्याओं में उतारा जाना सम्भव नहीं। अतः लिपिबद्ध लोकगीतों के आधार पर लोकगीतों की काव्यात्मक विशिष्टता का सम्यक् विश्लेषण और मूल्यांकन सम्भव नहीं।

बांगरू लोकगीत काव्य सौष्ठव में किसी अन्य भाषा अथवा बोली के लोकगीतों से हीन नहीं हैं लोक साहित्य के मानदण्ड से उसके काव्यसौष्ठव के पक्ष सबल है। यहाँ बांगरू लोक साहित्य का काव्यशास्त्रीय अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है। :-

1- <u>रस परिपाक</u> :- सरसता लोगी त

सरसता लोक गीत की सर्वप्रिय विशेषता है। प्रत्येक गीत रस से आप्लावित है। बांगरू लोकगीतों में थोड़ी बहुत मात्रा में प्रायः सभी रसों की अभिव्यंजना हुई है, परन्तु प्रधानता श्रृंगार, वीर एवं करूण रस की है।

{1} <u>वात्सल्य रस</u> :- वात्सल्य रस का चित्रण बांगरू लोकगीतों में बड़ी ही

- -

1- ब्रज लोक साहित्य का अध्ययन लेखक डा॰ सत्येन्द्र पृष्ठ 566

2- कुलूई लोक साहित्य लेखक पद्म चन्द काश्यप पृष्ठ 178

विदग्धतापूर्वक किया है। बांगरू के लोक गीत में लव-कुश के जन्म के अवसर पर वात्सल्य की बड़ी ही मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है। सीतामाता की हर्ष, उत्साह, भय, चिन्ता आदि भावनायें माता के नैसर्गिक प्रेम की अभिव्यक्ति करती है :-

सिया मन में रही घबराय
लवकुश बन में हुए।
आज इस बन में जो सासू होती
देती दिवले[1] जलाए। ..लवकुश बन में हुए
आज इस बन में ननादल जो होती
लेती सतीये[2] धराए।..लवकुश बन में हुए
आज इस बन में पंडत जो होता
लेता हवन कराए।.. लवकुश बन में हुए

(2) <u>शृंगार रस</u> :- शृंगार रस का स्थायी भाव "रति" है। -नायक नायिका में परस्पर प्रीती। नायक विषयक, रीति के लिये नायिका और नायिका विषयक रति के लिये नायक "रति" का भाव आलम्बन है। उनके हाव भाव उद्दीपन का कार्य करते हैं। शृंगार के मुख्य दो भेद हैं :-

I- संयोग शृंगार

II- वियोग शृंगार

I- <u>संयोग शृंगार</u> :- इसके अन्तर्गत प्रेमी नायक तथा नायिका के परस्पर मिलन नख-शिख आदि के बहाने रूप चित्रण और उनकी प्रेम क्रीड़ा आदि का वर्णन आता है बांगरू लोकगीतों में हर प्रकार के नमूने मिलते हैं।

1- दीपक।

2- स्वास्तिक।

(i) नख-शिख छटा :- नायक नायिका की पायलों की झंकार पर मोहित हो जाता है और पानी पीने के बहाने उससे प्रेमालाप करना चाहता है :-

मैं तो धुर टांडे ते आया परी
तेरी सुण कै छमक[1]बाजे की
थोड़ा सा नीर पिलादे परी
मैं तो प्यासा मरूं सु नीर का

जुल्फों का वर्णन देखिए :-

वे जुल्फे बाल का फन्दा बनाना किससे सीखे हो ।
बहाना करके बागों का छुपे छुपे मालूम के जाते हो ।।

प्रेमिका के बालों पर ही मुग्ध हो जाता है । ठीक उसी प्रकार की नायिका भी नायक की मस्त चाल पर मोहित हो जाती है :-

राजा जी तेरी चाल स्वरूप
जूं हाथी झूमे गाल[2] में
राजा जी तेरी बोल स्वरूप
जूं पपिहा बोल्या रैनका

(ii) रूप सौन्दर्य:- यौवनागमन पर नायिका अपने रूप सौन्दर्य की ओर इतनी सजग हो जाती है कि उसे देखना नहीं प्रत्युत वह भी अपनी ओर आकर्षित होता है । रूप यौवन सम्पन्ना सुन्दरी की सुन्दरता के मूक चित्रण का वर्णन देखिए :-

मेरे गोरे बदन पे रंग बरसे
हेरी बागों मे जाऊं तो माली लरजे ।
वो तो पहो पे पड़्या पड़्या नीबं मटके
मेरे गोरे बदन पै रंग बरसे
हेरी तालो मैं जाऊं तो धोबी लरजे
वो तो पट्टे पे पड़्या-2 सोटा मटके ।।··मोरे ··

1- आवाज ।
2- गली ।

गोरी के रूप सौन्दर्य पर ललचाने की अभिव्यंजना बड़ी ही आकर्षक बन पड़ी है :-

हेरी कुवों पे जाऊ तो गरत ललचे
वो तो ईडुया पे पडुया-2 लोटा मटके । .. गोरे..
हेरी रसोई में जाऊं तो पंडत ललचे
वो तो चकले पे पडुया पडुया बेलण मटके । ..गोरे..
हेरी सेजां जाऊं तो राजा ललचे
वो तो सेजां पे पडुया पडुया तकिया मटके ।..गोरे ..

(iii) प्रेम क्रीडा :- प्रेम संसार में कितने ही बहाने होते है । कभी नायिका का तो कभी नायक का हर की नई दुल्हन से दुल्हे राजा मिलने को आतुर है परन्तु नायिकाएं उसे बड़ी चतुराई से समझा देती है और ऐसे समय मिलने को कहती है जिस समय उनकी प्रेम क्रीडा में कोई व्यवधान न पड़े :-

आधी रात चले आइयो मेरे बालमां
सोवे नणद अर सास
पतले जी राजा ..... ।

एक अन्य उदाहरण में नायक... नायिका के लिये खेतों में बरसता बादल ही उद्दीपन का कार्य करता है ।...

बरसण लाग्या रे हालिडो बादला
ऊंचे तो चढ़के गोरी छमे देखले
गोरी जलद के टाल ।.. बरसण लाग्या
कितसीक बोऊयं गोरी छण बाजरा
कितसीक बोऊयं जुवार । .. बरसण लाग्या

1- हाली ।

2- कहां कहां ।

प्रेयसी का नायक को उत्तर :-

थालियों में बोइये रे हालिड़ा बाजरा
डहरी[2] में बोइयो जुवार ।...बरसण लाग्या
किसायक आम्या हाँ लड़े बाजरा
किसीक आम्मी जुवार । ...बरसण लाग्या

प्रेमी:-

समदू[3] तो आम्या गोरी हणा बाजरा
लाम्बी कढ़ै[4] की जुवार ।...बरसण लाग्या

(2) <u>वियोग श्रृंगार (विप्रलम्भ श्रृंगार)</u> :- प्रेम की तीव्रता में दोनों का मिलन न हो सकने की अवस्था को विप्रलम्भ श्रृंगार कहते हैं । इसकी भी कई अवस्थाएं हैं :- (i) पूर्वराग, (ii) मान, (iii) प्रवास (iv) करुण यहाँ रति स्थायी भाव है ।

(i) <u>पूर्वराग</u> :- इसमें मिलन के पूर्व की स्थिति का चित्रण हुआ करता है आँखें चार हुईं कि तड़पन ...मीठी-2 जलन, हल्का-2 विरह और लगातार मिलन-पथ की ओर अग्रसर करती है - रुक हो जाती है । प्रेयसी या प्रेमी के ख्यालों में खोये रहना । उसके रूप सौन्दर्य पर ही मन का लगा रहना ....बस इतना ही पूर्व राग है । पूर्व राग का चित्र वस्तुतः रति की पुष्टि के निमित्त ही हुआ करता है । जिसकी चरम परिणति मिलन अथवा चिर-विरह है । इसे संयोग अथवा वियोग के मध्य की अवस्था भी कहा जा सकता है । अथवा इसे इन

1- स्थल ।
2- दल-दल ।
3- सागर की तरह गहरा ।
4- बढ़ी ।

उजन्श

दोनों में से किसी एक के अन्तरगत रखा जा सकता है । :-

तेरी रे कुआं ऊंची नीची पाल
जिंह चढ़ नधियां ठाड़ी जल भरें
एक ऊंट नधियां पाणिड़ा पिलाय
प्यासा मरे से ए पंछी दूर का
ते तो बो पाना माफ भोत सरूप
बोड़ कंवारारेवैरी क्यूं रहया
याणो[1]के मरगी मावर -बाप[2]
भायां भरोसे कंवारा रह गया
ते तो है नधिया भोत सरूप
बोड कंवारी ए बेरगो क्यूं रह गई

नायिका कहती है कि प्रेमी जोड़ी का गुजरात तक ढूंढे पा का नहीं मिला तब नायक कहता है कि तेरी जोड़ी का बन्दे बाग में है। जिसे नायिका भी स्वीकार करती है तब नायक पुनः कहता है :-

ते तो ए नधिया भोत ■ नदाणा,
चलते मुसाफिर कैसी दोस्ती ?
ते तो ए नधियां भोत सरूप,
थाल ए पदूंगा में ये बेरण ते चलूं ।
पढ्या मे पाना माफ तेल फूलेल,
नार पराई और गजबी मां चलै ।

- -

1- बच्चा (कम आयु का) ।
2- मां-बाप ।
3- शत्रु ।

(ई) <u>मान:-</u> नायक-नायिका सामने आस पास है - संयोग क्रीड़ा में तल्लीन अथवा उससे पूर्व का वैसे ही अभिनय के बहाने मान... और वह भी क्षणिक । इसकी समाप्ति पर पुनर्मिलन....वही क्रीड़ा हास विलास ...शायद पहले से भी ज्यादा । अतः इसे प्रेम क्रीड़ा का अंग मानना ही उचित है । राधा कृष्ण के पौराणिक मान का चित्रण निम्नलिखित गीत में दृष्टव्य है:-

ए जी जित बांट्ये[1] कली भर फूल, उड़े[2] पड़ मोर हो भगवान।
ए जी बरसे है मेघ, बाहर भीजे[3] रहे एकले जी भगवान ।।
ए जी म्हारे बोतरे पग ना देय, लाग्या-पोल्याँ उपड़े जी भगवान ।
ए जी इतनी सी सुण के नै, किसन महलां ते उतरे जी भगवान ।
ए जी एक कणां दोय दाल, दले पाछे ना मिलें जी भगवान ।
ए जी एक दही दूजे दूध फटे पाछे नां मिलै जी भगवान ।
ए जी एक कणां दूजी दाल पिसे पाछे रलमिलें जी भगवान ।
ए जी एक दही दूजे दूध, बिलोये पाछे रल मिलें जी भगवान ।
ए जी एक कृष्ण दूजी नार, मनाये पाछे मन मिलें जी भगवान
ए जी रोवे राधे जार-बेजार, आंसू गेरे मोर ज्यूं भगवान ।
ए जी राधे रूठें बारम्बार, किसन रूठे नां सरे जी भगवान ।

यहां राधा कृष्ण सामान्य नायक नायिका के प्रतीक हैं । नायक किसी भी हालत में नायिका का रूठ जाना सहन नहीं कर सकता । "मान" अथवा रूठना सामान्य प्रेम क्रीड़ा मात्र है । कहीं कहीं ऋतु जनित शारीरिक या स्वाभाविक अतृप्ति भी ऐसही हो तीव्रता का रूप धारण

- -

1- वितरित करना ।
2- यहां ।
3- भीगना ।
4- साफ सुथरा करना ।

कर लेती है । बसन्त का महीनों में जड़ जीव सभी में विशेष उन्माद दृष्टिगोचर होता है । चाहे जवानी हो चाहे बुढ़ापा :-

बूढ़ी ए लुगाई मस्ताई फागण में
काची अंबली गदराई सावण[1] में
बिन घाले मस्ताई फागण में
कहियो रहे री उस सुसरे मेरे ने
कर मुकलावा ले जा फागण में
कहियो रे उस बहुत प्यारी मे
पांच बरस गए हो[2] पीहर में
कहियो री उस जेठ मेरे ने
कर मुकलावा ले जा फागण में

यहां सावण और फागण एक जैसी तासीर रखते हैं । गोरी पीहर में रहना नहीं चाहती उसे वहां रहने को मजबूर किया जाता है। कि न नवीन प्रस्फुटित कपोलों सी जवानी के भावों की अभिव्यक्ति है ।

(ii) प्रवास :- प्रवास जनित विरह का चित्रण भी लोक साहित्य में अधिक सुन्दर और स्वाभाविक है । यहां एक एक स्थिति का मार्मिक चित्रण मिलता है । नायक नौकरी पर जाने के लिये पत्नी से विदा मांगता है परन्तु वह अपने मुंह से पति को जाने के लिए नहीं कहना चाहती इसीलिये कि वह उसे अपने पास ही देखना चाहती है :-

रे गोरी कहदे जाण की -
पत्नि उतर देती है :- जाण की कहेगी तेरी माय
ओ पिया मैं तो कहूं ना मूल[3] भी ।
कैरे[4] धन मोकर लागेगा हो कूक[5] के ।

1- सावन और फागुन एक जैसा ।

2- सबर कर ।

3- बिल्कुल भी

4- क्या

5- पुकार ।

एक प्रोषित पतिका की स्थिति कितनी दयनीय है । न तो बेचारी को सुसराल में कोई सहारा और न मायके में ही सुख :-

किस का पिस्सूं पीसना,

री सासड़ किसके खिलाऊ मन्दलाल ।

री मन्ने किसके भरोसे छोड़ गया ।

एक तो सुसराल में चैन नहीं है तो बेचारी मायके चली जाती है परन्तु वहां उसकी भाभी व्यंग बाणों से बींधती है । यहां एक सान्त्वना उसे अवश्य है कि उसकी मां सुख दुःख पूछती रहती है :-

भाभी ताने मारदी, म्हारा गया नणदोई पर देस

छाती पै कलेवा छोड़ गया ।

बाहर ते मायड़ आ गई, ए बेट्टी किसने बोल्ले बोल ।

ऐ बेट्टी सांची सांच बतादे, तेरा गया री जमाई परदेस ।

छाती पै कलेवा छोड़ गया ।

पति नहीं आये पत्नी को भारी चिन्ता हो रही है । वह अपने भाग्य को कोसती है :-

हाथ की रेखा देखण वाले

देख मेरे ये भाग निराले

परदेसी ने यू के करया

हो आये ना बालमा ।

मन हो जैसा वातावरण भी हृदय को वैसा ही स्पर्श करता है -

- -

अनुकूल परिस्थितियों में अनुकूल एवं प्रतिकूल परिस्थितियों में प्रतिकूल। प्रियतम के साथ होने पर सांझ की फुहारें सुखद एवं सुन्दर और मन को भली लगती है। परन्तु प्रियतम की जुदाई में अग्नि के समान-

गगन बरसे छिपे बिजली रे, पड़े बुंदिया लो प्यारी रे।
सावन बरसा लो प्यारी रे।
कहां गया बाग का माली रे लगा गया आम्ब की डाली
कहां गया सेज का रसिया रे, लगा गया एक सा तकिया रे
सावन बरसा लो प्यारी रे।

"बाग का माली" यौवन प्रहरी के लिये" सेज का रसिया" जीवन साथी के लिये " आम्ब की डाली" नायिका के लिये " एकसा तकिया" अर्थात दोनों का एक दूसरे का सम्बल {सहारा} की उपमा कितनी सुन्दर और सार्थक बन पड़ी है।

चान्दनी राजा बिन मोरे किस काम, चांदनी सइयां बिन मेरे किसकाम
चान्दनी नींबू के बुसइया परदेस।
जब रे चान्दनी बागों मे आई, चान्दनी नींबू के चुसइया परदेस
जबरे चान्दना तालों पे आई, चान्दना वारी के पिलइया परदेस
जबरे चान्दनी सेजों पे आई, चान्दनी जीवन के रखइया परदेस

- -

प्रियतम के बिना चान्दनी भी महत्वहीन एवं कान्तिहीन लगती है। बाग है यहां सौन्दर्योपवन तथा ताल है-प्रेम सरोवर।

आखिरकार नायिका अपने प्रियतम की जुदाई में इतनी पागल हो जाती है कि उसके अपने कोई खबर नहीं पाती - सावन की रिमझिम और चान्दनी दोनों आग लगाने लगती है - देह में तो आखिर में वह विधवा होना पसन्द करती है। - हे बिजली वहां जाकर गिर जहां परदेस में मेरा पिया है। ताकि मुझे विधवा होने का सन्तोष तो हो जाए क्योंकि वह तो बड़ा जालिम हो गया सुनता ही नहीं है।

(11) करुण विप्रलम्भ:- करुण विप्रलम्भ के उदाहरण भी बांगड़ लोक-गीतों में कम नहीं है। बाल विवाह की प्रथा के कारण समवय हीनता के अभाव में बालपति के साथ उसका यौवन श्रृंगार मुरझा जाता है। अभिव्यक्ति की मार्मिकता और भावों की सुकुमारता देखिए[1]:-

> रत्न कटोरीहाली जले रे
>
> बीरा कोई चूल्हे जले रे कसार[2]।
>
> खूंट में ते गोरी जले
>
> जाके याणे हों भरतार।
>
> रे मेरी बावली मल्हार।
>
> याणे[3] के बालम के ना जांगी ... .।

1- हरियाणा के लोक गीत सांस्कृतिक मूल्यांकन लेखक डा० भीम सिंह पृ०ठ 3।

2- खाण्ड मिश्रित भुना हुआ आटा।

3- अल्पायु।

एक अन्य दृश्य जिसमें नायिका झूले पर से गिर जाती है तो प्रेमी घबरा जाता है। वह मूर्छित पड़ी नायिका के मुंह से दो शब्द सुनने को व्याकुल हो जाता है। यहां भी देखा जाये तो स्थायी भाव शोक नहीं है। "रति" है :-

आई से सामणियारी तीज
पड़ग्या ए झूला सन्दे बाग मे
झूले थी मिरगा नैणी नार!
झोटे तो देवे साहब बाग में,
चाले थी फिरवा-फिरवा पौन[2] बाग में ।
आया झिकोला सरवण टै पड़ी,
पड़ती के होगी पीले दान्त जी
मुख जरदाई[3] बैरण छा गई-एक बर
एक बर मुखड़े ते बोल जी
बोल थे साहब गोरी ते बाग में ।

सावण के महीने में तीज के त्योहार पर नायिका झूले में झूलती हुई जिसकी आंखें मृग जैसी खूबसूरत थी. झूलते झूलते तेज झूलने के कारण गिर पड़ी और हवा के तीव्र झोंके उसे गिराने सहायक सिद्ध होते हैं। जिस पर नायक बड़ा दुःखी एवं असहाय सा प्रतीत होता है।

इस गीत में नायक की कल्पना भी अधिक बलवती हो उठी है। उसे पूरी आशा है कि उसकी गोरी को होश आ जायेगा और उसका पुनर्मिलन अवश्य ही होगा। लार्ड ब्राउनिंग की भी एक कविता में [ऐवलिन होप] में ठीक इसी प्रकार आशा होती है कि उसकी प्रेमिका जी उठेगी उसका पुनर्मिलन होगा तो यहां भी नायक पूर्ण आशा वादी है। क्षणिक मात्र कष्ट तो अवश्य है।

- -

1- हिरण जैसी आंखों वाली औरत।

2- हवा।

3- पीला होना।

{3} करुण रस :- करुणा की प्रतिमूर्ति नारी की शोकविह्वलता आँखों में आंसू और कंठ से मधुर ध्वनी निकलती देखकर वस्तुत: निश्चय कर पाना कठिन है कि वह सुखाया शोकसंतप्त है। वस्तुत: सुख दु:ख सभी को समभाव से स्वीकार कर लेने वाली लोकगीतों की नारी अपनी विशालता में भी आकर्षक है। नारी हृदय पर मुख्य रूप से तीन अवसरों में विशेष आघात लगता है। - विदाई, वियोग तथा वैधव्य। एक बांगड़ लोकगीत में वैधव्य को प्राप्त होने वाली नारी की करुणा का आंसू बहाना और भाग्य को कोसने का चित्रण इस प्रकार है। :-

कोए पी-पी पपैया है बैरी बोलता
कोए बोलै सै पीऊ-पीऊ के बोल
तूं मत बोलै रै पपैया[1] बैरी नीम में
कोए सामण के महीने आवैं तीजड़ी[2]
कोएसखी प तीजां का चा {व}[3]
तू मत ... ...

बेटी के लिये घर में किसके लिए हृदय में क्या स्थान होता है इसकी मार्मिक अभिव्यक्ति प्रस्तुत पंक्तियों में की जा रही है बेटी अब पराये घर जा रही है। यह सोच कर पिता के हृदय का जैसे बान्ध टूट पड़ता है जिस लाड़ला को उसने आजकल सम्पूर्ण सामर्थ्य के साथ सुख सुविधायें प्रदान करने का उद्योग किया था वह आज पराई होने जा रही है। मालूम नहीं उसका वैन लाडली को अधिक आनन्द दे पयेगा या नहीं। इन सारी बातों में मग्न उनकी चेतना जैसे निश्चय रहती है क्योंकि उसकी लाडली तो बाबल के मंण्डेरे की चिड़िया के समान थी जो आज उड़ के जा रही है।

- -

1- पपीहा।
2- तीज का पर्व।
3- हरियाणवी में शब्दांत में "व" नहीं बोला जाता जैसे भा {भाव} इसी प्रकार चाह {चाव}।

गीत की अभिव्यक्ति इस प्रकार है :-

ले रे बाबुला आपणां मैं चला सजन के देस रे
भाइयां नैं दिए महल-दुमहले हमें दिया परदेस रे
काहे को ब्याही बिदेस रे लक्खी बाबल मेरे
हम हैं रे बाबल मुंडेरे की चिड़िया[1]
कंकरी मारे उड़ जायें रे लक्खी बाबल मेरे

पति के वियोग मैं नारी की आन्तरिक वेदना ऐसी असह्य हो जाती है कि उसके चेहरे के मानो समाप्त हो जाती है । उसका पहनना ओढ़ना आदि सब छूट जाता है । और अपने घर वाले ऐसे लगते है मानों उस पर अत्याचार कर रहे हों । करुण रस की निम्नलिखित पंक्तियों मैं उसकी करुणा मयी अन्तर्वेदना इस प्रकार है :-

जिस दिन रे हे पिया नौकर सिधारग्या[2] रही चेहरे पे लाली कोन्या
म्हारे घर का मैं जुल्म करैं मैं उस ओडै पै घाल्यी[3] कोन्या
छोटा देवर लेण नै आया मेरी माता समझावण लागी
सोच समझ के रहिए हे बेटी घर पै तेरे भरतार[4] कोन्या ।..जिस दिन
जुलसे नलके मैं न्हाया करती वाहे मन की धार कोन्या
सात समुन्द्रा पार उतरगी आडै नणद का बीर कोन्या ।.. जिस दिन
ओणाले ओबरे सोया करदी बालम तकिए तैयार कोन्या
सात समुन्द्रा पार उतरगी आडै नणद का बीर कोन्या । ..जिस दिन

- -

1- मुंडेर पर बैठी चिड़ियां ।
2- चला गया ।
3- भेजना ।
4- पति ।

(4) वीर रस :-

(अ) बागड़ लोक में वीर रस की अत्यन्त प्रभावशाली अभिव्यक्ति हुई है। भारत पर चीन के आक्रमण के समय यहां का लोकमानस वीर रस से परिपूरित हो चुका उठा। यहां के लोग धड़ाधड़ भरती होने लगे एक नवयुवक अपनी प्रियतमा को कहता है :-

> प्यारी दे वरदान मैं हूं भारत की सन्तान।
> देखूं चीन की किलकार जाके कर दूं मारो मार।
> सेनापती मैं करके दिखाऊं काम हिन्द में,
> सबसे ऊंचा कर दूंगा मेरा नाम हिन्द में।
> चीन में कर दूं हिन्द का राज, चीनी क्यों रहे मोहताज।
> संतोष मेरा विचार जाके करदू मारो मार।।

इस प्रकार स्पष्ट है कि बागड़ लोकगीतों में वात्सल्य, श्रृंगार करुण, और वीररस का बड़ी ही सशक्त काव्यात्मक अभिव्यक्ति हो गई है उपर्युक्त रसों के अतिरिक्त अन्य शास्त्रीय रसों के उदाहरण भी बहुत संख्या में लोकगीतों में उपलब्ध हैं। अन्य रसों से सम्बन्ध कुछ उदाहरण भी बागड़ लोकगीतों में प्रस्तुत हैं।

(5) हास्य रस :-

लोकजीवन के उन्मुक्त वातावरण में हास्य को बहुत महत्त्व दिया गया है। हर खुशी के मौके पर लोकमानस उन्मुक्त भाव से अपने मन का उद्‌गार प्रगट करता है। जन्म विवाह पर हास्य रसों सम्बन्धी गीत गाये जाते हैं जिनमें मस्ती और जिन्दा दिल की तरंगें हिलोरें लेती हैं।

- -

परन्तु रास्ते में चलते हुए व्यक्ति से (प्रियतम) से इस प्रकार की कामना की गई है जिससे हास्य रस स्पष्ट रूप में झलकता है :-

> सर पे तेरे बंटा टोकणी हाथ में नेजू डोल ए
> ए सखी रही छोड़ बटेऊ बाग्या पानी प्यादे मन तलाया
>
> लाडुआ की मेरी हेली बणवा दे गुलदाणे की नीम भरा दे
> जलेबीयां की उसकी बांकी लाधा दे पुरिया की उसनी झाल दवा दे
> जब चालू तेरी गैल हो बटेऊ ।...सर पे तेरे बंटा

(6) रौद्र रस :- आंचलिक लोकगीतों में रौद्रभाव की अभिव्यक्ति यथास्थान प्रधानता दी गई है प्रत्येक युग में अत्याचार की श्रृंखलाओं में आबद्ध ग्राम्य जनता के विक्षुब्ध मनोभाव गीतों के संसार में अपनी शक्ति का स्रोत ढूंढते रहे हैं । सदियों की मुगलों और अंग्रेजों की गुलामी भी इन पर अधिक कुछ अधिक मानसिक प्रभाव नहीं डाल सकी । गुदड़ी के इन लालों ने सिर कटाना सिखा है सिर झुकाना नहीं सिखा । इनके आदर्श हकिकत और हरिश्चन्द्र आज भी इनके गीतों में जीवन्त हैं जो शक्ति देते हैं :-

> सहणे पड़ते कष्ट अपार,
> लोगों धर्म निभाणे में ।।
> हकीकतराय उमर थी याणी,
> धर्म पर होई थी वीर कुर्बानी
> अपणा तन-मन दिया था वार
> मगन रहे शीश कटाणे में ।। सहणे . .....

- -

(7) भयानक रस :- बांगड़ लोकगीतों में मानव भाव की अभिव्यक्ति अत्यन्त सहज स्वाभाविक रूप में ही है । सरल हृदय वाली ग्रामीण नारियां अपने हृदय के भाव को बिना किसी आवरण के बाहर निकाल देने में किसी तरह का संकोच नहीं बरतती । बादल के गरजने पर बिजली के कड़कने पर तथा अन्य प्राकृतिक विपत्तियों के समय कोमल हृदय नारी कितना व्याकुल हो जाती है इस सम्बन्ध में बांगड़ लोकगीत की विरहिणी नायिका आकाश में उमड़ रही घटायें और मेघाच्छन्न के कारण अकेला भयभीत हो रही है । जिया हो तड़प उठती है :-

> क्यूं जीया कीर्ट घटा माह उमड़ी कीर्ट बरसण हारा ।
> क्यूं जीया सावन घटा माह उमड़ी पावस बरसण हार ।
> क्यूं जीया कारे तो ब उद्ध अंधेर के, उठ गए परदेस ।
> क्यूं जीया काली तो घटा ए डरावणी धोली बरसण हार ।

(8) वीभत्स रस :- बांगड़ लोकगीतों में उन सभी भावों की अभिव्यक्ति को स्थान मिला है जिनका अस्तित्व पाया जाता है । लोक जीवन जुगुप्सा भाव से भरा पड़ा है अतः समाज की कुविकर नीतियों के प्रति परिवार के अप्रिय सम्बन्धों के प्रति व्यक्तियों की अपरिकृत रुचियों के प्रति लोक गीतों में सर्वत्र एक घृणात्मक भाव की व्यंजना देखने को मिलती है । जिस प्रकार थाली की कटोरी में घी धीरे धीरे जलता है और चूल्हे में कसार धीरे धीरे भुनता है उसी प्रकार बाल पति की पत्नी अपने दुःख में जलती रहती है । उसके हृदय कै और यौवनतरंग इस विवशावस्था में झुलसते रहते हैं :-

> रतन कटोरी घी जले रे बीरा कोई चूल्हे जले रे कसार ।
> ढूंढ़ में गोरी जले जाके याणो[1] हां भरतार ॥

1- बाल पति ।

(9) अद्भुत रस :- बांगर लोक गीतोंमें अद्भुत रस को भी उचित महत्त्व दिया गया है। लोक मानस में अप्राकृतिक तत्वों के अटूट श्रद्धा होती है व अस्वाभाविक और अप्राकृतिक के प्रति उत्पन्न यह अतर्क्य उनके जीवन में विस्मयोत्पादक तथ्यों का संचालन करता है। एक बांगर लोकगीत में प्रिय गमन से एक रात पूर्व पत्नी विचित्र प्रकार के दीपक से रोशनी करती दृष्टिगत होती है :-

> होंगा तो मैं तेल घणा
> मोटी बेह बात
> आज सज्जण घर पाहुणाँ
> दीवा बलयो सारी रात।

(10) शान्त रस:- बांगर लोकगीतों में शान्त रस की सुन्दर अभिव्यक्ति प्राप्त होती है। जीवन और जगत के दुःखों से दुःखी होकर भावुक लोक मानस अलौकिक सत्ता के प्रति बारबार आकृष्ट हो भी उठता है। संसार की असारता और क्षणभंगुरता से निर्लिप्त होकर वह वैराग्य के सोपानों पर क्रमशः आरोहण करता हुआ दिखाई देता है।

> थक करै तो कर हर से लावै तो लो लाया कर
> पीवो तो पी प्रेम रस, खा तो गम खाया कर।।
> तजै तो तजतिरस्ना ने राखै तो राख सरम को
> पढ़ै तो ले गीतो पढ़ सीखै तो योग करम को
> सोवै तो सो सेज मोक्षा पर मेटै तो मेट भरम को
> छोड़ै तो पाप छोड़ दे, मानै तो मान धरम को
> करै तो जप तप दान यज्ञ अतिथि यो पर छाया कर
> पीवै तो .... ।

- -

(11) भक्ति रस :- अध्यात्म प्रधान धार्मिक लोकमानस ने हर काल और हर परिस्थितियों में सगुण और निर्गुण ईश्वर के प्रति श्रद्धा- विश्वास को बनाये रखा है। यदि हम यह कहें कि लोक जीवन में हर कार्य इसी ईश्वर आस्था को केन्द्र में रखकर चालित और सम्पादित होता रहा है। अति युक्ति न होगी। इस क्षेत्र में प्रचलित एक लोकगीत में भक्ति रस का प्रबन्ध संचार प्रस्तुत है :-

राम अरु लछमन दसरथ के बेटे
दोनू बनखंड जायं
हेरी कोए राम मिले भगवान।
एक बन चाल्ये दो बन चाल्ये
तीजे बन लग गई प्यास
हे री कोए ----------।

छोट्टे छोट्टे छोहरे गऊ ए चरावैं
पानीड़ा पिलावो नंन्दलाल
हे री कोए ----------।
नां कोए कुंवा नां कोए जोहड़
नां कोए सरवर ताल
हे री कोए ----------।

उपर्युक्त रसों के उदाहरण क्रम से जो गीत प्रस्तुत किये गये हैं उनसे यह बात साफ हो जाती है कि उनमें रसों की शास्त्रीय व्यंजना के स्थान पर स्वाभाविकता, सरलता और सादगी को प्रधानता दी गई हैं। अत: इन गीतों के काव्यपक्ष की तुलना शिष्ट साहित्य से करना इनके साथ अन्याय होगा। तुलना करने पर निश्चय ही इनमें गाम्भीर्य का अभाव मिलेगा परन्तु इसकी पूर्ति लोकमानस के हृदय की सादगी की छाप से हो जाती है।

- -

2- बांगरू लोक गीतों में अलंकार विधान:-

अलंकारों का महत्व जितना काव्य क्षेत्र में है उतना लोकगीतों में नहीं है । अलंकारों का काव्य की आत्मा बतलाया गया है । "न कान्तमपि निर्भूषं विभाति वनिताननम् ।- भामह काव्यालंकार ।

इसी प्रकार अन्य संस्कृत आचार्यों ने काव्य में अलंकार की प्रधानता को स्थान दिया है । इसके विपरित अनेक आचार्यों ने काव्य में अलंकार की अप्रधानता निर्दिष्टता करते हुए अपने अपने मतों का प्रति पादन किया है ।

परन्तु समस्त मत-मतान्तरों पर दृष्टिपात करते हुए निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि अलंकारों के द्वारा कविता के मूल सौन्दर्य की अभिवृद्धि होती है और रसोद्रेक सहायता मिलती है । कविता की तरह लोकगीतों में भी मानव हृदय की कोमल भावनाओं की अभिव्यंजना रहती है जहाँ कविता में हृदयगत भावना की एक विशिष्ट नियम निर्दिष्ट अभिव्यक्ति प्रणाली होती है वहां लोकगीतों में हृदय के उद्गार सर्वथा मुक्त रूप से विचरण करते हैं । कविता की सरिता नियमों के कृत्रिम बांध के सहारे जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में प्रवाहित होती है वहां लोकगीत पहाड़ी झरने की तरह स्वच्छन्द वेग और उन्मुक्त तरंगों में मचलते हुए सारे संसार को अपने स्वरों में बांध लेते है । इसी लिये कविता में जो बाह्य और आन्तर नियम जो लक्षित होता है वह लोकगीत में नहीं । कविता में अलंकारों की प्रयास पूर्ण योजना उपलब्ध होती है परन्तु लोकगीतों में उसका नितान्त अभाव रहता है । लोकगीतकार गीत के निर्माण के समय केवल भाव-प्रेरणा से उद्वेलित होता है - भाषा,छन्द, अलंकार पर उसका किंचित भी ध्यान नहीं रहता । जबकि कवि इनकी उपेक्षा नहीं कर सकता । अनुभूति पक्ष की तुलना से वह कविता

- -

के समकक्ष गहराई और व्यापकता से युक्त होती है । यही कारण है कि लोक गीतों में अनेक प्रकार के अलंकारों अप्रयासित योजना उपलब्ध होती है ।

अब हम लोकगीतों में प्रयः प्राप्त होने वाले अलंकारों का विवेचन कर रहे हैं । लोकगीतों में शब्दालंकार की अपेक्षा अर्थ अलंकार के उदाहरण अधिक संख्या में प्राप्त होते हैं । प्रायः रूपक और उपमा का बाहुल्य दिखाई देता है । आंगिक लोक गीतों में अलंकारों के नमूने :-

(i) <u>अनुप्रास-अलंकार</u> :- जहां एक या अनेक वर्णों की एक से अधिक बार आवृत्ति हो वहां अनुप्रास अलंकार होता है । प्रस्तुत पद में "ट" की एक से अधिक बार आवृत्ति हुई है :-

टौटे मोटे छोटे में, कोय बिरला दिल डाटे से ।
हो आदम देह में, विपत्त पड़े जिन के बेरा पाटे से ।।

आंगिक लोकगीत में छेकानुप्रास का एक उदाहरण प्रस्तुत है :-

आई बरात तेरी देहली पै मां बाजां की आवाज सुणै रे ।
सब कोई राजी हो रे खुशी दिलां में छाई रे ।।

(ii) यमक अलंकार :- जहां एक शब्द दुबारा प्रयुक्त हो और उसका अर्थ भिन्न हो वहां यमक अलंकार होता है । "दीवा इसी रूप में प्रयुक्त हुआ है जिससे दो भिन्न भिन्न अर्थ स्पष्ट होते हैं :-

दीवा के मरा दीवा के मरा गात्या लोहरे तो डेमरा,
जात्या कोयला जे ।
दीवा नौमेरा रे दीवा नौमरा गात्या लोहरे दीवा दम मरा,
जात्या कोयला ▪ जे ।

- -

(iii) श्लेष अलंकार:- बांगर लोक गीत की निम्न पंक्तियों में श्लेष अलंकार की शोभा द्रष्टव्य है :-

बीर बान्नी घर की बान्नी

"यहां "बान्नी" शब्द और त और शोभादायी अर्थों में प्रयुक्त हुआ है जो श्लेष अलंकार का उदाहरण है ।

(iv) उपमा अलंकार :- जहां उपमेय और उपमान का सादृश्य समकक्ष हो वहां उपमा अलंकार होता है । प्रस्तुत पंक्तियों में औरत की आंखों की सुन्दरता की उपमा हिरणी की आंखों से दी गई है ।:-

झूलै थी मिरगा नैनी नार,
झोटे[1] तो देवै साहब बाग में।

(v) उदाहरण अलंकार:- उदाहरण अलंकार का भी प्रयोग बांगर लोकगीतों में सुन्दर तरीके से प्राप्त होता है एक गीत में प्रवासी प्रेमी के वियोग में उसकी मनोवेदना और पीड़ा को आग के समान कष्टप्रद बताया है :-

परदेशी की प्रीत का कोए ना कारयो होड़[2]।
आगड़ की आग ज्यों गया सिलगती छोड़ ।।

यहां प्रेमिका आग की भांति सुलग रही है जो हृदय की विरह का उदाहरण है ।

(vi) रूपक अलंकार:- जहां सादृश्य के कारण उपमेय में उपमान का आरोप किया जावे रूपक अलंकार है ।:-

सासू तै बीरा बूल्हे की आग ननद भादों की बिजली जी
सो(ब)रा तै बीरा काला सा नाग देवर सांप सपोलिया[3] जी
राजा तै बीरा मेहन्दी का पेड़ कदी रचै कदी ना रचै जी

- -

1- झूले ।
2- मुकाबला ।
3- सांप का छोटा बच्चा ।

§1/ii§ विभावना अलंकार :- यहाँ विपरीत कारण द्वारा कार्य की उत्पत्ति का वर्णन हुआ है । जब उसकी जवानी को उसके प्रियतम की आवश्यकता थी वह उसके पास नहीं थे परन्तु जब जवानी ढलने लगी तब प्रियतम का आना विपरीत कारण बनता है । :-

जब साज्जन ए परदेस गए, मस्ताणा फागण क्यूं आया ।
जब सारा फागण बीत गया, तै घर मैं साज्जन क्यूं आया ॥

§1/iii§ प्रतीक अलंकार :- यहाँ गीतों में अनेक प्रतीकों को स्थान दिया गया है यहाँ शरीर के लिये "चरखा" तथा आत्मा के लिये "छली" प्रतीक प्रयुक्त हुआ है । :-

"चरखा" अजब अमोला रै, बड़े भाग से पाया ।
चरखा पड़ा 2 टूट आया काते क्यूं ना री ।।
जिन आस्ते तेरी होगी कुंवारी माने क्यूं ना री ।।
तेरा "छली"[1] जब राजी होई बात बात ढूंलावै ।

§ix§ उल्लेख अलंकार :- जब कार्य-विषय का अनेक प्रकार से वर्णन किया जाये तब उल्लेख अलंकार होता है । यहाँ विधवा का अनेक प्रकार से वर्णन किया गया है अतः उल्लेख अलंकार है :-

कोए सारी सहेली है सींगर[2] बुलती
कोए विधवा तै बेठयी से उदास
तूं मत बोले रै पपैया बैरी नीम मैं
कोए सारी सहेली है बेब्बे[3] गावती
कोए विधवा तै बेठयी से उदास
तू मत बोले रै पपैया बैरी नीम मैं

- -

1- पति ।
2- श्रृंगार करना ।
3- बहिन ।

3- आंगिक लोकगीतों में छन्द :-

छन्द के विषय में कुछ विशेष तथ्य स्मरणीय है । सामान्यतः
अभिव्यक्ति दो प्रकार की होती है - गद्यात्मक एवं पद्यात्मक गद्य सवर्था
वर्ण, मात्रा, यति और गति के नियमों से मुक्त करता है । जबकि पद्य
में प्रत्येक शब्द योजना निर्दिष्ट नियमों के अनुसार होती है । यही नियमित
शब्द योजना छन्द कहलाती है । सम्पूर्ण सृष्टि छन्दोमयी है । सृष्टि के
छन्द स्पन्दन युक्त भावों की प्रथम मानवी अभिव्यक्ति कविता और संगीत
रूप में भी हुई होगी ।

कविता के क्षेत्र में छन्द योजना अत्यन्त प्राचीन है ।
किन्तु यह भी स्मरणीय है कि युग और उससे प्रभावित मनःस्थिति को अभिव्यक्ति
प्रदान करने के उद्देश्य से छन्दों के स्वरूप में परिवर्तन होता रहता है ।
नये छन्दों का अविष्कार कवि की क्षमता का परिचायक है क्योंकि भावनाएं
अपने प्रकाशन के लिए उपयुक्त माध्यम खोज ही लेती है । युग एवं प्रवृत्तियों
के अनुसार छन्दों का उत्थान पतन होता है ।

छन्द का अर्थ है - आह्लादन । काव्य में आह्लादमयी
सम्मोहिनी शक्ति का उद्भावक छन्द है । भरत मुनि ने भी सम्पूर्ण वांगमय"
को छन्दयुक्त कहा है । किन्तु यह भी स्मरणीय है कि विचारकों का एक
वर्ग जहां छन्द के अनिवार्यता का समर्थक है वहां दूसरा विरोधी ।

जो छन्द हीन काव्य है वह रसहीन हो जाता है ।
कभी कभी अनुरूप छन्दों के अभावों में भावनाओं का वेग निर्बन्ध होकर
निर्धारित सीमा का अतिक्रमण कर देता है और छन्दमुक्त काव्य की सृष्टि
होती है ।

- -

भाव स्वातन्त्र्य की दृष्टि से छन्दों के अनिवार्यता का विरोध अपेक्षित सा है । यही कारण है कि लोकगीतों में निश्चित विधान का अभाव है । कहीं -2 छन्दों का समावेश लक्षित भी होता है तो वहां नियमों की शिथिलता रहती है । लोकगीतों में कुछ ऐसे छन्दों का प्रयोग प्राप्त होता है जो वर्णिक एवं मात्रिक छन्दों के अन्तर्गत नहीं आते । केवल लय पर आधारित होकर चलते हैं । इस प्रकार के छन्दों में यहां दोहा, चौबोला, रागनी आदि की क गणना आती है ।

संस्कृत साहित्य के अन्तर्गत भाव व्यंजना और छन्द में सामंजस्य पाया जाता है । लोकगीतों में भी भावव्यंजना और छन्दों के सामंजस्य प्रयास दिखाई देता है । यह छन्द मुख्य रूप से ताल और लय पर आधारित होते हैं । ग्रामीण स्त्रियों के स्वरों का आरोह-अवरोह द्वारा विशेष प्रकार की लय का निर्माण करके ढंग से गीतों का गायन करती हैं । कि कहीं भी गति भंग या गति बाधा नहीं दिखाई देता । जीवन के गम्भीर पक्ष की अभिव्यक्ति के लिए लम्बे लम्बे छन्द संसार के प्रति अनासक्ति एवं विराग के भावों में निर्गुण छन्द साहस और विकट वीरता के उदात्त भावों के प्रकाशन के लिए आल्हा छन्द का प्रयोग किया जाता है ।

अतः लोकगीतों में उपलब्ध छन्दों का कोई निश्चित स्वरूप नहीं है । एक ही छन्द में अनेक रूप दिखाई देते हैं । यही कारण है कि लोकगीतों में कोई छन्द विधान नहीं पाया जाता । इन गीतों में छन्द नहीं केवल लय होती है ।

- -

4- बांगरू लोक गीतों में तुक और लय :-

तुक के प्रयोग से कविता स्मरण में मदद मिलती है और श्रुति मधुर भी हो जाती है । इसीलिये प्राचीन हिन्दी कवियों द्वारा तुकान्त कविता लिखी गई । तुक कविता का एक जरूरी अंग और सौन्दर्य वृद्धि करने वाला बन गया है । अब भी तुकान्त प्रवृत्ति पाई जाती है । बांगरू लोकगीतों में भी तुकान्त पाये जाते हैं । परन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि इनमें तुक के नियमों का पूर्ण रूप से निर्वाह किया जाता है । कभी कभी एक ही गीत में कुछ स्थलों में तो तुक रहती है और कुछ में इसका अभाव :- कंध मनाका आया मेरी सासड़ा

ओ हलो क्यूं न राज ।
धाल गोरी पर आपणी जी,
बागा कोला छिवादो मेरे माह जी।
रहदो न राज, चांद सूरज
सौंही आरसा मेरे माह जी ।

कई बार उसी शब्द को गीत में दोहरा लिया जाता है :-

एक छोटी जेनारे[1] ते आई
उसके दादा ने दे ले बुलाई

गीतों में प्रायः अन्त में आने वाली पंक्तियां दोहरा ली जाती है क्योंकि इससे गीतों की लय में मधुरता और सरसता आती है और तुकान्त भी यथास्थान स्थिरता प्रदान करने में सहायक सिद्ध होते हैं ।

- -

1- जेवनार ।

बांगड़ लोकगीतों में अन्त में आने वाली पंक्तियों की दोहराई के अनेकों उदाहरण मिलते हैं :-

> किथियां बानां[1] है न्योंदियां[2] किसयां के घर जाय
>
> ये कनवाड़ा है न्योंदिया ।
>
> सिरी राम बानां है न्योंदिया घर राम जीके जाय
>
> यो कनवाड़ा है न्योंदिया ।
>
> पगड़ा[3] बान्ही है लटपटी पल्ले छोड़े[4] दो ध्यार
>
> यो कनवाड़ा है न्योंदियां ।

ये तुक नितान्त स्वाभाविक हैं इनके जुटाने के लिये किसी प्रकार का प्रयास नहीं किया गया है वस्तुत: लय ही इन गीतों का मोहक गुण है । जब औरतें सामूहिक रूप में किसी गीत को लय पूर्वक ह्रस्व को दीर्घ, दीर्घ को ह्रस्व ...और कम अक्षरों की पंक्ति को स्वाभाविक रूप में पूरा कर लेती है तो ...तो उनके गीतों का लय युक्त उच्चारण उस गीत में रस संचार कर देता है । शुष्क से शुष्क गीतों में लय द्वारा रस गगरी उड़ेल दी जाती है । गीतों में लय का अत्याधिक महत्व है । लय की अनुभूति तो सुनने पर हो सकती है । गीतों में लय की विशेषता के कारण ही पं॰ राम नरेश त्रिपाठी ने कहा है कि-- लोकगीतों में छन्द नहीं केवल लय है ।

बांगड़ लोकगीतों में बालगीतोंमें आं आं आं आं, सांगों में अर र र र र अर र र र तथा इसी प्रकार नाचों की अपनी एक विशेष लय बड़ी आनन्दमय और मन्त्र मुग्धमयी होती है -मिठास घोलनेवाली ।

- -

1- किसी दूल्हे को ।
2- निमन्त्रण दिया गया है ।
3- पगड़ी ।
4- सिरा ।

5- बांगर लोकगीतों में स्वाभाविकता और मार्मिकता :-

लोकगीतों में सामान्य जन सरलतम जीवन की विभिन्न अनुभूतियों की जो स्वाभाविक एवम् मार्मिक अभिव्यक्ति मिलती है वह अन्यत्र कठिन है। सीधी और स्वाभाविक अभिव्यक्ति मानव हृदय पर शाश्वत प्रभाव डाले बगैर नहीं रह सकती। अनुभूति और अभिव्यक्ति का एक दूसरे में वरण ही लोकगीत का प्रधान तत्व है। जो संवेदन शील मानव को वाद विवाद से दूर रसोद बोध की चरमावस्था तक पहुंचा देती है।

यह तो सर्वमान्य सिद्धान्त है कि काव्य की लोकप्रियता उसमें निहित भावनात्मक उत्कर्ष पर निर्भर रहता है क्योंकि काव्य के तीन मूलभूत भाव तत्वों भाव, कल्पना और बुद्धि में भाव को ही सर्वोपरि माना गया है।

बांगर लोकगीतों में भी स्वाभाविक भाव व्यंजना द्वारा मर्म स्पर्शी प्रभाव की उपलब्धी होती है। जीवन का सुख दुःख इन गीतों में अपनी सम्पूर्ण संवेदना के साथ अवतीर्ण हुआ है। बांगर लोककाव्य में अनेक स्वाभाविक वर्णन नितान्त स्वाभाविक शैली में प्राप्त होते है। मनोभावों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति की छटा निम्न पंक्तियों में दृष्टव्य है :-

तीजों का त्योहार सखी है,
सब बदल रही बाणा[1]।
मैं निकल्‍ी बिचली गैल[2]
जेठानी मार दिया ताना।
जिनका पति बसे परदेस
हे से जीन ऐसे मरना।

पति के परदेस जाने पर पत्नि उससे मिलने के लिए आतातुर होती है और उसका मार्मिक चित्रण बड़े ही स्वाभाविक ढंग से किया गया है।

1- पहनावा।
2- साथ ।

एक अन्य बांगरू लोकगीत में वियोग का चित्रण उसके पति के प्रवास के कारण बड़ा ही हृदय स्पर्शी बन पड़ा है :-

के दलिये का छाणा सास मने भाक्तं कोन्या
ये पति गये परदेश मेरा जी लागया कोन्या
ए ठा के जेवड़ी ठा के दराती मै हुई खेत की राही
ए जबर भरोठा बान्ध लिया मेरी थर थर कांपे नाड़ी ।...के दलिया

वियोगिनी को भड़काने के लिए वर्षा की बून्दे तैलबिन्दुओं का कार्य करती है उसे प्राकृतिक दृश्य बिलकुल भी नही सुहाता क्योंकि उसके प्रियतम नहि हैं :-

रे गगन गरजे, झिमाले[1] बिजली,
पड़े बौन्दिया भरे क्यारी
सबे बिरला की प्यारी
कहां गए सेज के रसिया ?
कहां गए एक बाग केमाली ?
कहां गए एकली डाली ।
रे गगन गरजे, झिमाले बिजली ।

प्रियतम के बिना उसकी सेज सूनी पड़ी है इस यौवन के उपवन का माली प्रेम का बिरवा लगा कर मुझे अकेली छोड़ कर ना जाने किधर चला गया । उसका पति नौकरी के लिये विदेश गया हुआ है उसके इस असहनीय मर्म की व्याख्या बड़ी स्वाभाविक सी लक्षित होती है ।

1- चमकना ।

6- दार्शनिक चिन्तन :-

यहां के लोकगीतों में दार्शनिक चिन्तन की अभिव्यक्ति बड़ी श्रेष्ठ और स्वाभाविक सी की गई है।

यह संसार बखेड़ा सुख दुःख पूर्ण है। जब जीव काम क्रोध मोह, लोभ अहंकार आदि का परित्याग करता है तभी उसका बन्धन छूटता है यह तथ्य बागड़ लोक मानस को अभिव्यक्त करने वाले निम्नलिखित लोकगीत में मिलता है :-

इस संसार चक्कर में फंस के
बड़ा दुःख हो से
मन चित बुद्धि अहंकार ये चारों अंतकरण
दुःख हो से
हो इन झगड़ों से दूर जीव ने मुश्किल से
सुख हो से
जीव आत्मा का इस देह करमां ते संगठन से।

इस एक अन्य बागड़ लोकगीत में जीवन दर्शन की छाप बड़ी सार्थक सी प्रतीत होती हुई दिखाई देती है :-

दुनियां मे रे बाबा नहीं रे गुजारा किसी ढब ते
घर में रहे तो कैसा जोगी बन में रहे विपत का भोगी
मांगें भीख बतावे लोभी त्यागी अटा गया अब ते
दुनियां मे रे ....
बोल ते वाचाल बतावे नां बोलूं ते गरभीय रहा
करे खुसांमदे हार गया है डर रे म्हारे डर ते
दुनिया में रे ---.... ....

1- तरीका।
2- गर्वीला।
3- खुशामद।

7- बांगरू लोकगीतों में क्षण भंगुरता :-

निर्गुण भक्ति के अनुसार शरीर पांच तत्वों का मिश्रण है जो मृत्योपरान्त उन्हीं में समावेश कर जाता है । संसार का प्रत्येक पदार्थ नश्वर है, केवल आत्मा अनश्वर है .... अजर और अमर । एक बांगरू लोकगीत की पंक्तियां :-

मिट्टी के मांह मिट्टी मिल गई पवन मिली पवन पवन के मांह
किसका रहै इजारा माली, कलियां फूल चमन के मांह
दीपक में ते निकल रोशनी, धुमां धार तेल जलग्या ।
पांचां में से एक निकल कर बेरा ना किसकै रल गया ।

सगुण भक्ति का एक साकार सा उदाहरण जिसमें ब्रह्मा-विष्णु महेश त्रिशक्ति का अवतार तीनों गुणों सत्वो रजो तथा तमो गुणों का वर्णन किया गया है ।

सिरष्टी खातर रजोगुण, तमोगुण, सतोगुण, मेल मिलाए
काम क्रोध स्वरूप अहंकार ते बिरहमा भी उबराए
विष्णु कहने लगे बिरहमा से, रच क्यूं दील[1] लगाई ।
पूरन ध्यान दिया ईश्वर ने सिरष्टा खातर भाई .... टेक
व्याकुल होकर दो गुण तज दिए सरीर जलाना चाहे
सतगुण ते अहंकार ने तजके शिव के दरसन पाए
रोकर शिवजी कहन लगे मेरी देह किस लिये बनाई .. टेक

इसके अतिरिक्त बांगरू लोकगीतों में क्षणभंगुरता विषयक अनेक उदाहरण उपलब्ध होते हैं ।

- -

1- देर

8- बांगर लोकगीतों में नारी चित्रण :-

नारी जीवन की गहराइयां, मानव जीवन में उत्पन्न सुख दुःख की लहरों में हर्ष की अपेक्षा अवसाद का स्वर आदि की स्वाभाविक अभिव्यक्ति की गई है। ऐसा प्रतीत होता है कि मानो लोकगीत के अज्ञात रचयिताओं ने जगत के कोने-2 में बिखरे अवसाद का कण-कण सहेज कर अपनी वाणी का रूप संवारा है।

बांगर लोकगीतों में सरल स्वभाव, सादा तथा कठोर जीवन का इतिहास साक्षी है। अर्धांगिनी शब्द का सार्थक साक्षात्कार बांगर लोकगीतों में नारी दर्शन से प्राप्त होता है :-

> "शूरवीर और चतर पुरुष कदे[1] मोटा ना होणे का,
> जिसके घर में पति भक्ता नार, कदे टोटा ना रहणे का।"

यानि कर्मयोगी और चुस्त व्यक्ति को आप कभी मोटा नहीं पायेंगे और पतिव्रत धर्मपालन करने वाली औरत के घर में गरीबी प्रवेश नहीं कर सकती।

बांगर लोकगीतों में गृह कलह की निन्दा निम्नलिखित पंक्तियों में दर्शाई गई है :-

> घर की राड़[2] पड़ोसी देखै कितनी बुरी लियाकत से।
> म्हारी तेरी क्या ताकत से रावण से ज्ञानी जिन्हों री मां।।
> चंपापुर में रौल राज हुए जिसने जाने सारा जगत।
> एक पूत घर बार का प्यारा दूसरा खा गया सारी जात।।

1- कभी।
2- कलह।

नणद भावज के प्रेम का खूबसूरत स्वाभाविक चित्रण लोकगीतों के माध्यम से कितना सरस एवं मधुर बन पड़ा है। ननद अपनी भावज का मन बहलाती है और उसकी बलाएं लेती है। दोनों परस्पर के मेल जोल से घर का कार्य करती हैं। भावज कहती है। कि ए नणदल उठ चल मुझे अपने स्वसुर का सरोवर तो दिखादे क्योंकि मुझ वहां से पानी लाना है। तालाब नहीं आता और दिखाई भी नहीं देता। फिर तालाब नजर आने पर नणद तालाब दिखा देती है और स्वंय दातुन करने लग जाती है :-

उठरी नणदल पाणी में चाल,
सरवर दिखा दे अपणी बाप का
चाल री नणदल कोस पचास
सरवर ना आया तेरे बाप का
वा दीखे री भावज ऊंची नीची पाल
ओ दीखे सरवर मेरे बाप का
तुम ते री भावज घड़ा डुबोय[1]
मैं करूं दातण हरियल जाल[2] की।

इन पंक्तियों में वास्तविकता, सरलता, और मनोविनोद के साथ साथ सरस पारिवारिक जीवन की साकार झांकी प्रस्तुत की गई है। जब बातों बातों में सास बहू के विचारों में विरोधाभास झलकने लगता है बहू की व्यंग्यात्मक बातें सुनकर लड़का अपनी मां का अपमान समझ कर उसे अपनी मायके भेजने को तत्पर होता है तो मां की दूर दृष्टिता परिस्थितियों को सम्भालती है :-

क्यान्है ते बेटा दिया रे विडार, क्यान्है ते टाली धन ने बाप के।।
बेटा या धन[3] जन्मेगी पूत, बेल बधेगी[4] तेरे बाप की ।।

- -

1- घड़ा भरना ।   2- वृक्ष का नाम ।
3- पत्नि ।   4- वंश परम्परा की वृद्धि ।

क्योंकि यह गृह लक्ष्मी है । इसकी कोख से उत्पन्न पुत्र रत्न से तुम्हारे पिता की वंश वृद्धि होगी ।

नारी की आन्तरिक पीड़ा उसकी आंखों के माध्यम से बाहर आता है -असहनीय सी । "तुम ते चाले नौकरी म्हारो कौण हवाली[1]" पति के प्रदेश प्रस्थान पर नारी की कसक एवम् पीड़ा का सम्बन्धा सुन्दर चित्रण मे दर्शाया गया है । क्योंकि उसके बाद उसका अपना कौन है:-

जिनका पति बसे परदेस,
है से जीना ऐसे मरना ।

निर्धनता रूपी अभिशाप ग्रसित एक गृहिणी की दीनावस्था में भूख से तड़पते हुए अपने हृदय के भावों की अभिव्यक्ति कितनी मर्म स्पर्शी बन पड़ी है, जब वह अपने लाल को अन्तिम लोरी देती है :-

दूधो कियां पियाऊं ओ लाल ?
तन्ने कियां जियाऊं ओ लाल ?
दूध कड़े अब तन में म्हारे
मरणो मुझे जिवड़ो थारे
अब तक आसा कदे ना होई
पेट बच्यो पर कदे ना रोई
अब तो चूल्हे चढ़े ना दाल ।
दूध कियां[2] पियाऊं ओ लाल ?

स्तनों का दूध सूखना, सहनशीलता का बान्धटूटना, भोजन का स्वप्न बनना आदि व्यवस्थाओं में मातृत्व टूट कर रह जाता है । नारी जीवन का गरीबी से संघर्ष का कितना हृदय स्पर्शी चित्रण है ।

- - -- -

1- रखवाला।
2- कैसे ।

9- बांगरू लोकगीतों में प्राकृतिक चित्रण :-

बांगरू लोकगीतों में प्राकृतिक प्रतीक, अप्रस्तुत एवम् बिम्ब विधानों का कहीं कहीं चित्रण मिलता है चाहे वह प्राकृतिक चांद सितारे, वर्षा बादल इत्यादि रूप हों चाहे अप्राकृतिक कृषक के अपने उपकरण हों उनका वर्णन इन लोकगीतों में मिल जाता है। प्राकृतिक चित्रण इन गीतों में मिलने का कारण यह है कि प्राकृतिक सुषमा ग्रामीणों के लिए मात्र वर्णन की वस्तुएं ही नहीं है बल्कि वह उनकी चिर-परिचिता अभिन्न सहचरी भी है। प्राकृतिक के भीतर वे बसते हैं और उनके भीतर प्राकृतिक का आवास है। मानवीकरण का एक उदाहरण बादलों के माध्यम से :-

एक छोड़े वाला छैल बादलां की छाए छाए छां जा ।
तेरे छोड़े की पकड़ी लगाम ब गैल तेरे चालूंगी ।
मेरे हाथ में सवासण मार तेने रे मैंकाढूंगी ।
तेरी माता बूझे बात बेटा रे उदासी कुए खड़ा ।
माता हाथां में गूठी आज समुन्द्र मैंहे दे पड़ी । ...एक छोड़े

निम्नलिखित चित्र ढ़वनी गीत में झूलने वाली कन्याओं के बारे आभूषण और सोलह श्रृंगार की विविध छटा पर मोहित होने वाले गीत का संगीतमय एवं मनोहारी बिम्ब प्रस्तुत है :-

नान्ही नान्हीं बूंदिया मींहा[1] बरस रहया जी
हां जी कोए[2] च्यारू दिसा पड़े से फुहार
हां जी कोए सामण आया सूढ़ सुहावणा जी ।

1- मेह ।
2- गाने में हां का आं, है का ए हो जाता है ।

आलम्बन उद्दीपन, मानवीकरण तथा अन्य चेष्टाओं का वर्णन बागड़ लोकगीतों में उल्लेखनीय है। सावन के गीतों में काली डरावनी घटाओं के उठने और सफेद घटाओं के बरसने का ऋतु विज्ञान सम्बन्धी उल्लेखनीय है। पश्चिम में उठने वाली घटायें जो दूधियां अथवा तीतरपंख रंग की होती है जहां वहां बरसात की झड़ी लगती है " बरसाण लाग्यी रे काली बादली" काली घटाओं के बरसने का भी उल्लेख है किन्तु दूधियारे रंग के बादल वर्षा का अचूक लक्षण सिद्ध होते हैं। काली घटा विरह का उद्दीपन रूप प्रस्तुत है :-

क्यूं जी कोयल काला घटा डरावणी[1]
धोली[2]बरसण -हार।
क्यूं जी कोय, किंधट घटा माह उमगी।
किंधट[3] बैरसणहार।
क्यूंजी कोय आगनै घटा मारु उमगी[4]
पाछ्यी बरसणहार ।
क्यूं जी कोय, काले ते उड़ जेर के
उठ गए परदेस।
क्यूंजी कोय, आंक आंकनै मारु कह रह्या
ला दिए बारा[8] साल
क्यूं जी थारे छप्पर पुराणे[9]मारु हो गए
तड़कण लाग्ये बांस।
क्यूं जी थारे, उड़द पुराणें (पक्कें) हो गए
सूकण लाग्यी बेल
क्यूं जी थारी बोरी पुराणीं मारु हो गई
ढुलकण लाग्या रूप।

- -

1- डरावणी 2- सफेद 3- किस दिशा में 4- उठी
5- पूर्व दिशा 6- पश्चिम दिशा 7- आगमन 8- बारह वर्ष
9- छप्पर पुराने ।

बेले सूकने लगी यहां यह बेबसकरी देहवल्ल री अप्रस्तुत विधान का रूप है। प्राकृतिक चित्रण में " इमली" में लक्षणा है :-

कूंची ए लुगाई मस्ताई फागण मे ।
काची अंबली गदराई सावण[1] मे ।
किन छाला मस्ताई फागण मे
छोरियों री उस सुगर गेरे ने ।
कर मकुलावा ले जा फागण मे ।
छोरियों रे उस बहुआ म्हारी ने
पांच बरस गये हा 2 पीहर मे ।

यहां नवीनता, नववधुओं तथा किशोरियोंकी के रूप माधुरी ओर संकेत करती है। चन्ने और गेहूं से भरे खेत तथा यमना तट की निर्मल जलधारा का प्रवाहमान्त बहार की मादकता के प्रतीक है :-

दिल्ली तेरे गोरे रे छड़ या चणों का खेत
जमना जी के कांठे पे लहरया गीहूं का खेत ।•

कृषक के उपकरण और प्राकृतिक मेलजोल का विधान निम्नलिखित है :-

खेत काटती जाए अनमोल दराती लोहे की, ओएजी ---2
सर -सर सर- सर हवा चले और खेत मेरा लहराये
छर-छर- छर-छर चले दराती कट काट गिराये ।
खेत काटती जाए अनमोल ----------------।
आसमान में सूरज चमके धूप पड़े मदमाती ।
टप टप टप टप गिरे पसीने फिर भी चले दराती ।
खेत काटती --- जाये अनमोल -------- ।

1- सावण और फागण एक जैसी तासीर रखते हों।

10- <u>बांगरू लोकगीतों में राष्ट्रीय भावना:-</u>

यहां के जनमानस में सदैव से ही राष्ट्रीय भावना कूट -2 कर भरी हुई है । राष्ट्र की भावना का यहां सर्वोत्कृष्ट स्थान है । निम्नलिखित आल्हा वन्दना में राष्ट्रीय भावना का विशुद्ध स्वरूप एवम् सांस्कृतिक एकता का साकार चित्रण किया गया है जिसे सुनकर मनुष्य तन्मय हो जाता है ।

जय जय जननी, सब दुःख हरणी तारण तरणी पालनहार
शरण पड़्या सूं माता तेरी नैय्या मेरी लगादे पार
पूरब सुमरू कामच्छा नै उत्तर सुमरू श्री केदार
पच्छम सुमरू विंध्यावासिनी, दक्खन रामेश्वर सरकार
धौल गिरी की सुमर भवानी और बैलोन सारदा ध्याय
मैय्या सुमरूं गढ़ मैरठ की कलकत्ते की काली माय
चण्डी सुमरूं काश्मीर की जो भक्तां की करे सहाय
दुर्गे सुमरूं वाहिनी दाहिणी भुजा विराजे आय ।

अंग्रेजी के प्रति इसकी विरोधीभावना का रूप ठीक रामधारी सिंह दिनकर के "हिमालय" का ही रूप नजर आता है जिसके माध्यम से ही उन्होंने देशवासियों में चेतना का संचार किया है कि वे दासता के बन्धनों को तोड़ दें :-

इन हरियाणे के छोरे से देश धरम पै मिटणा आगे
अब तो सुत्ते[1] जाग पड़े अब देख सोय लाम्बा लागे
इन देखें और जुल्म ते तरियां[2] इब रोळा करेगा
या तो अपणे हाथ ने जाग्या या बिन मांगी मौत मरेगा ।

- -

1- सोना ।
2- प्रकार ।

राष्ट्रीय भावनासे ओतप्रोत एक अन्य गीत का स्वभाविक चित्रण बन पड़ा है :-

कभी दुनिया में ....[1]सूब डरया नही करते
जिनको है नही मरना आता उनको हर कोई त्रास दिखाता
भारत के वीर डरया नही करते . ....कभी दुनिया में ....
मौत से डरया करे वे पापी, जिन्होंने पाप करे हो काफी
माफी याचना वीर करया नही करते ...कभी दुनिया में...

यहां के अनेक गीतों में देशप्रेम देशभक्ति एवम् वीरता का चित्रण मिलता है । एक व्यक्ति अपने देश पर जान कुर्बान करने को किस तरह व्याकुल रहता है :-

भारत के भाग्य तूं, सोता क्यों जागता तूं
खेलो वा फाग तूं, भारत के भाग्य तूं

यहां जोगी, भाट्ट, सारंगीवाले गली-2 कूचे-2 में राष्ट्रीय भावना से भरे हुए गीत गाते रहे हैं :- एक नमूना :-

आज मातृभूमि को दुःखी देख भारत के वीर भड़क उठे
देश धरम जाति खात्तर घरबार बालक कुनबे छूटे
वा जालिम जगह याद आवे जड़े भगतसिंह फांसी डटे
आज मेरी आंख्यां में पाणी आग्या देख के भारत का दीण

अंग्रेजों के प्रति यहां की औरतों की विरोधी भावना का एक तुलनात्मक राष्ट्रीय चेतना जागृत करने वाला लोकगीत :-

हे म्हारे अंग्रेजों की छोहड़ी रहवें बाकों अंगना में
हे म्हारे देस की छोहरी डोब दी दस कुएं दांती नै
हे अंग्रेजों के छोहरे पीवें दूध गिलासां में
हे म्हारे छोहरे झोंक दिए खाट्टी लाहसी ब नै ।

1- कोई नाम ।

चीन व पाकिस्तानों के साथ युद्धों में भी राष्ट्रप्रेम व बहादुरी के गीतों के माध्यम से नौजवानों को प्रेरित किया जाता रहा है :-

कर देश की रक्षा बाल लाल मेरी सबहाज के
वैरि दल में सीमाएं घेरी, चारों ओर से आके घेरी
क्या इसका नहीं ख्याल....लाल मेरे सब ध्यज के
जिस दिन के लिये तने दूध पिलाया वो आज लाड़ले आया ।
करके दिखा कमाल लाल मेरे सबहाज के ।

नन्ही सी बालिका का हृदय भरी राष्ट्रप्रेम वह अपने देश के लिए लड़ने को आतुर रहती है :-

मैं चीन से लड़ने जाऊंगी मानूं ना मेरी मां ।
मैं भी दो हाथ दिखाऊंगी, मानू ना मेरी मां ।।

और एक अन्य गीत :-

देश की रक्षा करन खातर मरते देश दिवाने
आज वीर बलवान यहां पर जाते है पहचाने
रखनी है लाज देश क। चलो भाई सीमार पर ----

राष्ट्र को समर्पित राष्ट्रीय भावना :-

गर्दन नीची कर ले हो हो जयहिन्द की माला घालूं
वैदिक धर्म निभाऊ हो हो पतिव्रता नार कहाऊं
सुसरे की धोती धोऊं और सासु के पैर दबाऊं । ..गर्दन नीची
पति को देश की रक्षा खातिर भेजूं सेना में
और मैं भी देश सेवा खातिर जान अपनी कुर्बान करूं । ..गर्दन नीची

- -

उपलब्ध बांगड़ लोक गीत एवम् उसका विवेचन

अभिलाषा

छैल मैल्या[1] आंग्यी बाजणा दे मेरा नाड़ा[2] (3)[3]
नाड़ा मेरा भारी दूर का जाणां... मैं छैल मैल्यां (3)

दामणा मेरा भारी दूर का जाणां ....मैं छैल मैल्यां

चुनरी मेरी भारी दूर का जाणां ... .मैं छैल मैल्या
गठड़ी मेरी भारी दूर का जाणां ..... मैं छैल मैल्यां
पायल मेरी भारी दूर का जाणा .... मैं छैल मैल्यां
जूती मेरी भारी दूर का जाणां ... मैं छैल मैल्या
मैं छैल मैल्या आंग्यी बाजणा दे मेरा नाड़ा ।

(श्रृंगार रस)

2. बाल्हा श्रृंगार

हे सासू बड़िया सी मंगा दे साड़ी
मैं चक्कर काटूं[4] छड़ी छड़ी ।
हरिया 2 कब्जा मंगा दे
हाथ के मंगा दे टैम हाड़ी[5] ।
हे बहूबड़ मेरा लाल गया परदेस
किस ते मांगूं मैं टैम हाड़ी ।
हे री सासड़ बंगला तिलियां किवाड़[6]
भजन करूं मैं तो बहु बहूं[7] ।

(श्रृंगार रस)

1- साथ । 2- किंकनी । 3- तीन बार आवृत्ति के लिए ।
4- नाचना । 5. समय बताने वाली घड़ी । 6. घास फूंस से तिनकों द्वारा बनी हुई । 7. यह ऋतु का समय उल्लास और नृत्य का है परन्तु श्रृंगार के प्रसाधन न होने पर तो वैरागी हो जाना ही अच्छा है ।

3- तेरा तालीलालू

एक पतली बूढ़ काकणी है वा देख काम छमरावे से ।
उसकी सासू तेरा ताली है वा बाधी राम कमावे से ।
गोरी तुम लावा कम पिस्सां रै हमने गेरे अंधेरी[2] आवे से ।
मेरी सासू तेरी ताली[3] है बाटकी क वाल पकवाने से ।
वा चुती पहर के वाली है डेरा मैं सूरा सिखाया से ।
न तूं लांवे छोरा पिस्से हो थोरे घर मैं मथा सलीका[4] से ।
तूं बाजी जा बदमास रांड क्यूं हद की क्या उड़ावे से ।
बहू किसा? थारे छोरा पिस्सा रै कुन बखत पे दिखावे से

[हास्य रस]

4- तकरार

पेटी खोल दिखा हो पेटी मैं के ले रखा है ।
पेटी नहीं खुलेगी रै पेटी मैं नार दूसरी से ।
मैं तेरी के लागूं तूं हो ब्याही से नार दूसरी ।
तूं मेरी बेब्बे लागे से रै ब्याही से नार दूसरी
बालक नाना देखो हो कदे भात भरण नै नाटे से । पेटी खोल
मैं तरा करूंगी आरता हो कदे पाछे पर तेरा उतर जा नै
तूं मेरी गोरी लागे छोड़ूंगा नार दूसरी है ।
पेटी कब खुलेगी रै पेटी मैं सूट रेशमी पावैं से । ... पेटी खोल

[हास्य रस]

1- पशु 2- अंधेरा ।
3- परेशान करनेवाली ।
4- तरीका ।

5· कन्द का दामण

है मेरा कन्धा का दामण भारया है
कुन्दड़ी पै पाट रहया वाला
नोकर क म्याद का बीर छोरियाँ लागि ना जीया
है कद की दूखँ नाट महल मैं आये ना पिया ।
है मैं दूसर लेके आई नेगा मैं आन रही त्याई
नीर पाटता आवे छोरियाँ हटता ना हिया ।
है दे कद की देखूं नाट आए ना पिया ।
है तीजां का त्योंहरा बड़ा भारी
गावैं गीत सजी सारी कबूर गावैं गीत जीया
कद की देखूं नाट महल मैं आवे ना पिया ।
है जाता ● नां जाया बेले जैसा मेरा
वो देखा जोगा छोरा वो क्यूंकर न्यारा होया
मैं कद की देखूं नाट आवे ना पिया ।

[वियोग शृंगार रस]

6- सौन्दर्य

बाग मैं पोसत की डाली है कोय ले गया काढ़ गिरी ● ने
जब न रे बाग मैं जाऊणा जाणा फूल चमेली का चमकण लाग्या
कदे तैं नेगण तोडूं फूंदा करता है कोय ले गया कूड़ मेरी ने
बाग मैं पोस की डाली·····
जब रे रसोई मैं जाऊणा लाग्या चमटा रै पलटा चमकण लाग्या
कदे ते नेगा दूध जमाया करती कोय ले गया दूर मेरी ने
बाग मैं पोस्त की डाली ····

[शृंगार रस]

- -

7- आभूषण शृंगार
=========

मेरी पतली कमर, नारो झुब्बो दार लाय्यो
झुब्बो दार लाय्यो जी• करेली दार लाय्यो
मेरी पतली •• ••••
अबी तुम शहर बरेली जाय्यो• कछा सा सुरमा लाय्यो
लाय्यो अपने हाथ नाड़ा झुब्बे दार लाय्यो
मेरी पतली •••••••• ।
अबी तुम शहर बनारस जाइयो कछी मीसाड़ी लाईयो
लाईयो अपने हाथ नाड़ा झुब्बेदार लाईयो
मेरी पतली •••••••।
तुम मथुरा जी जाइयो, अरे मिठे पेड़ा लाय्यो
लाईयो अपने हाथ, नाड़ा झुब्बेदार लाइयो
मेरी पतली •• •• ।
[शृंगार रस]

8- भाव वैचित्र्य
========

बाजरा बुवा दयूंगी• तन्ने बैठा दूंगी रखवाल
आये ने कु न्यूंगी कड़े ग्वाई सारी रात
अरदा अरदा न्यूं बोले अ ढोलकी बजाई सारी रात
कीबजवाऊंगी तन्ने बिठा दयूंगी रखवाल
आये ने कु नयुंगी कड़े ग्वाई सारी रात
अरदा 2 न्यूं नाेजे ढोलकी बजाई सारी रात

[हास्य रस]

9-जीत लिया भरतार

हे हन्टा का जम्फर ल्याई, हे मिन्टा की ल्याई सिलवार
चान्दी का कन्ठा ल्याई, हे पीतल की ल्याई कलियारा
सोने की बोडी ल्याई, हे मन्ने देखै सारा संसार
तास्से की ढक्कनी ल्याई, हे मेरे छैला आये भरतार
कोठे पै दहला मारये हे मन्ने जीत लिया भरतार ।
छोरे में बैठकर रोया रे कोय मत बताईयो स्यासरा कू नार
छोरियां मैं बैठकर मैं हंसी हे मन्ने जीत लिया भरतार
गोरी हट पै बाजी लागै रै मेरा और कड़े था ध्यान
सेजां पै बाजा मारयां हे मन्ने जीत लिया भरतार ।

(हास्य रस)

10- पढ़न आली नार

पढ़न आली कमाल से बूढ़ मटक्के सा चाल से
हलवा पूरी खा जाईये
गर्म पसीना ले लागै म्हारे रंग महल मैं आ जाईये ।
फेल होने से डरिये मत ना
पर्चा फस्ट बणा देगें ।
काढ़ै मास्टर ने नार पहला नम्बर ल्या देगें
म्हारे रंग महल मैं आ जाइये ।
अब कालेज मैं पढ़न जा रही जा ।
मोड़ी सिंगारा मत करीये
आप पाटूजा कदे छोरिया मे
थंडा महल का ताज गर्म कर करिये
म्हारे रंग महल मैं आ जाइये ।

(श्रृंगार रस)

- - - - - - - - - - - - - - - - - -

"11"

उपालंभ-गीत

जब[1] साजन ए परदेस गए, मस्तान्नां फागण क्यूं आया ।

जब सारा फागण बीत गया, तै[2] घर मैं[3] साजन क्यूं आया ।

छम छम नाचैं सब नरनारी, मैं क्यूं बैठी दुखां की मारी ।

मेरे मन मैं जब मचा अंधेर, तै चान्द का चांदणा क्यूं आया ।

जब पीया आया, जी खिल्या नां जब जी आया पी मिल्या नां ।

साजन बिन जोबन क्यूं आया, जोबन बिन साजन क्यूं आया ।

मन की तै अरथी उठी पड़ूथी, आख्यां मै लागी हाय झड़ी ।

जब मेरे मन का फल सूख्या[4], मस्तान्या फागण क्यूं आया ।

[विप्रलंभ शृंगार]

12

भारत का शेर

भारत के भाग्य तू, सोता क्यूं जाग तू ।

भारत की एक बहादुर बेटी लक्ष्मीबाई झांसी

उलट पुलट किया कत्ल सांडरस वीर भगत चढ़े फांसी,

खेल वो आग तू, भारत के भाग्य तू,

इस कोने से उस कोने तक हुई दुनिया मै हलचल,

कलकता देखा पेशावर जा लिया पेशावर से काबुल,

नेता सुभाष तू, भारत के भाग्य तू ।

[वीर रस]

1- जब 2- तुम 3- मैं 4- सूख गया ।

(13)

विरह की आग

उसे फिर मिलादो सखियो जो काल मिला था बाग में,
मै इसे जल्दी बुझाऊ जल गैर है मै जलूं विरह की आग में।

वो छला मेरे मन में भागया बहम लगा है कहै फिर गया,
वह परदेसी हद कर गया मै उसी के विराग में ।।

मै उसकी वो मेरा साजन होगा दो शरीरा का एक मन होगा,
जो वो कद सी दिन होगा खेलूंगी होली फागण में ।।

काया में कर सूले उठे, ज्यों तपता जेठ बबूल उठे,
मेरे इसे उठूले उठे ज्यु विष कमलाके नाग में ।।

(वियोग शृंगार)

(14)

शरम

लिखी पढ़ी लड़की के किस्मत मैं कमी बताई
पढ़ रही सोलह जमात मैं, हाली लोग के ब्याही
रोटटी ले के गई खेत मैंह ब जाणू नां खेत की राही
किसके आगे जिकर करूं ऐ मेरी सगी नणद का भाई
ह्यो ले-ड्योले फिक भूरमती मैं बहोत घणी शरमाई
साटे मांदूये[1] दो ऐ बार मे सुबक सुबके[2] रोई --लिखी पढ़ी लड़की---
म्हारा जुलम करे सो हाली गुण गावणिया कोन्या
मै तो टोहलू खेल दूसरा तने ब्याहणियां कोन्या
पन्दरा सोलह जमात पढ़ रहा भाणा मन्ने उसके साला छाली
हालीबोत्या मन्ने छोड़ जिरगयी याद करे कनियां..ब लिखी पढ़ी लड़

(शृंगार रस)

1- रस्सा 2- अधिक रोना ।

{15}

याणा बालम

पिया मारै मतणा काच्चे जो बांस की पोरी
पिया मैं मर ज्यागीं --[1]--तुम्हारी
गोरा केसह मरज्या होरी सौलग्न की तैयारी
ओड़ पहर याणी ने वा त्यां रस्ते मैं सोह सुनारी--पिया मारै मतणा--
छेब्बे बालम याणा[2] जिस पै डाट लाई
तेरी याणा लागै राछे से चार लुगाई
दो छलचा राछे से ब दो सोह सुनारी--पिया मारै मतणा--

{हास्य रस}

{16}

करणी भरणी

कच्चा धागा नकली मणियां झूठी राम सुमरणी
किसी की निंदा किसी की चुगली कैंची जेब कतरणी
ओ अभिमानी तेरे जुल्म तै कांपण लागी धरती
जैसी करणी वैसे भरणी फेर भगवान के करै ।

वायदा करके भूल गया तू अटल वचन पै रहा नहीं
सदा कुसंग के साथ फिरा कदे सत्संग मां गया नहीं
ए नर बेईमान तेरा भी ठियां[3] ठिकाणा नहीं ।
जिस दिल के भीतर दया नहीं वो भगवान के करै ।।

{जीवन दर्शन}

- -

1- कोई नाम 2- अल्प आयु का 3- निवास स्थान ।

उपसंहार

परम्परा से अनुश्रुत जन जन में व्याप्त बांगड़ लोक साहित्य सबल एवम् समृद्ध है। इसकी विभिन्न विधाओं में लोकगीत, कथात्मक गीत सांग परक गीत, प्रकीर्ण साहित्य- कहावतें, पहेलियां, चुटकुले, सूक्तियां आदि का समावेश है।

बांगड़ लोकगीतों को आठ वर्गों में -संस्कारगीत, ऋतुगीत, देवीदेवता-व्रत एवम् त्योहारों के गीत, कृषिगीत, बालगीत, क्रियागीत राजनीति सम्बन्धी तथा विभिन्न विविध गीतों में विभक्त किया जा सकता है। अन्य अवसरों एवम् विषयों से सम्बन्ध गीतों की तुलना में यहां संस्कार गीतों की विपुल राशि विद्यमान है और काव्यत्व की दृष्टि से भी इनकी विशेष महत्ता है। बांगड़ लोकगीतों में "जीवन के प्रमुख संस्कारों, पर्वों तथा धार्मिक अनुष्ठानों, ऋतुओं, व्यवसायों अथवा आजीविका के साधनों और उत्पन्न मानसिक भौतिक प्रतिक्रियाओं का चित्रण हुआ है। पारिवारिक सम्बन्धों का स्वरूप एवं दिशा बोध भी इनमें केन्द्रित हुआ है। ग्रामीण-समाज के व्यवहार, आचार विचार, नीति-अनीति तथा जीवन दर्शन पर भी बड़ा प्रकाश डालने वाली सामग्री इनमें अन्वेषणीय है। पुरुष और नारी मनोविज्ञान के संकेतों की भी लोकगीतों में कमी नहीं है कहीं पर तो स्वच्छन्द प्रेम के वर्णन श्लीलता की सीमा का उल्लंघन करते प्रतीत होते हैं। मन के भावों के दुराव को यहां अश्लील माना जाता है। भीतर वाले अथवा अन्तःकरण की बात कहने में संकोच क्या करना? स्पष्टोक्ति के द्वारा अश्लील भी श्लील हो जाता है। नारी शृंगार, मान विरह, आशा, आकांक्षा, चाव, भाव, राग द्वेष, वस्त्राभूषण प्रेम आदि का परिचय इन गीतों में सहज ही सुलभ हो जाता है। नीति,

---

भक्ति और महापुरुषों के जीवनादर्श तथा शूरवीरों की वीरता का स्तवन करने वाले गीतों की संख्या भी बेशुमार है।"¹

सावन के गीतों में जहां एक ओर संयोग वियोग श्रृंगार जनित गीतों की छटा देखने को मिलती है वहां विभिन्न सम्बन्धों के पावनतम प्रेम से अनुस्यूत गीतों की छटा अपनी निराली आभा विकीर्ण करती है। इन में मनोवैज्ञानिक तथ्य, ऋतुविज्ञान सम्बन्धी उल्लेख एवम् वातावरण की अनुभूति मिलती है। फागुण के गीतों में विशेष उत्साह एवं मस्ती पूर्ण गीतों में श्रृंगार गीत भी मिलते हैं। जो लोकमानस की तरल भावना की स्वाभाविक अभिव्यंजना करते हैं। सावन के गीतों में जहां संगीत की प्रधानता है वहां फागुण और होली के गीतों में नृतय एवं नाटकीयता की गति प्रबल रहती है बारह मासियों में विरह व्यंग्य मल्हार गीतों में विरह की प्रधानता की अनुभूति है। आसोज और कार्तिक के गीतों में आध्यात्मिकता की प्रधानता के कारण उनमें जीवन दर्शन की स्पष्ट छाप झलकती है। कृषिगीतों में किसानों के सुख दुःख बालगीतों में बालकों की क्रिड़ायें, क्रिया गीतों में तर्क, अनुभूति, नृतयएवम् संवादों की प्रचुरता प्राप्त होती है। राजनीति सम्बन्धी गीतों में राजनीति पक्ष एवम् विविध गीतों में सोरठा आदि गीतों को उभारा गया है।

यहां के कथात्मक गीतों में {आल्हा, पंवाड़े, साके आदि} मिलते हैं यहां के कथात्मक गीतों के नायकों को अलौकिक पुरुष न मान कर लौकिक रूप में ही अभिहित कियाजाता है।" अतः कथात्मक गीतों के अनेक सुनहले संदर्भों को समेटने वाले गीतों का नाद यहां सुनाई देता है। निहालदे, गूगा-पीर, जैमल फत्ता, भूरा बादल, हरफूल जाट जुलाणी का इत्यादि पर आधारित प्रबन्ध शैली के कथा गीतों की परम्परा हरियाणा में दूर्वादल की श्रृंखलाओं की तरह लोक मानस में से फूटती चली आई है।

1- हरियाणा के लोकगीत सांस्कृति मूल्यांकन लेखक डा० भीम सिंह पृ०6

अभय भावना , निर्भयता, वीरता और सुरक्षा की भावना में हमारे प्राचीन जीवन का प्रथम प्रश्न निहित था सो आज भी और आगे भी रहेगा ।"[1]

यहां उपलब्ध लोक कथाओं की संख्या भी काफी है । इनमें जाति स्वभाव के चित्रणों में नाई, बनिया, ठाकुर आदि को क्रमशः चालाक, डरपोक, मूर्ख के रूप में चित्रित किया है । उसके साथ साथ प्रायः सभी जातियों के स्वभाव का मनोरंजनात्मक चित्रों का प्रस्तुतिकरण प्राप्त है । जहां पशु पक्षियों की मनुष्य की तरह बोलचाल, कार्य कलापों के दर्शन होते हैं वहां परियों एवम् दानवों की कथाओं में अलौकिकता पूर्ण एवम् अद्भुत कार्य-व्यापारों का चित्रण पाया जाता है । प्रत्येक वर्ग की लोक कथा में अलौकिक तत्वों का समावेश अवश्य पाया जाता है ।

"यहां के लोक साहित्य में सांस्कृति और समाज शास्त्रीय सामग्री की अतुल निधि भरी पड़ी है जिसका संदोहन और जांच परख करने से हमें अतीत की झलक और भी साथ साथ दिखाई देने लगती है । सांस्कृतिक इतिहास का जितना वास्तविक निरूपण इन लोक साहित्य की विधाओं में हानबीन द्वारा प्राप्त होता है उतना अन्य स्रोतों द्वारा शायद ही संभव हो ।[2] बल्कि लोक साहित्य का काव्यशास्त्रीय पक्ष भी काफी सशक्त एवंम् समृद्धि शाली बन पड़ा है । उसके साथ साथ इनमें स्वाभाविकता एवम् मार्मिकता जीवनदर्शन, श्रृंगारता नारी चित्रण, राष्ट्रीयभावना प्रकृति चित्रण का वर्णन भी सबल साहित्यक आधार प्रदान करता है ।

1- हरियाणा के लोकगीत सांस्कृतिक मूल्यांकन लेखक डा० भीमसिंह पृ० 7
2- हरियाणा के लोकगीत सांस्कृति मूल्यांकन लेखक डा० भीमसिंह पृ० 9

प्रकीर्ण साहित्य के विविध अंग जिनमें- कहावतें, चुटकुले, मुहावरें, पहेलियां एवं सूक्तियां आती हैं। ये यहां के व्यावहारिक जीवन में समाये हुए प्रतीत होते हैं। इनका संचय भी समृद्ध है। बांगड़ में प्राप्त होने वाले लोक गीत, कथात्मक गीत एवं लोक कथाओं में जहां भावना और कल्पना तत्व की उपलब्धि है वहां कहावतों एवं पहेलियों में बुद्धि तत्व की प्रधानता विद्यमान है। मुहावरों में लक्षणा और अभिव्यंजना, चुटकुलों में मनोरंजकता तथा सूक्तियों में नीति तथा दर्शन का समावेश दृष्टिगोचर होता है।

सांग परक गीतों में प्रेम तत्व की प्रधानता, गुरु भक्ति की प्राथमिकता जहां लक्षित है वहां उन पर सूफी प्रभाव भी है। इन्हीं गीतों में आध्यात्मिक वाद का सार भी निहित है।

बांगड़ लोक साहित्य भौगोलिक, सामाजिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक धार्मिक आदि सभी रूपों में व्याप्त है जो इसके सबल पक्ष की झलकी प्रस्तुति करता है। और यहां उपलब्ध सामग्री इस तथ्य को प्रमाणित करती है।

निसन्देह बांगड़ लोक साहित्य की परिधि जीवन और संस्कृति के हर पहलू का संस्पर्श करती है।

०-----०------०

"सहायक ग्रन्थ सूची"

1- हिन्दी :-

1- भाषा विज्ञान - डा० भोला नाथ तिवारी
किताब महल, इलाहाबाद । 1969.

2- ग्रामीण हिन्दी बोलियां- डा० हरदेव बाहरी
किताब महल, इलाहाबाद। 1966.

3- पश्चिमी हिन्दी बोलियों की व्याकरणिक कोटियां
लेखक डा० कैलाश नाथ शुक्ल
प्रमोद पुस्तकालय, इलाहाबाद। 1973.

4- भारत कीभाषाएं और भाषा सम्बन्धी समस्यायें
डा० सुनीति कुमार चटोपाध्याय
हिन्दी भवन, इलाहाबाद । 1951.

5- हिन्दी पर्यायों का भाषागत अध्ययन
लेखक डा० बदरी नाथ कपूर
हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग । 1965

6- हिन्दी और उसकी विविध बोलियां
लेखक प्रो० दीप चन्द जैन, डा० कैलाश तिवारी
मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल । 1972

7- हरियाणवी भाषा का उद्गम एवम् विकास
लेखक डा० नानक चन्द शर्मा
विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थानम् होशियारपुर । 1968

8- बांगरू बोली का भाषा शास्त्रीय अध्ययन
लेखक डा० शिव कुमार खण्डेलवाल,
वाणी प्रकाशन दिल्ली । 1980

- -

9- हरियाणा की उपभाषाएं
भाषा विभाग हरियाणा चण्डीगढ़ द्वारा प्रकाशित ।

10- हिन्दी उद्भव, विकास और रूप
लेखक डा० हरदेव बाहरी
प्रथम संस्करण ।

11- हिन्दी साहित्य का वृहद इतिहास 16वां भाग
राहुल सांकृत्यायन, डा० कृष्ण देव उपाध्याय

12- पालिसाहित्य का इतिहास
श्री भरतसिंह उपाध्याय सम्वत् 2008

13- हरियाणा का इतिहास
लेखक श्री राम शर्मा
हरियाणा सेवा आश्रम रोहतक । तृतीय संस्करण 1974

14- लोक साहित्य का अध्ययन
लेखक डा० एस०एल०श्रीराम अनन्त
सरन प्रकाशन मन्दिर मेरठ ।

15- लोक साहित्य का आलोचनात्मक अध्ययन
लेखक श्री जगदम्बा प्रसाद पाण्डेय
न्यू शिशिलिंग अमीनाबाद लखनऊ ।

16- हरियाणा प्रदेश का लोक साहित्य
लेखक डा० शंकर लाल यादव
हिन्दुस्तानी एकेडमी इलाहाबाद । 1960

17- ब्रज लोक साहित्य का अध्ययन लेखक
लेखक डा० सत्येन्द्र
साहित्य रत्न भण्डार आगरा । सन् 1949

- - ---- -

18- कन्नौजी लोक साहित्य
लेखक डा० सन्तराम अनिल
अभिनव प्रकाशन 21-ए दरियागंज दिल्ली । 1975

19- कुमाऊँ लोक साहित्य मे
लेखक पदम चन्द्र काश्यप
नेशनल पब्लिशिंग हाउस 23, दरियागंज दिल्ली । 1972

20- लोक साहित्य और पावरी भाषा
लेखक डा० एन॰बी॰बाहरी
37/50 गिलिस बाजार कानपुर ।

21- भोजपुरी लोक साहित्य का अध्ययन
लेखक डा० कृष्ण देव उपाध्याय
हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय काशी ।

22- कश्मीर का लोक साहित्य
लेखक श्री मोहन कृष्णादर

23- खड़ी बोली का लोक साहित्य
लेखक डा० सत्या गुप्ता

24- निमाड़ी और उसका लोक साहित्य
डा० कृष्ण लाल हंस
हिन्दुस्तान एकेडेमी इलाहाबाद । 1960

25- छत्तीसगढ़ी लोक साहित्य का अध्ययन
लेखक दया शंकर शुक्ल
ज्योति प्रकाशन रायपुर (म॰प्र॰) 1969

26- भारतीय लोक साहित्य
लेखक डा० श्याम परमार ।

27- लोक साहित्य की भूमिका
लेखक श्री सत्यव्रत अवस्थी ।

- -

28- लोक साहित्य विज्ञान
लेखक डा० सत्येन्द्र

29- मध्ययुगीन लोक साहित्य का तात्विक अध्ययन
लेखक डा० सत्येन्द्र ।

30- साहित्य
लेखक रविन्द्र नाथ ठाकुर
प्रभात प्रकाशन दिल्ली ।

31- हरियाणा के लोकगीत
श्री एम०एस०रण्धावा- श्री देवी शंकर प्रभाकर
अतर चन्द कपूर चन्द एण्ड सन्स दिल्ली । 1953

32- हरियाणा के लोकगीत
सम्पादित डा० नानक चन्द शर्मा-श्री सोमदत्त बंसल
भाषा विभाग हरियाणा चण्डीगढ़ द्वारा प्रकाशित ।

33- हरियाणा के लोकगीत : सांस्कृतिक मूल्यांकन
लेखक डा० भीम सिंह मलिक
आर्य बुक डिपो करोलबाग दिल्ली । 1981

34- हरियाणा के लोक गीतों का संग्रह
लेखक नादान हरियाणवी
देहाती पुस्तक भण्डार,दिल्ली ।

35- राजस्थान के लोकगीत
लेखक डा० सूर्यकरण पारीक
हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग । सम्वत् 1999

36- बारह महीनों के व्रत और त्योहार
लेखिका चम्पादेवी राजगढ़िया ।

- -

37- हंसता गाता पंजाब
लेखक श्री नरेन्द्र धीर
आशा प्रकाशन गृह करोल बाग नई दिल्ली ।

38- राजस्थान के रीति रिवाज
लेखक श्री सुखदेव सिंह गहलोत
हिन्दी साहित्य मन्दिर जोधपुर । 1976

39- हिन्दू संस्कार
लेखक राजबली पाण्डेय

40- पंजाब की संस्कृति और साहित्य
लेखक श्री सबरजीत सिंह
नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली ।

41- हरियाणवी लोकोक्तियां:- शास्त्रीय विश्लेषण
लेखक प्रो० जयनारायण वर्मा
आदर्श साहित्य प्रकाशन दिल्ली 1972

42- राजस्थानी कहावतें
लेखक डा० कन्हैया लाल सहल
बंगला हिन्दी मण्डल कलकत्ता । 1960

43- हरियाणा : एक सांस्कृतिक अध्ययन
लेखक श्री देवी शंकर प्रभाकर
उमेश प्रकाशन 5 नाथ मार्केट दिल्ली । 1974

44- हरियाणा : एक सांस्कृतिक अध्ययन
लेख भाषा विभाग हरियाणा चण्डीगढ़ द्वारा प्रकाशित ।

45- ऋग्वैदिक आर्य : ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन
किताब महल इलाहाबाद । 1957

- -

46- मानव और संस्कृति
लेखक डा० श्यामाचरण दुबे

47- लोक कथाओं के कुछ रूढ़ तन्तु
लेखक डा० सहल [मानुष]

48- लोक कथा विज्ञान

श्रीचन्द जैन
मंगल प्रकाशन गोविन्द राजियों का रास्ता जयपुर 1977 ।

49- खोल गढ़ की लोक कथाएं
लेखक श्री चन्द्र जैन

50- नाथ सम्प्रदाय
लेखक श्री हजारी प्रसाद द्विवेदी ।

51- हरियाणा के कवि सूर्य पं० लख्मीचन्द
लेखक श्री कृष्ण चन्द्र शर्मा

52- जादू पैदी
लेखक राजा राम शास्त्री
हरियाणा लोक मंच प्रकाशन
74, यू०वी०जवाहर नगर, दिल्ली । प्रथम संस्करण सम्वत्2023

53- माधव विनोद
लेखक डा० सोमनाथ गुप्त

54- पद्मावत
लेखक मलिक मोहम्मद जायसी

55 कबीर ग्रन्थावली

लेखक कबीर दास

- -

56- हास्यार्णव
लेखक श्री कुंवर जी अग्रवाल काशी द्वारा मुद्रित प्रति ।

57- सांगीत: एक लोक नाट्य परम्परा
लेखक श्री राम नारायण अग्रवाल
राज पाल एण्ड सन्स कश्मीरी गेट दिल्ली 1976 ।

58- हरियाणा लोकमंच की कहानियां
लेखक राजा राम शास्त्री
वाराणसी । 1958

59- हरियाणा के पथ प्रदर्शक सन्त
भाषा विभाग हरियाणा, चण्डीगढ़ ।

60- हरियाणवी सन्तों की हिन्दी को देन
भाषा विभाग हरियाणा चण्डीगढ़ ।

61- हरियाणवी सांगों का वस्तुपरक विश्लेषण
भाषा विभाग हरियाणा चण्डीगढ़ ।

62- मनोविज्ञान और जीवन के
लेखक लालजी रामशुक्ल
साहित्य -सेवक कार्यालय जलिलादेवी वाराणसी । 1956

63- अशोक की धर्म लिपियां [प्रधान_शिलाभिलेख]
सं० गौरी शंकर हीराचन्द ओझा; श्याम सुन्दर दास

64- कविता कौमुदी [भाग 3,5]
लेखक पं० राम नरेश त्रिपाठी

65- विनय पत्रिका गोस्वामी तुलसीदास

66- राम चरित्र मानस गोस्वामी तुलसीदास

- -

67- हरियाणा लोकगीतों की धरती
लेखक श्री देवी शंकर प्रभाकर उमेश प्रकाशन दिल्ली। 1974

68- हरियाणा लोक कथाएं और कहावतें
लेखक देवी शंकर प्रभाकर
उमेश प्रकाशन नाथ मार्केट दिल्ली 1974

69- हरियाणा लोक नाट्य एवम् लोक मंच
लेखक श्री देवी शंकर प्रभाकर
उमेश प्रकाशन नाथ मार्केट दिल्ली 1974

70- हरियाणा लोक गाथाएं
लेखक श्री देवी शंकर प्रभाकर
उमेश प्रकाशन नाथ मार्केट नई दिल्ली 1974

71- हरियाणा की लोक कथाएं दिल्ली 1974

72- हरियाणा के मेले
लोक सम्पर्क विभाग हरियाणा ।

73- लोक मानस और लोक गाथा
लेखक श्री डा० कृष्ण कुमार शर्मा

74- हरियाणा के नव रत्न
लेखक श्री राम शर्मा
हरियाणा सेवा आश्रम, रोहतक 1966

75- हिन्दुओं के व्रत और त्योहार
लेखक राम प्रताप शास्त्री, इलाहाबाद 1959

पंजाबी :-

76- पंजाबी दे लोक गीत
लेखक एम॰एस॰रन्धावा

- -

हिन्दी पत्र पत्रिकाएं :-

77- जन साहित्य
लोक मानस विशेषांक परिवार
हरियाणा संवाद
नन्हेतारे
आजकल
सम्मेलन पत्रिका (लोक संस्कृति विशेषांक)
जनपद

लेख :-

78- हरियाणेकी भाषा
लेखक श्यामदत्त शर्मा
भाषा विभाग पंजाब की 1958 की लेखा गोष्ठी में पढ़ागया
निबन्ध ।

79- सांग की रचनात्मक संरचना
लेखक डा० जादेव सिंह
भाषा विभाग पंजाब की 1962-63 की लेखक गोष्ठी में
पढ़ागया लेख ।

80- पंजाबी ते हिन्दी
लेखक डा० हरदेव बाहरी
भाषा विभाग पंजाब 1958-59 कीलेखक गोष्ठी में पढ़ा गया
लेख

81- लोक कथाएं और इनका संग्रह
लेखक डा० वासुदेव शरण अग्रवाल का लोक कथा अंक
मई 1954 ।

- -

संस्कृत:-

82- अथर्व वेद

83- श्रीमद् भगवद्गीता

84- मनुस्मृति

85- ऋग्वेद

86- ऐतरोपनिषद

87- शतपथ ब्राह्मण

88- यजुर्वेद

89- महाभारत_ व्यास

90- तांड्य ब्राह्मण

91- ऐतरेय ब्राह्मण

92- शाट्यायन ब्राह्मण

93- नाट्य शास्त्र- भरतमुनि

94- रघुवंश -कालिदास

95- जैमनीय उपनिषद ब्राह्मण

96- याज्ञवल्क्य स्मृति

97- शिवपुराण

98- ब्रह्मपुराण

99- मत्स्य पुराण

100- हरिवंश पुराण

101- भागवत पुराण

102- वायु पुराण

ENGLISH

103	Linguistic Survey of Punjab	George Griersen
104	History of the Tribes and Caste of the punjab and N.W.F.P.	H.L. Rose.
105.	Folk Songs of India	Mukerjee
106.	Introduction of Folk Lore	M.R. Cox
107	A Descriptive Grammer of Bangru.	Dr. Jagdev Singh
108.	A Folk Lterature of Bengal	By D.C. Sain
109	Ine Akbari	Yadunath Sarkar
110	Encyclopedia Britania (1951 Edu.)	Vol.IX
111.	Imperial Gazetteer of India	Provincial Series Punjab 1980 edu.
112	Linguistic Survey of India	(1916 Edu) George Graersen
113.	Jattu Ghossary	By E.Joeph.
114.	Settlement Report on the Revenue of Hissar District (1863-64)	By Munshi Amin Chand)
115.	The legends of the Punjab	Sir R.C. Temple
116.	Old Ballad	Frank Sidgwick
117.	Epigraphia Indica	C.V. Vaidya

---

118 Introduction of American Folklore — Botkin.

119. A Hand Book of Folklore

120. Cities of Ancient India — B.N. Puri

121. ~~xxxxxxxx~~ Standard Dictionary of Folk Lore Mythology and legend — Maria Leech, Ed. ~~xxxxxxx~~

122. Ancient India — R.C. Majumdar.

123 The popular Religion and Floklore of an India — William Crooke.

124. Folk Dances of India — Altekar

125. The spirit of Ancient Hindu Culture — M.A. Buch

126. Haryana Through the Ages. — Parkash Budha

127. Glimpses of Haryana — —

128. Haryana General of Education — —

शिला लेख :-

129- दिल्ली के म्यूजियम बी-6 में रखा हुआ 600 वर्ष पुराना शिला लेख ।

130- पलन हैं की बावड़ी में से मिला 47 वर्ष पुराना शिलालेख ।

131- गुरु कुल झज्जर (हरियाणा) में रखे हुये अनेक शिलालेख ।

132- गुरु कुल झज्जर (हरियाणा) में रखे हुये अनेक हरियाणा सम्बन्धी मुद्राये एवम् पुरातात्विक क्षेत्र सम्बन्धी प्रमाण ।

================ इति ================

अन्य पुस्तकें

133- धीरे बहो गंगा [हिन्दी] श्री देवेन्द्र सत्यार्थी
134- बेला फूले आधी रात [हिन्दी] श्री देवेन्द्र सत्यार्थी
135- धरती गाती है [हिन्दी] श्री देवेन्द्र सत्यार्थी
136- पृथ्वी पुत्र [हिन्दी] डा० वासुदेव शरण अग्रवाल
137- हरियाणवी गीता [हरियाणवी] डा० नानकचन्द शर्मा
138- सुदामाचरित्र श्री नरोत्तम कवि
139- भाण पादताडितकम् [संस्कृत]
140- अष्टाध्यायी पाणिनि जी
141- रैलिक्स आव एंशियन्ट इंगलिश पोइट्री [अंग्रेजी] विशप पर्सी
142- ओल्ड इंगलिश बैलेड " " एफ० बी० गम्मेर
143- दी इंगलिश एण्ड स्काटिश पापुलर बैलेड्स " एफ० जे० चाइल्ड
144- इंगलिश बैलेड्स " राबर्ट ग्रेव्स
145- दी वे आफ बालाड " वाटर पौल्ड
146- इंगलिश एण्ड स्काटिश बैलेड " एफ० जे० चाइल्ड
147- दी फोकटेल " स्टिथ थामसन
148- फोक टेल्स आफ आल नेशन्स " एफ० एच० ली०
149- दी सोर्सेस आफ फेयरी टेल्स " एडविन सिडनी हार्टलैण्ड
150 डिक्शनरी आफ फोक लोर
151 आपटे डिक्शनरी
152 नेपाली शब्द कोश

-----------इति-----------

बांगरू लोकसाहित्य

[काशी विद्यापीठ की पी-एच० डी० उपाधि के लिए प्रस्तुत]
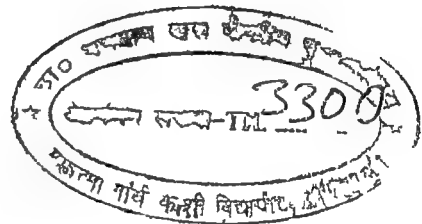
शोध-प्रबन्ध

(हिन्दी)

दिसम्बर

१९८२

शोध निर्देशक –

डा० रामजी शर्मा

एम ए पी एच डी

दैवज्ञवाचस्पति, साहित्य

नव्यव्याकरणाचार्य, साहित्यायुर्वेदरत्न,

प्राध्यापक-हिन्दी विभाग

काशी विद्या पीठ-वाराणसी

शोधकर्ता –

कैलाश चन्द शर्मा

नव कला मंदिर

बिचला बाजार भिवानी

(हरियाणा)

उपसंहार

परम्परा से अनुश्रुत जन जन में व्याप्त बांगड़ लोक साहित्य सबल एवम् समृद्ध है। इसकी विभिन्न विधाओं में लोकगीत, कथात्मक गीत सांग परक गीत, प्रकीर्ण साहित्य- कहावतें, पहेलियां, चुटकले, सूक्तियां आदि का समावेश है।

बांगड़ लोकगीतों को आठ वर्गों में -संस्कारगीत, ऋतुगीत, देवीदेवता-व्रत एवम् त्योहारों के गीत, कृषिगीत, बालगीत, क्रियागीत राजनीति सम्बन्धी तथा विभिन्न विविध गीतों में विभक्त किया जा सकता है। अन्य अवसरों एवम् विषयों से सम्बन्ध गीतों की तुलना में यहां संस्कार गीतों की विपुल राशि विद्यमान है और काव्यत्व की दृष्टि से भी इनकी विशेष महत्ता है। बांगड़ लोकगीतों में "जीवन के प्रमुख संस्कारों, पर्वोत्सवों धार्मिक अनुष्ठानों,ऋतुओं , व्यवसायों अथवा आजीविका के साधनों और उत्पन्न मानसिक भौतिक प्रतिक्रियाओं का चित्रण हुआ है। पारिवारिक सम्बन्धों का स्वरूप एवं दिशा बोध भी इनमें केन्द्रित हुआ है। ग्रामीण- समाज के व्यवहार, आचार विचार, नीति-अनीति तथा जीवन दर्शन पर भी अच्छा प्रकाश डालने वाली सामग्री इनमें अन्वेषणीय है। पुरुष और नारी मनोविज्ञान के संकेतों की भी लोकगीतों में कमी नहीं है कहीं पर तो स्वच्छन्द प्रेम के वर्णन श्लीलता की सीमा का उल्लंघन करते प्रतीत होते हैं। मन के भावों के दुराव को यहां अश्लील माना जाता है। भीतर वाले अथवा अन्त:करण की बात कहने में संकोच क्या करना ? स्पष्टोक्ति के द्वारा अश्लील भी श्लील हो जाता है। नारी शृंगार, मान विरह, आशा, आकांक्षा, चाव, भाव, राग द्वेष, वस्त्राभूषण प्रेम आदि का परिचय इन गीतों में सहज ही सुलभ हो जाता है।नीति,

भक्ति और महापुरुषों के जीवनादर्श तथा शूरवीरों की वीरता का स्तवन करने वाले गीतों की संख्या भी बेशुमार है।"[1]

सावन के गीतों में जहां एक ओर संयोग वियोग श्रृंगार जनित गीतों की छटा देखने को मिलती है वहां विभिन्न सम्बन्धों के पावनतम प्रेम से अनुस्यूत गीतों की छटा अपनी निराली आभा विकीर्ण करती है। इन में मनोवैज्ञानिक तथ्य, ऋतुविज्ञान सम्बन्धी उल्लेख एवम् वातावरण की अनुभूति मिलती है। फागुण के गीतों में विशेष उत्साह एवं मस्ती पूर्ण गीतों में श्रृंगार गीत भी मिलते हैं। जो लोकमानस की तरल भावना की स्वाभाविक अभिव्यंजना करते हैं। सावन केगीतों में जहां संगीत की प्रधानता है वहां फागुण और होली के गीतों में नृतय एवं नाटकीयता की गति प्रबल रहती है बारह मासियों में विरह व्यंग्य मल्हार गीतों में विरह की प्रधानता की अनुभूति है। आसोज और कार्तिक के गीतों में अध्यात्मिकता की प्रधानता के कारण उनमें जीवन दर्शन की स्पष्ट छाप झलकती है। कृषिगीतों में किसानों के सुख दुःख बालगीतों में बालकों की क्रिड़ायें, क्रिया गीतों में तर्क, अनुभूति, नृतयएवम् संवादों की प्रचुरता प्राप्त होती है। राजनीति सम्बन्धी गीतों में राजनीति पक्ष एवम् विविध गीतों में सोक्ण आदि गीतों को उभारा गया है।

यहां के कथात्मक गीतों में (आल्हा, पंवाड़े, साखे आदि) मिलते हैं यहां के कथात्मक गीतों के नायकों को अलौकिक पुरुष न मान कर लौकिक रूप में ही अभिहित कियाजाता है।" अतः कथात्मक गीतों के अनेक सुनहले संदर्भों को समेटने वाले गीतों का नाद यहां सुनाई देता है। निहालदे, गूगा-पीर, जैमल फत्ता, भूरा बादल, हरफूल जाट जुलाणी का इत्यादि पर आधारित प्रबन्ध शैली के कथा गीतों की परम्परा हरियाणा में दूर्वादल की श्रृंखलाओं की तरह लोक मानस में से फूटती चली आई है।

1- हरियाणाके लोकगीत सांस्कृति मूल्यांकन लेखक डा0 भीम सिंह पृ06

अभय भावना , निर्भयता, वीरता और सुरक्षा की भावना में हमारे प्राचीन जीवन का प्रथम प्रश्न निहित था सो आज भी और आगे भी रहेगा ।"[1] यहां उपलब्ध लोक कथाओं की संख्या भी काफी है । इनमें जाति स्वभाव के चित्रणों में नाई, बनिया, ठाकुर आदि को क्रमशः चालाक, डरपोक, मूर्ख के रूप में चित्रित किया है । उसके साथ साथ प्रायः सभी जातियों के स्वभाव का मनोरंजनात्मक चित्रों का प्रस्तुतिकरण प्राप्त है । जहां पशु पक्षियों की मनुष्य की तरह बोलचाल, कार्य कलापों के दर्शन होते हैं वहां परियों एवम् दानवों की कथाओं में अलौकिकता पूर्ण एवम् अद्भुत कार्य-व्यापारों का चित्रण पाया जाता है । प्रत्येक वर्ग की लोक कथा में अलौकिक तत्वों का समावेश अवश्य पाया जाता है ।

"यहां के लोक साहित्य में संस्कृति और समाज शास्त्रीय सामग्री की अतुल निधि भरी पड़ी है जिसका संशोधन और जांच परख करने से हमें अतीत की झलकें और भी साथ साथ दिखाई देने लगती हैं । सांस्कृतिक इतिहास का जितना आकर्षण निरूपण इन लोक साहित्य की विधाओं में छानबीन द्वारा प्राप्त होता है उतना अन्यस्त्रोतों द्वारा शायद ही संभव हो ।"[2] आगे लोक साहित्य का काव्यशास्त्रीय पक्ष भी काफी सशक्त एवंम् समृद्धि शाली बन पड़ा है । उसके साथ साथ इनमें स्वाभाविकता एवम् मार्मिकता जीवनदर्शन, श्रृंगारता नारी चित्रण, राष्ट्रीयभावना प्रकृति चित्रण का वर्णन भी सबल साहित्यक आधार प्रदान करता है ।

1- हरियाणा के लोकगीत सांस्कृतिक मूल्यांकन लेखक डा० भीमसिंह पृ० 7
2- हरियाणा के लोकगीत सांस्कृति मूल्यांकन लेखक डा० भीमसिंह पृ० 9

प्रकीर्ण साहित्य के विविध अव्यव जिनमें- कहावतें, चुटकुले, मुहावरें, पहेलियां एवम् सूक्तियां आती है । ये यहां के व्यावहारिक जीवन में समाये हुए प्रतीत होतेहैं । इनका संचय भी समृद्ध है। आंगिक में प्राप्त होने वाले लोक गीत, कथात्मक गीत एवम् लोक कथाओं में जहां भावना और कल्पना तत्व की उपलब्धि हैं वहां कहावतों एवम् पहेलियों में बुद्धि तत्व की प्रधानता विद्यमान है । मुहावरों में लक्षणा और अभिव्यंजना, चुटकुलों में मनोरंजकता तथा सूक्तियों में नीति तथा दर्शन का समावेश दृष्टिगोचर होता है ।

सांग परक गीतों में प्रेम तत्व की प्रधानता, गुरु भक्ति की प्राथमिकता जहां लक्षित हैं वहां इन पर सूफी प्रभाव भी है । इन्ही गीतों में अध्यात्मिक वाद का सार भी निहित हैं ।

आंगिक लोक साहित्य भौगोलिक, सामाजिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक धार्मिक आदि सभी रूपों में व्याप्त है जो इसके सबल पक्ष की झलकती प्रस्तुति करता है । और यहां उपलब्ध सामग्री इस तथ्य को प्रमाणित करती है ।

निसन्देह आंगिक लोक साहित्य की परिधि जीवन और संस्कृति के हर पहलू का संस्पर्श करती है ।

0 ---- -0- ----- -0